आकार कल्पना

आशीर्वाद

कलागुरू श्री असित कुमार हालदार

प्रस्तावना

कलागुरू श्री जगन्नाथ मुरलीधर अहिवासी

लेखक

रणवीर सक्सेना

अध्यक्ष चित्रकला विभाग

डी० ए० वी० कालिज

देहरादून

प्रकाशक

रेखा प्रकाशन कार्यालय

देहरादून

मूल्य १५.००

प्रकाशक
श्री राजीव लोचन
रेखा प्रकाशन कार्यालय
९ आनन्द स्वरूप क्वार्टर्स, देहरादून

प्रथम संस्करण जनवरी, सन् १९५८

द्वितीय सस्करण दिसम्बर, सन् १९६७

तृतीय संस्करण दिसम्बर, सन् १९७४

मुद्रक :
प्रभात प्रेस, मेरठ।

आशीर्वाद

अपने शिष्य 'श्री रणवीर सक्सेना' की आलेखन पुस्तक आकार-कल्पना का ललित-कला एवं कौशल के जिज्ञासुओ से परिचय करते हुए मुझे हर्ष है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि देश के कला साहित्य मे यह एक अमूल्य योग होगा। उत्तर प्रदेश की उच्चतर माध्यमिक एवं माध्यमिक कक्षाओ में चित्रकला एवं आलेखन की शिक्षा व्यवस्था होते हुए भी परम्परागत एवं मौलिक आकारो पर पुस्तको का अभाव है।

मुझे प्रसन्नता है कि लेखक ने अपनी उक्त पुस्तक में भारतीय परम्परागत कला का गूढ़ विवेचन किया है, तथा पश्चिमी पद्धति पर आधुनिकता लाने का प्रयास नहीं किया है। सौन्दर्य सज्जा के हेतु जीवित पदार्थो के आकार मे भी परिवर्तन किया जा सकता है किन्तु ललित कलाओं के सम्बन्ध मे अजन्ता एवं मुगल तथा राजपूत काल के कलाकारो ने यह सिद्ध कर दिखाया है कि सृष्टि की स्वाभाविक कृतियो को सम्मुख रखते हुए बिना किसी प्रकार का हेर-फेर किये भी आकारो की सुन्दर रचना की जा सकती है।

हमारे कलाकार प्रभावशाली आकारो की रचना करने मे सिद्धहस्त थे और उन्होन यह प्रमाणित कर दिखाया कि केवल कल्पना के सहारे साधारण रेखाओं और आकारो के आधार पर प्रभावशाली चित्र की रचना की जा सकती है।

अपनी संस्कृति के आधार पर 'कला' को तीन 'गुणो' के अन्तर्गत रखा जा सकता है।

प्राकृतिक सौन्दर्य का ध्यान रखते हुये, भौतिक एवं मानवीय विज्ञान की उन्नति को सम्मुख रखते हुये प्रकृति के साथ कलाकार का जब रागात्मक सम्बन्ध दृष्टिगोचर होता हो तो कला सत्व गुणमयी होगी। भौतिक विज्ञान का गूढ़ अध्ययन करने पर अभिव्यक्ति भावात्मक तो हो सकती है किन्तु स्वाभाविकता के प्रतिकूल नहीं।

वह कला जो सौन्दर्य की अभिव्यक्ति केवल रंजनार्थ एवं व्यावसायिक दृष्टि में करती हो रजोगुण प्रधान होती है। पोस्टर, व्यग्यात्मक चित्र और सपूर्ण सज्जा के हेतु की गई कला कृतियो का केवल व्यावसायिक मूल्य ही होता है। स्वाभाविकता एवं प्राकृतिक सौन्दर्य मे हेर-फेर करने से केवल इसी प्रकार की कला का जन्म होता है।

तामसी कला वह है जिसका जन्म बालक द्वारा निर्मित निरर्थक आकारो से होता है। आधुनिक मनोवैज्ञानिक कला, यथार्थवाद जिसके जन्मदाता यूरोप के पिकासो एवं मैंटेसी हैं, भी इसी के अन्तर्गत है।

श्री सक्सेना की "आकार कल्पना" में प्राकृतिक आकारों की संतुलित एवं सुन्दर अभिव्यंजना है। ऐसी अनुपम पुस्तक के लिए मैं अपने प्रिय छात्र को बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि अन्य प्रकाशकों एवं कला-साहित्य प्रेमियों के लिए यह पुस्तक पथ-प्रदर्शक बनकर चित्रकला एवं आलेखन को पाठ्य क्रम में स्थान देने वाले शिक्षा केन्द्रो के लिए भी माप-दण्ड का काम देगी।

असितकुमार हालदार

धन्यवाद प्रकाश

मैं आगरा विश्वविद्यालय के प्रति अपना विशेष आभार प्रकट करता हूँ जिसकी १५००) की उदार आर्थिक सहायता से ही इस पुस्तक का प्रकाशन सम्भव हो सका है। विश्व विद्यालय के वर्तमान उप-कुलपति श्री लेफ्टिनेन्ट कर्नल कालका प्रसाद भटनागर तथा संस्था के अन्य अधिकारियों के प्रति मैं विशेष रूप से कृतज्ञ, हूँ, जिन्होने अपनी इस उदारता से मुझे प्रोत्साहित किया है। आशा है, इन महानुभावों की स्नेहमयी छाया में मेरी कला भविष्य में अधिक फूले-फलेगी।

रणवीर सक्सेना

विषय सूची

१०१ रेखाकार आकार कल्पनाएँ और ४ रंगीन आकार कल्पनाएँ

आकार कल्पना

'प्रस्तावना'

मानव जीवन के मधुर मादक क्षणों की अनुभूति की वर्णमय विवृत्ति ही कला का कमनीय कलेवर धारण करती है। यद्यपि कलाकार युगानुकूल ही हृत्तंत्री के तारों को झंकृत करता है किन्तु वह शाश्वत झंकार अपने प्रसारित रूप में युगयुगान्तरो तक मानव की मनोमय जगती पर अखण्ड राज्य करती है। कलाकार के अन्तस्तल की यह पंचधा पुलकावलि विश्व-हृदय को रस निमज्जित कर युगीय प्रतारणाओ मे हित सम्पादन करती है।

यदि प्रभाव एवं प्रसाधनों की सूक्ष्मता के कारण साहित्य को शीर्ष स्थान मिला तो व्यापकता (स्थूल और सूक्ष्म दोनों रूपो में) की दृष्टि से चित्रकला को केन्द्र स्थान। कोई भी कलाकार हो, भावों को व्यक्त करने के पूर्व उनका एक चित्र मन पटल पर अवश्य चित्रित कर लेता है। चित्रकला में यही सूक्ष्म स्थूल बन कर "आकार कल्पना" संज्ञा से अभिहित होता है। इसी परिणति के सिद्धान्त इस पुस्तक, 'आकार कल्पना' के विषय है।

प्रस्तुत पुस्तक चित्रकला-साहित्य के क्षेत्र को श्री रणवीर सक्सेना जी की अनुपम देन है। यद्यपि इस विषय पर अभारतीय भाषाओं मे बहुत कुछ लिखा जा चुका है और लिखा जा रहा है, किन्तु भारतीय संस्कृति एवं चित्रकला (भारतीय) परम्परा से भिन्न होने के कारण भारतीय विद्यार्थी को उससे पूर्ण सन्तुष्टि नहीं होती। इसके अतिरिक्त भारत में चित्रकला का प्रत्येक विद्यार्थी उन भाषाओं से अभिज्ञ न होने के कारण उन पुस्तकों से लाभ नहीं उठा पाता। अतः हिन्दी में इस विषय का विवेचन करने वाली पुस्तक का अभाव प्रतीत होता था जो इस पुस्तक ने पूरा कर दिया।

चित्रकला एक ऐसा विषय है जिसमें प्रयोग को सिद्धान्त की अपेक्षा अधिक महत्व दिया जाता है। किन्तु अध्यापन कार्य में हर समय प्रयोग का अवसर नहीं मिलता और सिद्धान्तों का मौखिक विवेचन आवश्यक हो जाता है। अतएव अध्यापकों के कार्य को सुगम बनाने में भी यह पुस्तक अत्यन्त उपादेय सिद्ध होगी।

विषय की दृष्टि से इस पुस्तक में 'आकार कल्पना के सभी अङ्ग-उपांगों का पूर्ण विवेचन हुआ है। लेखक की सर्वाधिक सफलता इस बात में है कि उसने इन सभी को एक सच्चे भारतीय के दृष्टिकोण से देखा है और उदाहरणों के लिए भारतीय वस्तुओ को लिया है। अपने कथन की पुष्टि के लिए मै पाठकों का ध्यान 'प्रकृति स्वयं आकार बनाती है' और 'नवीन आकारों का मूलाधार' जैसे विषयों की ओर आकर्षित करता हूँ।

'आकार कल्पना' के अन्तर्गत उसके 'कारण', 'रूप' और रङ्ग-योजना' का महत्व अधिक है। प्रथम दो के सम्बन्ध में लेखक के मौलिक विचार विषय को अत्यन्त स्पष्ट कर देते हैं। साधारणतया किसी फलक पर रेखाओं से बने और रंगो से पूर्ण चित्र ही सुन्दर और उद्भावना शक्ति के परिचायक समझे जाते है और 'आकार कल्पना' कहलाते हैं। यहाँ लेखक के अनुसार उपयोगिता भी सौन्दर्य का प्रकार बन कर 'आकार कल्पना' के क्षेत्र को अति

विस्तृत बना देती है। इसी प्रकार 'आकार कल्पना के रूप' के अन्तर्गत 'प्राकृतिक रूप' अब तक की रूढ़िगत संकुचित धारणा का विरोध करता है। यहीं यदि हम 'ओल ओवर पैटर्न' पर ध्यान दें तो मेरा मत पूर्णरूपेण पुष्ट हो जाता है।

अन्त के चार लेख जो देश के भिन्न-भिन्न क्षेत्रो में प्रचलित कपडे पर अङ्कित आकार कल्पनाओ से सम्बन्धित है, विद्यार्थियों के ज्ञान पुष्ट करने में विशेष सहायक होगे। मै समझता हूँ कि इस प्रकार से आकार कल्पना पर वैयक्तिक और परम्परा सम्मत विचारों को प्रकट करने वाली यह पहली पुस्तक है।

धन रहीम जलपंक को लघु जिय पियत अघाय।
उदधि बड़ाई कौन है (सौ) जगत पियासों जाय।

अनेक बड़े ग्रन्थो की अपेक्षा (जो हमको तृप्त न कर सकें) उत्तम हो यदि यह छोटा सा ग्रन्थ कला-पिपासुओ की प्यास बुझाने में सहायक हो।

२-११-१९५५

आशीर्वाद

जगन्नाथ अहिवासी
अध्यक्ष ललित कला विभाग
सर जे० जे० स्कूल ऑफ आर्ट्स, बम्बई

अपनी बात

'आकार कल्पना' मेरे जीवन के कुछ क्षणो का स्वरूप उपस्थित करती है। इसे पाठको के, कला-प्रेमियो के कर कमलो मे देते हुये आज मुझे जो हर्ष हो रहा है उसका प्रकाशन कुछ शब्दो में करना असम्भव है। कला के आज के युग मे जीवन का अन्तर निगूढ रूप आज के विचारक के समक्ष यथार्थ रूप से स्पष्ट हो रहा है मानव भाव जगत् की अन्तस्थली में मार्मिक विचारशील मस्तिष्क स्वत. प्रविष्ट हो जायेंगे और वे आकार कल्पना के कलेवर मे ग्रन्थकार का उद्देश्य पालेगे।

'आकार कल्पना' के सम्पूर्ण लोक जीवन और परमार्थ जीवन में अपना वैशिष्ट्य है, इसी से सृष्टि कर्त्ता, मानव, धर्म, सभ्यता, सस्कृति के जीवन, विकास अभ्युदय और युगान्तरो की चेतना का इतिहास स्पष्ट होता है। व्यक्तिगत जीवन से लेकर विराट जीवन तक का विकास, ह्रास का मुखरण हम जीवन से सम्बन्धित सभी आकारों मे पाते हैं। पुराकाल से लेकर अब तक सभ्य समाज उत्कृष्ट सस्कृतियो मे इसका निगूढ तथ्य युगान्तरो की परिस्थितियो के अनुसार हमारे समक्ष सिद्धान्तो, इतिहासो कथाओ, एवं प्रत्यक्ष दर्शनो में उपस्थित करता रहा है। कलाकार की सम्पूर्ण कलात्मक भावनाओ का केन्द्रीकरण एक छोटे से पदार्थ और थोडे से स्थान पर किसी विशेष प्रयोजन सिद्धि के लिए सम्पूर्ण परिश्रम और धैर्य सहित जब होता है तभी अमूल्य आकार कल्पना होती है। इसी आकार कल्पना से यह स्पष्ट होता है कि किसी सभ्यता, संस्कृति, देश आदि के निर्माण में आकार कर्त्ताओ का कितना बड़ा हाथ है। भारतीय आकार कल्पना को देख कर उससे हमे भारत के उज्ज्वल भूत काल का ज्ञान; वर्तमान में उसी का परिवर्तित परन्तु प्रभावशाली स्वरूप एव भावी युग के लिए उसकी उन्नतिशीलता का आभास हो जाता है। अजन्ता, साँची, अवन्ती, मथुरा, अमरावती, भरहुत, सारनाथ के आकार हमारी कला के गौरव-आलोक-स्तम्भ हैं। प्रस्तुत पुस्तक में यद्यपि थोड़ा सा प्रकाश हम इस पर दे गये हैं परन्तु प्रधानतः इस पुस्तक को सुकुमार बुद्धि के नव शिक्षा योग्य कलाकारो के लिए हमने निर्मित किया ताकि आकार कल्पना के गम्भीर सागर में सरलता से अपना पथ प्रशस्त कर सकें।

'आकार कल्पना' से हमे प्रत्येक देश-निवासी उनकी रुचि अभिरुचि रहन-सहन के ढङ्ग, शील स्वभाव, जीवन की परिस्थितियाँ, राजनीतिक उलटफेर आदि अवगत होते हैं। किसी विशेष युग मे

पाये जाने वाले आकारो से हमे उस युग का स्वरूप दर्शन हो जाता है। प्राचीन रूढि युग के बर्तनो, वस्त्रो तथा उन पर पशुओ के बने आकार देख हमे तत्कालीन जन जीवन और उसकी रुचि का ज्ञान होता है । आकार कल्पना शाश्वत है। जब तक मानव समाज की मार्मिक भावानुभूतियाँ रहेगी तब तक यह भी रहेगी, सौन्दर्य की उपासना जब तक मानव करता रहेगा और उसे जब तक जीवन में साकार बनाने का प्रयास करता रहेगा तब तक आकार कल्पना अमर रहेगी। आकार कल्पना का रूप चाहे पूर्व पच्छिम में कही हो, चाहे स्वर्ग पर हो, वस्त्रो पर, दिवारो पर, गहनो पर, पृथ्वी पर कही भी हो वही वह निसर्ग सौन्दर्य को अनुभूति से उत्पन्न आनन्द प्रदान करेगा । यह भी निर्विवाद है कि आकार कल्पना का प्रादुर्भाव पूर्वीय देशो मे ही सर्व प्रथम हुआ, विशेषकर भारत मे । सभ्य ससार मे वह यही से गई। मध्ययुग में आकार कल्पना का जीवन व्यवस्थिति मे—उसकी समस्याओ के सुलझाने मे बडा भारी महत्व रहा है। चीन जापान मे इसी आकार कल्पना ने कसीदे का अनुपम रूप लिया । विभिन्न भूखण्डो ने इस कला को अपने जीवन की समस्याओ और सुविधाओ के अनुसार अपनाया । ईरान के कालीन के आकार, काश्मीर के शालों के आकार, चीन, अजन्ता की छतो के आकार गुफाऍं सभी अपने मे एक विशिष्ट भावानन्द को निहित रखती हैं।

पूर्वी देशों से ही आकार कल्पना पश्चिमी भूखण्डों की ओर गई । आज के योरोपियन आकार कल्पनाकार हमारी प्राचीन आकार कल्पना को ही नवीन रूप में उपस्थित कर रहे हैं। कमल, घट, स्तम्भ, फूल, केला आदि पवित्र वस्तुओ के आकार हमारे यहाँ बहुत प्राचीन काल से ही प्रसाधना में आते रहे जिन्हे आज पश्चिम के कलाकार अपनी मौलिक कलाकृति के रूप में उपस्थिति करते दीखते हैं।

आकार कल्पना हमारे आत्म-प्रकाशन का भावमय चित्रण है। जिसमे निर्माण के तत्व हैं, जो सामान्य मानव भाव राज्य मे एक से व्यापक हैं। नृत्य, सगीत, कविता, वास्तुकला, मूर्तिकला सभी में यह एक जान सी बन गई। यह अमीर गरीब दोनों जन समुदाय को एक सा अलौकिक आनन्द देने वाली है इसी से वातावरण में आकर्षण, मादकता, नवीनता उपस्थित होती है, इसके अभाव में जीवन शुष्क, समाज जड़ और मानव भावनाएँ सुप्त दीखती हैं। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हमें इसकी आवश्यकता है। मन्दिर, घर (गोबर के घर) विशाल भवन सभी में आकार कल्पना का सामान्य अथवा विराट रूप पाया जाता है।

मुझे इस छोटी सी पुस्तक को इस रूप मे उपस्थित करने में अपने गुरुजन, प्रियजन, छात्र तथा सहधर्मिणी से जो समय २ पर अमूल्य सहायताएँ प्राप्त हुई हैं उनका यद्यपि उल्लेख करना उनके सभी के प्रेम महत्व को हल्का करना होगा परन्तु भाव इसमें मेरा मौन रहा तो भी मेरा कर्त्तव्य पूरा न समझा जायगा।

अपनी कला साधना मे मुझे जिन गुरुजनो का आशीर्वाद प्राप्त हुआ, जिनके साधक जीवन से मुझे अनन्त प्रेरणाएँ मिली उनका मैं हृदय से आभारी हूँ। उनमे सर्वश्री पूज्यपाद राजेश्वर घोष का प्रारम्भिक कला दीक्षण, श्री पूज्य असितकुमार हालदार, श्री पूज्य नन्दलाल बसु, श्री पूज्य अवनिसेन, आदि पूज्य जनों के कलात्मक संस्कार मेरे जीवन की निधि बने।

परमादरणीय जे० एम० अहिवासी महोदय की कला साधना से मेरे जीवन की कला साधना का प्रयोगात्मक प्रारम्भ होता है। इन भारतीय सास्कृतिक कला के अमर साधक का दीक्षान्त प्रसाद मुझे आज भी शक्तिसम्पन्न बनाये है। गुरुदेव ने भूमिका लिखकर और भी उपकृत किया। अपने बहुमूल्य सुझाव दिये। प्रत्येक प्रकार से पुस्तक को उपयोगी बनवाया।

मैं अपने पूज्य अग्रज डा० रामनारायण सक्सेना, डाइरेक्टर इस्टीट्यूट आफ सोशल साइस का जीवन ऋणी हूँ। उन्ही की कृपा दृष्टि से आज इस योग्य बन पाया कि साधना मे निर्विघ्न चल सकू। मेरे जीवन के कुछ क्षणो मे उनकी ममता का वरदहस्त उस समय मेरे शिर पर रहता जबकि मेरी तूलिका अपनी साधना में रत रहती और वे वात्सल्य भाव से चटाई पर मेरे पास आ बैठ मेरी व्यस्त साधना देखते। इतने बडे व्यक्तित्व के लिए उस साधना मे आदर की सुविधाएँ न होती थी और मैं अपने को सौभाग्यशाली समझता हूँ जब कि वे आज भी मेरी ममता के अधिकार को मेरे लिए सुरक्षित किये हुये हैं।

मैं अपने मान्य प्रिंसिपल महोदय श्री ए. एस. सिन्हा को किन शब्दो में धन्यवाद दूँ जिन्होने हमारी सभी प्रकार की सहायता की। उनकी कला सस्कृति विकास में रहने वाली धारणा के आधार पर हमें अपनी साधना में सदा बल, साहस और प्रेरणाएँ मिली।

मैं अपने आदरास्पद प्रिय बन्धु श्री पुरुषोत्तम डोभाल का हृदय से अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होने आकार कल्पना की भाषा को सुसस्कृत बनाने मे मेरा पूरा हाथ बटाया। इनके बिना इतनी सुसस्कृत भाषा होना असम्भव था।

श्री रायकृष्ण दास जी, श्री धूपेश्वर कर जी, श्री ऐंडेकोस्टा, डा० मोती चन्द्र जी, डा० सतीश चन्द्र काला, डा० सीतावर सरन, श्री दण्डामती मठ, श्री शिवराम मूर्ति, श्री कृष्ण दत्त वाजपेयी, श्रीमती चन्द्रावती लखनपाल, प्रो० सत्यव्रत, श्री भाई अवध बिहारी जौहरी, श्री जानकी शरण श्रीवास्तव आदि वयोवृद्धो का भी आभारी हूँ जिन्होंने प्रस्तुत पुस्तक मे मुद्रण से पूर्व अपने सुझाव और प्रोत्साहन दिये। यह प्रयास तभी इस रूप मे आ पाया था जब उपर्युक्त सज्जनो का प्रोत्साहन मिला।

मेरे प्रिय विद्यार्थी श्री कृष्ण लाल शर्मा और रघुवीर पवार ने प्रस्तुत पुस्तक को सुन्दर बनाने मे मेरी पूरी सहायता की। उन्हे आशीर्वाद के अतिरिक्त और दे ही क्या सकता हूँ।

विशेषकर मेरी सहधर्मिणी आयुष्मती सरला रमण मेरी कला साधना की स्फूर्ति बन सदा मुझे आगे बढाने मे शक्ति सम्पन्न बनाती रही है और प्रस्तुत पुस्तक की मुद्रण प्रतिलिपि एव पुस्तक के प्रत्येक अग को उपयोगी व सुन्दर उन्होने ही बनाया।

मै अपने परम पूजनीय ताऊजी श्रीमान् अयोध्या प्रसाद जी का किन शब्दो मे आभार प्रदर्शित करूँ जिनके आशीर्वाद तथा दया दृष्टि के बिना मेरा यह कार्य पूर्ण होना असम्भव था।

अन्त में मैं उन सभी ज्ञात अज्ञात सहयोगियो का भी कृतज्ञ हूँ जिनसे थोडी भी सहायता इस पुस्तक में पाई हो। पुस्तक की त्रुटियाँ मेरी हैं और इसका सौन्दर्य कला प्रिय सहृदयो का है।

३–१–१९५७
रेखानिकुञ्ज, देहरादून

रणवीर सक्सेना

दो शब्द

कल्पना को आकार देना कलाकार की साधना का चरम लक्ष्य होता है। कवि अपनी कल्पना को शब्द और अर्थ के द्वारा तथा चित्रकार अपनी कल्पना को रेखा, रग एव तूलिका के द्वारा साकार बनाने की चेष्टा करता है। अन्तर्जगत् में जिसे कल्पना कहा गया है, बाह्य-जगत् मे उसी को आकार कहा जाता है। कल्पना का परिणाम आकार है। यथा दूध का परिणाम दही है। यह जगत् भी जगन्नियन्ता की कल्पना का ही परिणाम अथवा मूर्त रूप है। "सर्ग इच्छा का है परिणाम"। आकार की प्राञ्जलता, प्रभावोत्पादकता तथा सास्कृतिक अनुरूपता के लिए तदनुकूल कल्पना की नितान्त आवश्यकता होती है। कल्पना मे इन गुणो का आधान साधना के द्वारा होता है। कलाकार भी एक साधना-रत साधक होता है। सच्चा कलाकार इस साधना-मन्दिर मे इसी लक्ष्य को लेकर प्रविष्ट होता है। उसे सबसे बड़ा लाभ होता है :—'आत्म-परितोष'।

"आकार कल्पना" के लेखक श्री रणवीर सक्सेना साधना-मन्दिर के ऐसे ही साधक हैं। इनकी कल्पना में भारतीय संस्कृति का निगूढ रहस्य विद्यमान है। अभिव्यक्ति के मूल तत्त्व को आपने शाश्वत स्वीकार किया है। देश-कालानुसार अभिव्यक्ति के साधनो तथा अभिव्यक्त आकारो के सौन्दर्य के मान-दण्ड मे परिवर्तन को भी लेखक ने आवश्यक स्वीकार किया है। इनका घर वस्तुत. एक साधना मन्दिर है। इनकी धर्मपत्नी श्रीमती सरला रमन मे चित्रकला तथा काव्य कला का अनुपम सम्मिश्रण विद्यमान है। कोई भी आगन्तुक किसी समय भी इस दम्पति को कला की साधना में रत देख सकता है।

"आकार कल्पना" का यह द्वितीय सस्करण आवश्यक संशोधन के साथ पाठको के हाथ में जा रहा है। भारतवर्ष मे साधना मूलक कला के प्रति नूतन जन-जगृति का यह प्रत्यक्ष प्रमाण है। बहिर्मुखी विकास के साथ आत्मोन्मुखी समुन्नति का यह शुभ लक्षण है। देश के अनेक विश्वविद्यालयो ने अपने पाठ्य-क्रम में इस ग्रन्थ को स्थान देकर इसकी महती उपयोगिता को स्वीकार को स्वीकार किया है। हिन्दी विश्वविद्यालय ने इस ग्रन्थ को इस विषय का सर्वोत्तम ग्रन्थ घोषित करते हुए ५०० रु० के पुरस्कार से पुरस्कृत किया है।

अपने इन दो शब्दो को इस द्वितीय सस्करण के साथ सम्बद्ध करता हुआ मैं आशा करता हूँ कि अन्य विश्वविद्यालय, सस्थाए तथा छात्र ग्रन्थ एव ग्रन्थकार के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन करेंगे तथा श्री रणवीर सक्सेना "अहर्निश सेवामहे" का सिद्धान्त अपना कर अपनी अग्रिम रचनाओ के द्वारा कला-जगत् को उपकृत करेंगे। प्रभु इस साधना के लिए इन्हे शक्ति तथा साधन प्रदान करें।

प्रो० ठक्कन मिश्र
एम० ए० (हिन्दी, संस्कृत)
व्याकरणाचार्य, साहित्यरत्न
सस्कृत विभागाध्यक्ष
एस० एम० जे० एन० कालेज
हरिद्वार



कला का सर्वतोमुखी उत्थान प्रो० रणवीर सक्सेना का जीवन-लक्ष्य है और इसी लक्ष्य की पूर्ति के हेतु उन्होने भावुक कलाकार, प्रबुद्ध लेखक एव सहृदय शिक्षक, तीनो ही रूपो मे कला की आराधना मे श्रद्धा-सुमन अर्पित किये है। कलाकार के रूप मे आपने अपना कार्य लखनऊ व बम्बई कला-महाविद्यालयो के विद्यार्थी के रूप मे प्रारम्भ किया और कला-सबधी जिज्ञासा उन्हे शाति-निकेतन भी खीच ले गई। देश एव विदेश मे आपकी अनेक कला-प्रदर्शनियाँ हुई और आपने अनेक पुरस्कार एव पदक प्राप्त किए। जीविका के हेतु कला-शिक्षक का कार्य आरम्भ किया और सम्प्रति डी० ए० वी० कालेज, देहरादून के चित्रकला-विभाग के अध्यक्ष है। किंतु इस रूप मे भी जीविका उनका साधन मात्र रही, साध्य नही। साध्य तो था विद्यार्थियो की कला-क्षमता को जाग्रत करना और उन्हे उचित दिशा प्रदान करना तथा उनके ही माध्यम से समाज मे कला का प्रचार एव प्रसार। कला शिक्षण के प्रसग मे काव्य के विविध पक्षो पर कुछ कहने-सुनने की आवश्यकता प्रतीत हुई, जिसने इनके लेखक रूप को विकसित किया। इसी रूप में आपका यह पुस्तकाकार समर्थ प्रयास आपके सम्मुख प्रस्तुत है।

—**प्रकाशक**



छत की आकार कल्पना

आकार कल्पना

सौन्दर्य क्या है ?

सम्पूर्ण विश्व का विराट् रूप देखकर विचार और भावो की जो एक तीव्रता हमारे भीतर होती है उसमे एक ही केन्द्र निश्चित रहता है, और वह है सौन्दर्य। सौन्दर्य सम्पूर्ण जड़-चेतन जगत् में स्थूल से स्थूल और सूक्ष्म से सूक्ष्म रूप मे विद्यमान है। इस सौन्दर्य का अनुभव सृष्टि का प्रत्येक प्राणी करता है, और सौन्दर्य की अनुभूति मे उसका साथ देने वाली हैं उसकी इन्द्रियाँ हाथ, पैर, नाक, आँख, कान, जिह्वा आदि। विभिन्न इन्द्रियों की सहायता से चेतन जगत्-प्राणीमात्र-सौन्दर्य का उपभोग करता है। सौन्दर्य की अनुभूति के लिए देशकाल-परिस्थितियो मे हमारी ये इन्द्रियाँ जागृत रहती हैं, और अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुसार अनुभूति पाती हैं। सम्पूर्ण विश्व का सचालन इसी सौन्दर्य की प्रेरणा से होता है। हमारे विभिन्न अङ्ग और उनकी शक्ति का स्वरूप बनने वाली इन्द्रियाँ एक मात्र सौन्दर्य का ही साक्षात्कार करने को नित्य उद्यत रहती हैं। यही सौन्दर्य विभिन्न समयो मे विभिन्न स्वरूप धारण करता है; विभिन्न भावनाओ का प्रादुर्भाव भी चेतन प्राणियो मे इसी से होता है। प्रेम, सत्य, आनन्द, रस, प्रकाश, हर्ष, दीप्ति नाम इसी सौन्दर्य के है।

अब प्रश्न उठता है कि सौन्दर्य है क्या ? इसका उत्तर ससार के विभिन्न विचारकों ने अपने-अपने माध्यम के अनुसार और अनुभव के आधार पर दिया है। सौन्दर्य वह चेतना-प्रद अस्तित्व है, जो किसी स्थूल विनाशी तत्व में ही केन्द्रित नही रहता अपितु नित्य प्रगतिशील, प्रभावशाली स्वरूप में कभी व्यक्त और कभी अव्यक्त रह विश्व को सचालित करता रहता है। बस सौन्दर्य के लक्षण पर यदि सूक्ष्म रूप से विचार किया जाय तो ज्ञात होता है कि वह वास्तव में चेतनाप्रद पदार्थ है; वह नित्य प्रगतिशील रहता है, देश काल परिस्थितियो में मनुष्य-समाज के साथ-साथ उसके स्वरूप मे भी परिवर्तन होता है। वह चिर और अविनाशी शक्ति से नित्य प्रतिष्ठित है। सौन्दर्य कभी व्यक्त (स्थूल रूप मे) रहता है कभी अव्यक्त (सूक्ष्म रूप में) । इस व्यक्त और अव्यक्त का भेद मानव शक्तियाँ करती है; अन्यथा सौन्दर्य तो नित्य अखण्ड चेतनामय रूप है। सस्कृत के महाकवि माघ ने सौन्दर्य का लक्षण इसीलिए 'क्षणे-क्षणे यन्नवतामुपैति तदैव रूपं रमणीयताया' किया है; अर्थात्-प्रत्येक क्षण जिसमे नवीनतापूर्ण आकर्षण हो, प्रत्येक हल जो हमे विलक्षण और नूतन ही लगे वही सौन्दर्य है। एक पाश्चात्य विचारक के शब्दो मे "जिससे विलक्षणता हो उसे सौन्दर्य कहते हैं।" वस्तुत सौन्दर्य विलक्षण ही होता है। दूसरे शब्दो मे सौन्दर्य वह तत्व है जो हमे अपनी ओर आकृष्ट कर हमारे कष्ट, श्रान्ति, मलिनता, चिन्ता, क्षोभ के क्षणो में विश्रान्ति देता है; हम उसमे इतने खो जाते हैं कि हम अपना व्यक्तिगत सुख-दुःख सब भूल जाते हैं। बस सौन्दर्य ही कलाकार की प्रेरणाओ को जागृत कर उसे कला साधना मे प्रवृत्त करता है।

यदि हम सूक्ष्मतया विचार करें तो सम्पूर्ण जगत सौन्दर्य से प्रादुर्भूत हुआ ज्ञात होगा। चराचर सृष्टि में प्रत्येक पदार्थ में सौन्दर्य का विलक्षण वैभव बिखरा दिखाई देता है। सृष्टि की कोई भी वस्तु ऐसी नहीं जिसमें सौन्दर्य न हो। विचित्र सृष्टि के नाना प्राणी नित्य इसी सौन्दर्य की ओर उन्मुख रहे है। यह सौन्दर्य उनकी रुचि, भावना और वृत्तियो के अनुसार अनन्त रूपों में सम्पूर्ण जड चेतन के भीतर और बाहर है। इसी को प्रत्येक प्राणी अपने-अपने प्रयत्न द्वारा पाना चाहता है। अनन्तात्मा ने जड चेतन पदार्थ सौन्दर्य से अनुप्राणित करके उत्पन्न किए है।

लता, वनस्पति, सूर्य, चन्द्र, तारे, मनुष्य, पशु, पक्षी, रङ्ग, सभी मे विश्वात्मा का सौन्दर्य निहित है। कलाकार इसी सौन्दर्य की प्रतिष्ठा अपनी कला मे करता है। वह स्थूल सौन्दर्य को सूक्ष्म और सूक्ष्म सोन्दर्य को स्थूल कर सकता है, अव्यक्त सौन्दर्य को व्यक्त और व्यक्त को अव्यक्त करता है। अव्यक्त सौन्दर्य का व्यक्तीकरण ही कला है। सूक्ष्म सौन्दर्य स्थूल रूप मे कला ही ला खडा करती है। प्रत्येक वस्तु के दो रूप है, एक भावात्मक और दूसरा प्रत्यक्ष-मूर्त्त रूप। किसी भी वस्तु का भावात्मक रूप हमारे भीतर तब तक रहता हैं जब तक उस वस्तु को कोई बाहरी आकार हम नही दे देते। कला के जगत् मे दोनो का महत्व है। कलाकार पहले किसी वस्तु को अपनी इन्द्रियो (आख, कान, नाक, जीभ, इत्यादि) द्वारा प्रत्यक्ष करता है, फिर उस वस्तु के रूप गुण तथा उपयोग के अनुसार उसे स्थूल आकार देता है। जब तक कोई वस्तु भाव रूप मे कलाकार के भीतर रहती है तब तक वह हमारे नेत्र, कान, मन अथवा हृदय का विषय नही बन सकती, जब कलाकार किसी वस्तु को अपने कौशल द्वारा मूर्त रूप दे देता है तब वह वस्तु हमारे समक्ष उपस्थित होती है। अमूर्त को मूर्त दे देना ही कला का कार्य है। अमूर्त वस्तु भी तभी मूर्त रूप धारण करती है जब उसमे तीव्र प्रेरणा-दायिनी शक्ति हो। कलाकार किसी भी तीव्र प्रेरणामयी वस्तु से प्रेरित होकर अपनी साधना मे, अपनी अनुभूति को दूसरो तक पहुँचाने के लिए प्रेरित होता है। दूसरे शब्दो मे हम यो कह सकते है कि कला हमारे भीतर के सौन्दर्य को जो भाव-रूप मे अव्यक्त रहता है, अपने द्वारा स्थूल रूप मे प्रकट करा देती है।

'अभिव्यक्ति और सौन्दर्य'

सौन्दर्य जहाँ भी है उसमे अभिव्यक्ति (Expression) स्वत: आ जाती है, सौन्दर्य का आलोक इतना तीव्र होता है कि वह छिपाया नही जा सकता। अन्धेरे मे रखा हीरा अपने आलोक से गोचर हो जाता है। वस्त्र मे लिपटी कस्तूरी अपनी सुगन्धि को बाहर फेंक ही देती है। पवित्र भावो वाला हृदय अपने चेहरे पर एक पावन आकर्षण बता ही देता है। स्वर्ण की चमक, चाँदी की सफेदी, बादलो का घिरना, नदी की बाढ़, सूर्योदय इत्यादि सभी अपने-अपने भीतर छिपे सौन्दर्य को स्पष्ट कर देते हैं। विश्व के प्रत्येक पदार्थ के भीतर गुप्त या सुप्त सौन्दर्य को कलाकार ही अभिव्यक्त कर देता है। जिस-जिस भाव-स्थिति का कलाकार होगा उसी-उसी भावस्थिति की कला को वह जन्म देगा। जो कलाकार ताज महल जैसे भव्य भवन का निर्माण करेगा वह भी सौन्दर्य भावना को ही मूर्त रूप देगा। छेनी हथौड़ी से किसी भद्दे पत्थर को मानव या किसी भी रूप मे परिणित करना, उसे आकर्षक रूप मे हमारे समक्ष उपस्थित कर देना भी कला का सौन्दर्य विधान है। इसी प्रकार भावो की सुन्दर अनुभूति किसी यन्त्र द्वारा स्वर और लय से जहाँ होती है उसमे भी सौन्दर्य ही प्रधान होता है। सूक्तियों से सुन्दर मधुर शब्दो से भावो की अभिव्यक्ति कर उससे किसी के हृदय को आनन्दित कर देना भी कला का सौन्दर्य विधान है। इन सभी कलाओ मे अमूर्त सौन्दर्य ही मूर्तिमान किया जाता है। सौन्दर्य को मूर्तिमान करना ही कला का कार्य है और यही अभिव्यक्ति कहलाती है। सरल शब्दो मे हम यो कह सकते हैं कि जब कोई भी व्यक्ति किसी वस्तु के गुण से प्राप्त किए हुए आनन्द को किसी माध्यम से प्रकट करता है तो ठीक उसी प्रकार का आनन्द वह दूसरों के भीतर भी उत्पन्न कर देता है। यही अभिव्यक्ति है, और इसी आनन्द की अभिव्यक्ति को 'कला' कहा जा सकता है। यहाँ 'आनन्द" और "सौन्दर्य" दोनो को हम एक दूसरे का पर्याय ले रहे हैं। सौन्दर्य जब तक किसी गतिमती प्रेरणा का रूप धारण न कर केवल अपने मे ही अस्पष्ट रहता है तब तक वह सौन्दर्य है, जब वह किसी तीव्र-प्रेरणा का रूप बन किसी के मन मे और आत्मा मे जागृत हो उसे अपनी सत्ता, अपने आस-पास का वातावरण भुला देता है तब वही आनन्द कहलाता है। कला में दोनो समान रूप से प्रतिष्ठित रहते हैं।

कला के नाना रूप और चित्रकला

ऊपर हम स्पष्ट कर आये हैं कि कला एक सौन्दर्य-आनन्द की अनुभूति है। वह समय, आधार और

परिस्थिति के अनुसार अनेक रूपो मे हमारे समक्ष आती है। विचारको ने उसके वास्तु, मूर्ति, सगीत, काव्य और चित्र इतने स्वरूप बताए हैं। वास्तु कला मे भवन-निर्माण का कार्य आता है। इसमें किसी भीतरी भाव को ही भवन (मूर्तिमान) के रूप मे उपस्थित किया जाता है। मूर्ति मे भी अव्यक्त सौन्दर्य किसी मनुष्य या पशु पक्षी का रूप लेकर प्रकट होता है। इसी प्रकार सगीत मे नाद-स्वर-लय द्वारा अमूर्त (अप्रत्यक्ष) सौन्दर्य को प्रत्यक्ष किया जाता है। वास्तु और मूर्ति सौन्दर्य को हमारी आँखें ग्रहण करती हैं। बुद्धि, हृदय पर उनका अपेक्षाकृत कम प्रभाव पडता है, पडता भी है तो आँख की प्रधानता उसमे पहले है। सगीत कला से हमारी श्रोत्रेन्द्रिय का सम्बन्ध है। कानो द्वारा नाद-लय-स्वर को प्राप्त कर हम हृदय मे उसे पहुँचाकर आनन्द पाते हैं। काव्य कला का सम्बन्ध हमारी सभी इन्द्रियो से है परन्तु प्रधानता उसमे हृदय-बुद्धि-आत्मा की है। आत्मा मे अलौकिक आनन्द की जागृति करना ही विशेष रूप से काव्य कला का कार्य है। इन सबसे यह स्पष्ट हो जाता है कि अमूर्त या गुप्त-सुप्त सौन्दर्य स्पष्ट करने की प्रवृत्ति कला है। प्रत्येक कला मे बिम्बग्रहण अथवा सूक्ष्म आनन्द को स्थूल रूप मे प्रत्यक्ष कराने का प्रयास रहता है। चित्रकला मे रगो रेखाओ द्वारा वह सम्पन्न होता है। चित्रकला का एक अपना व्यापक सिद्धान्त है अमूर्त को मूर्त करना। वास्तुकार सर्व-प्रथम चित्रकला की सहायता से किसी भवन विशेष का स्वरूप निश्चित करता है। किसी भी मकान को बनाने से पूर्व उसका मानचित्र बनता है, तब वास्तुकार उसके आधार पर अपने कार्य में जुटता है। मूर्तिकार के समक्ष भी उसकी कल्पना मे पहले किसी वस्तु का रूप रग, वर्ण, रेखाएँ लम्बाई, चौडाई आती हैं तभी वह मूर्ति का निर्माण कर सकता है। इसी प्रकार सगीतकार पहले किसी राग की स्वर लिपि का चित्रण करता है और बाद मे उसे वाद्य पर घटित करता है। काव्य लेखक अक्षरो की रूप रेखा बनाने पर ही अपनी साधना मे प्रवृत्त हो पाता है। तात्पर्य यह कि चित्रकला का क्षेत्र बहुत व्यापक है। सभी कलाओ में उसकी महत्ता एवं सत्ता प्रतिष्ठित है। सृष्टि के प्रारम्भ में चित्रकला ही विश्वात्मा की कल्पना मे रही होगी। चित्रकला में आकार कल्पना प्रधान है।

आकार कल्पना और चित्र

चित्रकला में अमूर्त भावो को मूर्त रूप देने का नाम आकार कल्पना है। यह आकार कल्पना इतने बड़े विश्व में दो प्रकार की है। प्रकृति द्वारा बनी आकार कल्पना तथा मनुष्य द्वारा बनी आकार कल्पना। कुछ आकार प्राकृतिक प्रेरणाओं से बने हैं, कुछ मनुष्यों द्वारा।

प्रकृति स्वयं आकार बनाती है

प्रत्येक वस्तु प्राकृतिक प्रेरणाओ से अपने भीतरी-सघर्ष को आकार देती है। अपनी सामर्थ्य और परिस्थिति के अनुसार प्रत्येक पदार्थ का आकार दूसरे पदार्थों के सघर्ष मे आकर सुन्दर बन जाता है। पहाड़ो से नदियो मे बहते हुए भद्दे पत्थर कितने गोल चिकने आकार के बन जाते हैं। बड़ी-बडी शिलाएँ लोगो के रोज बैठने से चिकनी पड़ जाती हैं। तात्पर्य यह है कि प्रकृति स्वत. आकार बनाती है और कभी-कभी मनुष्य प्राकृतिक आकारों में भी परिवर्तन कर अपनी रुचि के अनुकूल आकार बनाता है। प्रत्येक आकार में कुछ न कुछ अर्थ निहित रहता है। भूत, भविष्य, वर्तमान मे घटित होने वाली घटनाएँ इन्हीं आकारों से कभी-कभी स्पष्ट हो जाती हैं।

आकार में एक निश्चित पद्धति रहती है, कोई भी वस्तु अपनी देश-काल परिस्थितियों के अनुसार एक निश्चित आकार पाती है। यदि उसका नियमित आकार है तब वह सुन्दर लगेगी और सब उसे अपनाने की इच्छा रखेंगे यदि उसमें नियमित और स्वाभाविकता नहीं रहती तो वह भद्दी और कुरूप मानी जायगी। उसमें एक निश्चित प्रबन्धात्मकता होनी आवश्यक है। यदि कोई आदमी बौना हो तो हमें बहुत से लम्बे आदमियों में वह अस्वाभाविक लगेगा। यदि कोई स्त्री पुरुषों की वेश-भूषा धारण करेगी तो हमें उसका आकार अस्वाभाविक लगेगा। तात्पर्य यह है

कि निश्चित स्वाभाविक स्वरूप मे जब तक कोई वस्तु है वह हमें ठीक लगेगी, इसके विपरीत भद्दी लगेगी। आकार कल्पना मे भी यही बात है। सम्पूर्ण सृष्टि सृष्टिकर्ता ने एक निश्चित आकार मे बनाई है। हमारे अङ्गप्रत्यग अपने-अपने स्थान पर ठीक बने है। इनकी उपयुक्तता तब मालूम पड़ती है जब हमे इन अङ्गो से काम लेना होता है। आख अपने स्थान पर ठीक है, नाक अपने स्थान पर ठीक है, यदि ये दोनो इन्द्रियाँ किसी मनुष्य के कही होती और किसी के कही तो उन मनुष्यो का रूप भी अस्वाभाविक होता। सृष्टि कर्ता ने प्रत्येक इन्द्रिय को जिस प्रकार शरीर की आवश्यक सुविधाओ के अनुसार रखा उसी प्रकार प्रकृति की प्रत्येक वस्तु भी प्राणी जगत की ठीक २ सुविधाओ के अनुसार है। ये सभी आकार सप्रयोजन हैं। सभी किसी न किसी प्रयोजन को सिद्ध करते हैं। सृष्टि मे कोई भी आकार निष्प्रयोजन नही। जिस प्रकार सृष्टि मे हम प्रत्येक वस्तु का आकार सप्रयोजन मानते हैं, एक निश्चित नियम में मानते है उसी प्रकार हमारे जीवन की सभी वस्तुएँ भी सप्रयोजन एव निश्चित नियम के भीतर हैं। हमारा मकान, वस्त्र, आभूषण, खान-पान सबमे एक निश्चित नियम और सप्रयोजनता है। सारा ससार हमारे लिए ऐसा ही है बचपन ही से हम साकार वस्तुओ के बीच बढते हैं। हमारे शरीर, मन, बुद्धि सब देश, काल और परिस्थिति के अनुसार आकार पाते हैं।

आकार के जहाँ निश्चित नियम और संयोजन हैं वही वे प्राकृति नियमो के साथ-साथ परिवर्तित भी होते जाते हैं। परिवर्तन विश्व का एक नियम है। प्रकृति के इस विशाल प्रागण मे वस्तुओ के परिवर्तन के साथ मनुष्यों के, प्राणियों के, भावों तथा विचारो मे भी परिवर्तन होता रहता है और इसीलिए आकार-प्रकार बदलते रहते हैं। मानव समाज की राजनीति, समाज-नीति, शरीर, वस्त्र, आभूषण, खान, पान, सभी देश, काल और परिस्थितियो की आवश्यकताओ के साथ बदलते रहते हैं, जलवायु के परिवर्तन से स्वास्थ्य, रूप, रंग, मे भी परिवर्तन होता रहता है। गरम देश का मनुष्य काला होता है, ठंडे देश के मनुष्य गोरे होते हैं। मैदानो की गौएँ बडी ऊँची होती हैं, पहाडो की छोटी-छोटी। तात्पर्य यह कि प्राकृतिक परिवर्तनो के साथ २ आकारो मे परिवर्तन अनिवार्य है। चित्रकला मे इसी को वर्तमान चित्रकचार्य 'डिजाइन' कहते हैं, डिजाइन का शब्दार्थ है "किसी वस्तु को रूप देना" किसी खास प्रयोजन से और किसी सुन्दरता के लिए। डिजाइन का अर्थ है रेखाओ द्वारा किसी वस्तु को आकार देना। वे रेखाएँ सुन्दर ढग से स्वाभाविक रूप से तथा उचित रूप मे हो। दूसरे शब्दो मे डिजाइन वह है जिसमे रेखाएँ किसी वस्तु को स्वाभाविक रूप से तथा सुन्दर रूप से बताएँ। इस डिजाइन के स्थान पर हम अब 'आकार' शब्द का ही प्रयोग करेंगे।

आकार दो प्रकार के होते हैं। एक निर्माणात्मक और दूसरा शृंगारात्मक या प्रसाधनात्मक। पहले आकार में संसार की वे सभी वस्तुएँ आ जाती हैं जिन्हे हम देखते हैं, जिनके स्वरूप का दर्शन हम अपनी आखों से एक निश्चित नियम और उपयोग के लिए करते हैं। इसमें नियमितता तथा उपयोगिता होनी आवश्यक है। उदाहरण के लिए हम पर्वतो, नदियो, वृक्षों, पक्षियो, घास, फूल, घड़ा आदि किसी भी वस्तु को ले सकते हैं। ये सभी वस्तुएँ ईश्वर द्वारा या मानव द्वारा एक निश्चित रूप मे बनाई हुई हमारे सामने आती हैं। जैसा कि हमने पहले कहा है कि इनका स्वाभाविक रूप ही हम देखते हैं तो हमें भद्दापन सा लगता है तथा एक अद्भूत बात सी मालूम पड़ती है। इस पहले प्रकार में हम उसकी ओर केवल उपयोगिता की दृष्टि से बढते हैं। वह वस्तु हमारे उपयोग में आने योग्य होनी चाहिये उपयोगिता के साथ-साथ हमे उसमें सौन्दर्य देखने की लालसा भी बनी रहती है। हमारे दैनिक जीवन के उपयोग मे आने वाली सब वस्तुएँ ऐसी ही हैं। दूसरे प्रकार का आकार केवल सजावट के लिए होता है। इसमे आकर बनाने वाला केवल सौन्दर्य-निर्माण तथा सौन्दर्य दर्शन का अभिलाषी होता है। वह रेखाओ द्वारा ऐसा आकार प्रस्तुत करता है जो सुन्दर हो, सुन्दर लगे और वह आकार एक रूप में नहीं अनेक रूप मे "आकार निर्माता" द्वारा प्रस्तुत होता है। एक ही वस्तु अनेक रंगों द्वारा हमारे सामने आती है। हम उस एक को भी अनेक पाते हैं। यह

दूसरा प्रकार निर्माता की इच्छा पर निर्भर है। वह जैसा चाहे वैसा बनादे। उस पर किसी का बन्धन नही। प्राकृतिक वस्तुओ के निश्चित आकारो को जो कि पहले प्रकार के आकार मे हम बता चुके हैं आकार बनाने वाला बदल सकता है। पहले प्रकार का आकार बडी सुगमता से बनाया जा सकता है क्योकि वह पहले ही प्रकृति की वस्तुओ मे हमे मिलता है, फूल या पत्ते, पक्षी या झरने, पर्वत पत्थर, चन्द्र, सूर्य ये सब नित्य-आकार मे रहते हैं और सदैव हमारी आँखों के समक्ष रहते हैं। इसलिए इनका चित्रण करना कठिन नही होता। प्रकृति की विशाल गोद मे रहने वाली उन सभी वस्तुओ, जिनको हम देखते हैं, उनका आकार बनाने मे चित्रकार को कठिनाई नही होती। दूसरे प्रकार का आकार, जो कि उसे स्वय बनाना पडता है या उसकी सूझ मे स्वत उद्बुद्ध होता है, कठिन है। यह आकार कैसे सुन्दर लग सकता है, लोगो की रुचि के अनुकूल कैसे बन सकता है यहाँ यह जानना अत्यन्त आवश्यक है। प्रसाधन आकार ही विशेष कर हम यहाँ स्पष्ट करेंगे। इससे पूर्व हम आकार के विशेष अगो पर प्रकाश डालेंगे।

आकार में चार बातें विशेष होती है।

सन्तुलन, आशिकनिष्पत्ति, केन्द्रीयकरण और लयात्मकता। पहले मे रेखाएँ एक निश्चित सन्तुलन के अनुकूल चलती हैं, चित्र का सम्पूर्ण कलेवर एक माप दण्ड पर निर्भर होता है। उनके लिए पहले से ही इसका निर्धारण आवश्यक है। दूसरे मे चित्र के प्रत्येक अग का निर्धारण एव उसे पूर्णता देने का उपक्रम होता है। तीसरे मे चित्र मे जिस विशेष भाव पर कलाकार अपना मन्तव्य रखता है वह निर्धारण किया जाता है; और चौथे मे लयात्मकता आती है, विशेष ध्यान रखना पडता है नियमितता पर। लयात्मकता से तात्पर्य यहाँ उससे है जो विशेष भाव या केन्द्र को सुन्दर तथा स्पष्ट बनाने के लिए आती है। प्रत्येक रेखा, प्रत्येक निरूपण एक निश्चित भाव की अभिव्यक्ति के लिए हो; रेखाएँ व्यर्थ न हो और न उनकी आकृति भाव निरोधक हो। प्रत्येक रेखा आवश्यकता को रखे और उसका अकन किसी भाव विशेष या केन्द्र विशेष को स्पष्ट अथवा समझाने मे सहायक हो। इन चारो अगो से युक्त आकार सर्वथा सफल और आकर्षक होता है। उसी मे पूर्णता रहती है।

रेखा निरूपण

रेखाएँ आकार कल्पना मे विशेष उपयोगी हैं, क्योकि इनसे चित्र का सम्पूर्ण व्यूह तैयार होता है। अनेको रेखाएँ जब दाएँ बायें से समानान्तर रूप से अथवा आदि, मध्य, अन्त मे निरूपित होती हैं, इन्ही रेखाओं से फिर सारा चित्र निर्मित होता है। उदाहरण के लिए यदि हम एक पत्ता ले तो हम उसमे देखेंगे कि उस पत्ते के दाएँ बायें आदि मध्य अन्त, के कोणो से रेखाएँ पत्ते के सारे शरीर को सजाने मे उपयुक्त होती हैं। पत्ते के सम्पूर्ण कलेवर पर हम कुछ रेखाएँ दाएँ, बाये कुछ समानान्तर कुछ आदि अन्त मध्य मे खिची हुई देखते हैं और उन्ही से पत्ता अपने सम्पूर्ण रूप मे हमारे सामने आता है। आकार कल्पना मे भी हम इसी प्रकार आकार कर्ता को रेखाओ का उपयोग करते देखते हैं। कलाकार अपनी तूलिका से अनेको सुन्दर रेखाओं द्वारा जिनमे आकार कल्पना की उपर्युक्त चारो बातें होती हैं। एक सुन्दर रूप हमारे सामने प्रस्तुत करता है। रेखा निरूपण चित्र में अत्यन्त आवश्यक है। आकार कल्पना मे तभी सौन्दर्य उपस्थित हो सकेगा यदि कलाकार की रेखा निरूपण-पद्धति निर्दोष होगी। इसी प्रकार एक-एक भू-भाग का चित्र यदि आकार कर्ता प्ररतुत करता है तो उसमे भी दूरी, समीपता, बीच का भाग, सकोच तथा विस्तार ये सभी बातें रेखाओ द्वारा ही प्रस्तुत की जा सकेंगी। लम्बाई, चौड़ाई, गहराई, ये सभी स्पष्ट रेखाओं से बताकर फिर उन सब रेखाओ द्वारा केन्द्र को भी स्पष्टीकरण मिल जाता है। आकार कल्पना मे रेखा निरूपण बहुत ही आवश्यक है क्योंकि इनसे चित्रों के सभी अशो का पारस्परिक सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है।

आकार कल्पना के कारण

प्राकृतिक आकार कल्पना मे हम कह आये है कि पदार्थों का कारण सघर्ष है। सघर्ष हुआ और आकार बना। मनुष्यकृत आकार कल्पना के विषय मे विचारको के अनुमान के बहुत से कारण हैं। सबसें पहला कारण वे आवश्यकता बताते हैं। आदिम-प्राणी-समाज को जैसे-जैसे जिन-जिन वस्तुओ की आवश्यकताएँ प्रतीत हुई उन्ही वस्तुओ के आकार उन्होने बना दिये। आदिम मनुष्य वृक्षो के नीचे, गुफाओ मे, खाईयो मे फिर झोपडियो मे, फिर पक्के मकानो मे और इसके भी बाद महलो मे रहते रहे। उनके निवास स्थानो के आकार आवश्यकतानुसार बदलते गये। जिस पदार्थ से जैसी आवश्यकता प्रतीत हुई उनका वैसा स्वरूप उन्होने बनाया। दूसरा कारण उन्होने उपयोगिता बताया है। उपयोगिता से तात्पर्य है उपभोग या लाभ। अर्थात् वस्तुओ को उन्होने उसी रूप में घटित किया जिस रूप में उनसे लाभ पहुँच सकता था। पत्थर तथा लोहे आदि के अस्त्र, वस्त्र तथा आराम के अन्य साधन सभी विशेष-विशेष रूपो मे इसी उपयोगितावाद के दृष्टिकोण से बने। आकार कल्पना का तीसरा कारण वातावरण और जलवायु है। जिस प्रदेश का जलवायु जैसा रहा वैसे ही वहाँ वस्तुओ के आकार प्रकार बन गये। वातावरण से ही हमारी वेष-भूषा, रहन-सहन के व्यवहार मे आने वाली वस्तुओ के आकार बनते हैं। चमड़े के कपडे, जूते, लम्बे कोट, छोटे कोट, ये सभी वातावरण के कारण आकार पाते हैं। बर्फ या वर्षा वाले प्रदेशो मे लम्बे बूट पहने जाते हैं। ठण्डे देशो मे बडा बन्द गले का कोट सुन्दर लगता है। गरम देशो मे ढीला कपड़ा या खुला वस्त्र सुन्दर लगता है। तात्पर्य यह कि वातावरण भी हमारी वस्तुओ के आकार बनाने मे सहायक होता है। चौथा कारण आकार कल्पना में जातीय सस्कृति या जीवन के सस्कार होते है। किसी विशेष जाति या सस्कृति या जीवन के संस्कार होते है। किसी विशेष जाति या सस्कृति के उपयोग की वस्तुएँ दूसरी जाति या सस्कृति से भिन्न है, हिन्दू टोपी और मुसलमानी टोपी दोनो के आकार भिन्न हैं। अग्रेजी टोप उन दोनो से भिन्न है। इस प्रकार आकार कल्पना मे जातीय जीवन और सस्कृति विशेष भी झलकते हैं। पाँचवाँ कारण आकार कल्पना मे पदार्थ भेद भी है। कोई आकार मिट्टी पर सुन्दर बनता है, कोई लकडी पर खिल सकता है और कोई ताँबे-पीतल पर। पदार्थ भेद से भी आकार-भेद हो जाता है। आकार कल्पना मे छठा कारण व्यक्तिगत रुचि भी है। व्यक्तिगत रुचियो से वस्तुओ मे भेद पैदा हो जाता है। उदाहरणार्थ एक ही कपड़ा विभिन्न रुचियो से विभिन्न शरीरो पर विभिन्न रूप धारण कर लेता है। कही बन्द गले का कोट, कही गोल कोट, कही अचकन, और कही लम्बा कोट बन जाता है। किसी का पायजामा चौड़ा, किसी का तग और किसी का चूडीदार ये सब एक ही कपडे के अनेक रूप हैं जो कि रुचि के अनुसार पृथक्-पृथक् हो गये हैं। ये सभी जितने प्रकार के आकार हैं हमेशा परिवर्तनशील हैं किसी भी आकार को नित्य नही कह सकते हैं। ये सभी आकार सजावट के लिए होते हैं। मानव समाज क्या सारा चेतन-समाज सजावट के लिए ही आकारो को जन्म देता है। अब आकार कल्पना के भेदो पर हम क्रमशः विचार उपस्थित करते हैं।

आकार कल्पना के वैसे तो कई रूप हैं परन्तु विचारकों ने मुख्यत. उसे चार भागों मे बाँटा है :—

१—प्राकृतिक आकार कल्पना।

२—अलकारिक आकार कल्पना।

३—ज्यामितिक आकार कल्पना।

४—सूक्ष्म आकार कल्पना।

१. प्राकृतिक—

पहले प्रकार की आकार कल्पना में प्राकृतिक वस्तुओ के रूप अङ्कित किये जाते हैं। वस्तु प्रकृति मे जिस रूप में दिखाई देती है, उसी को हम कपड़े कागज आदि पर अङ्कित कर देते हैं। प्राकृतिक आकार

कल्पना मे इस बात का ध्यान अवश्य रखना पडता है कि जो कुछ कलाकार अङ्कित करना चाहता है उसमे अभिव्यक्ति भी हो केवल अनुकरण न हो। अभिव्यक्ति से तात्पर्य यह है कि जो आकर कर्त्ता देना चाहता हो उससे भाव पूरे स्पष्ट होने चाहिए, प्रत्येक रेखा प्रत्येक उपक्रम पूरे और एक निश्चित भाव की स्पष्टता करे । प्राकृतिक वस्तु का अनुकरण तो हो परन्तु उससे भाव का स्पष्टीकरण न हो तो आकार कल्पना सफल नही, पूर्ण अभिव्यक्ति ही आकार का सच्चा लक्ष्य है। प्राय प्राकृतिक वस्तुओं के आकार निर्माण के समय यह ध्यान रखा जाता है कि उसमे स्वाभाविकता भी आ जाय और सौन्दर्य भी। इन दोनो मे भी जिस विशेष भाव को आकार कर्त्ता अभिव्यक्ति देना चाहता है वह होनी आवश्यक है। उसी व्यक्ति के बनाये हुए आकार भले लगते हैं जिनमे स्वाभाविकता और सौन्दर्य दोनों तत्व मूल भावो के साथ प्रकट हो। इसके लिए चित्रपट अर्थात् कपड़ा, कागज भी देखना आवश्यक है। किस प्रकार के वस्त्र या कागज पर कौन सा चित्र अकित भली भाँति हो सकता है यह विचार करके ही काम करना चाहिए। आजकल चीनी और जापानी ढग के आकार हमारे वस्त्रो और पटो पर दीखते हैं। लोग प्राकृतिक वस्तुओ के रूप अकित करते है जिनमे केवल अनुकरण के और कुछ प्रतीत नही होता। न तो सौन्दर्य ही पूर्ण रूप से उतरता है और न स्वाभाविकता ही दृष्टिगोचर होती है।

२. आलंकारिक—

इसमे किसी वस्तु के स्वाभाविक रूप को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए कुछ विशेष प्रकार का उस मे आकर्षण उत्पन्न करने के लिए कलाकार का प्रयोग स्वतन्त्र होता है। किसी फूल पत्ती के आकार को आलकारिक रूप मे परिवर्तित करके हम आकार बनाते है। इस प्रकारो के आकार मे भी पुनरावृत्ति केन्द्रीकरण आदि आकार कल्पना के चारो अग काम मे आते हैं। इसका क्षेत्र अन्य प्रकारो से अधिक विस्तृत होता है । प्राय. बहुत प्राचीन काल से ही इस विषय में देखा गया है कि लोग अपने व्यवहार की सभी वस्तुओ को मनमाने ढग से सजाने मे प्रयत्नशील रहे। सभी देशो के सभी व्यक्ति इन आलकारिक आकार कल्पनाओ की ओर आकर्षित होते रहे हैं। पहले प्रकार के आकारो से ये अधिक सुन्दर प्रतीत होते हैं। इनमे स्वाभाविकता की अवहेलना नही होती प्रत्युत: सौन्दर्य को प्रधानता दी जाती है। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि इनका उपयोग यथेच्छ किया जा सकता है। आकार कर्त्ता जैसा चाहे वैसा रूप इन्हें दे सकता है। सौन्दर्य होना अवश्यम्भावी है उनमें प्रागैतिहासिक काल से ही गाथी, फारसी मुगल और राजपूत कालीन आलकारिक शैली के प्रयोग प्रायः अधिकता से देखने मे आते हैं।

३. ज्यामितिक—

हमारे भारतीय प्राचीन इतिहास में सुदीर्घ जीवन के साथ-साथ सांस्कृतिक परम्परा है। इसमें हमारे जन्म से लेकर मृत्यु तक अनेक प्रकार के शृगार-प्रसाधनी जन्म, नामकरण आदि सस्कारो के समय ब्राह्मण लोग करते हैं। स्त्रियाँ घर की दीवारों पर अनेक चित्रकारियाँ बनाती हैं। ब्राह्मण हवन की वेदी मे चक्र आदि आटे हल्दी तथा रोली से बनाते हैं। आयत (चौडा-गोल) वृत्त सीधी वक्र (टेढी) रेखाओ द्वारा अग्निदेव की पूजा का यंत्र मिट्टी की वेदी पर बनता है। इसी प्रकार अन्य विवाहादि कार्यों मे मण्डप सजाने में इस आकार कल्पना को महत्व दिया जाता है। विशेषत यतों की पूजा हमारे यहाँ जो होती है, वह यही ज्यामितिक आकार कल्पना है। चित्रकला मे इस प्रकार की ज्यामितिक रेखाएँ अलकरण मे काम आती हैं। इस प्रकार के आकार आवृत्ति, समप्रभाव सन्तुलन आदि के सिद्धान्तो के विभिन्न व्यावहारिक प्रयोगो की निपुणता पर निर्भर रहते हैं। इन आकारो मे अनेक आकार जब तक एक साथ नही आते तब तक ये सुन्दर प्रतीत नही होते। उदाहरण के लिए हम एक सिपाही आदि का आकार बनाते हैं तो उसी के साथ अनेक सिपाहियो का भी आकार निर्माण वाञ्छनीय है। जब तक उस एक सिपाही के साथ अनेक सिपाहियो की पक्ति का निर्माण हम नही करते तब तक वह एक सिपाही का आकार नही बनता है। इसी प्रकार फूल, पत्ते, पौधे, जब तक एक साथ पक्तिबद्ध रूप मे, एक लयात्मक रूप मे हमारे समक्ष

नही आते तब तक ज्यामितिक आकार नही बन पाता। पक्षी, फूल, जानवर, बतन, गाँव इन सभी का समूह, आवृत्ति नियमितता, सन्तुलनात्मकता चित्र बनाने से पूर्व अच्छी प्रकार के निर्धारित कर लेना चाहिए। ज्यामितिक आकार कल्पना मे पक्तिबद्धता का आना अनिवार्य है।

४. सूक्ष्म आकार कल्पना—

इसमे सभी अन्य पूर्वोक्त आकार शैलियो का सम्मिश्रण रहता है। आजकल के मकान तथा वेशभूषाएँ इसी प्रकार की होती है। इनमे सरलता भी होती है, सादगी भी होती है और सजावट भी। सूक्ष्म आकार कल्पना में बहुत सादगी होती है। आलकारिकता इनमे कम होती है। पहले तीनो प्रकार के आकार इनसे स्थूल रूप से मेल नही खाते। ये अलग ही ढग के होते है ज्यामितिक आकार कल्पना के कुछ रूप इनमे हैं जैसे धन त्रिकोण आदि। इनमे कलात्मकता अवश्य रहती है, वह किस सिद्धान्त और सन्तुलन की है यह कहा नही जा सकता। इनकी सजावट बनावट सब निराली होती है। आज के मशीन युग मे इस प्रकार के आकारो का प्रयोग बहुत हो रहा है। आज के वैज्ञानिक युग का प्रभाव हमारे इन आकारो पर द्रुतगति से पड रहा है क्योकि जीवन इनसे प्रभावित है। इन आकारो में ऋजुता, पुनरावृत्ति, समानान्तर, असमानान्तर, क्रम वक्रता, त्रिकोण, ये सभी गुण होने चाहिए। इन आकारो मे प्रवाह तथा समता के कारण कभी-कभी इनमे पहाडो, पत्तो के आकारो का सूक्ष्म अभ्यास भी होता है। आज के युग में सूक्ष्म आकार कल्पना लोग अधिक पसन्द करते हैं क्योकि इनमें सादगी अधिक होती है। किसी भी प्रकार का भाव या रग सम्बन्धी बोझ इन चित्रो पर नही लादा जाता है।

आकार कल्पना में रेखा और रंग

आकार कल्पना मे हम प्राय· दो प्रकार का विभाजन देखते हैं। एक वह जो केवल रेखाओं द्वारा अभिव्यक्ति पाता है और दूसरा वह जो उसी मे रगो द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है। दोनों मे उद्देश्य अभिव्यक्ति ही है। अभिव्यक्ति के लिए उस वस्तु पर भी हमे विचार कर लेना चाहिए जिसका आकार बनाना हो। यहाँ हम अभिव्यक्ति केन्द्र पर भी थोडा विचार कर लेते हैं। जिस वस्तु का हम आकार बनायेंगे वह वस्तु रूप-गुण मे क्या है ? उसका हमारा दैनिक जीवन मे क्या उपयोग होता है ? यह सब देखकर ही हम उसका रूप बनाते है। उस आकार को बनाते हुए हम सौन्दर्य पर ही अधिक ध्यान रखते हैं; वह वस्तु सुन्दर रूप में हमारे समक्ष आये और उसका उपयोग भी स्पष्ट हो जाय। चित्रकार को ये दोनो रेखाओ रंगो द्वारा बनाने पडते हैं। अत. उसमे इतनी योग्यता होनी चाहिए कि वह रेखाओं के सन्तुलन से वस्तु के रूप और गुण दोनो को स्पष्ट कर दे। इस अभिव्यक्ति केन्द्र के लिए कलाकार के मन और हृदय के सस्कार प्रबल होते हैं। जिस प्रकार के मनों भावो या विचारो वाला कलाकार होगा वैसा ही आकार वह बनायेगा। कलाकार की अभिव्यक्ति का केन्द्र वही वस्तु बन सकती है जो उसकी अपनी ठीक-ठीक कल्पना मे आ गई हो। कलाकार की इस आकार कल्पना मे उसके सस्कारो-अनुभूतियो का निरूपण पाकर हम उसके विषय में निर्णय कर सकते हैं कि उसका विचार तथा भाव धरातल क्या है। उपयोगिता से हमारा तात्पर्य प्रभाव-उच्चता है। उच्च कोटि के आकारों में हमे निस्सन्देह कलाकार के भावस्तर की उच्चता का रूप मिलता है। सांस्कृतिक या जातीय चित्रों में प्राय. कम कलाकार ही सफल हो सकते हैं। सस्कृति, धर्म—विशेष मे सम्बन्ध रखने वाले चित्रो में सूक्ष्म भाव प्रदर्शन करने मे कलाकार की निपुणता ही काम कर सकती है। राम के वन गमन के समय दशरथ, कैकेयी, सीता, लक्ष्मण प्रजा आदि के स्वरूपो को स्पष्ट करते हुए कलाकार की सबसे बड़ी सफलता यही है कि इन पात्रो के स्वरूप के साथ-साथ उनके सूक्ष्म मनोभावों को भी उनके चेहरो पर या अन्य अगों में अभिव्यक्ति देदे। तभी चित्र का अर्थ, वातावरण और प्रभाव स्पष्ट हो सकता है। अभिव्यक्ति केन्द्र के यथार्थ-सौन्दर्य पूर्ण रूप से अकित करने में ही आकार कल्पना सफल समझनी चाहिए। औरंगजेब के चित्र मे तिलिस्मी माला, कटारी, सुनहरी जरी, हीरे तथा ऊँचे ताज को बताने से कलाकार औरगजेब की कट्टर

धार्मिकता, कठोर राजनीति शक्ति और प्रभाव को स्पष्ट करेगा। अकबर के चित्र मे अकबर की सफेद सुथरी मूँछें, गुलाब का फूल, सादे कपडे और हीरो की माला इन सभी वस्तुओ के चित्रण से कलाकार अकबर का सीधा ममता सज्जनता से भरा विलासी रूप अंकित करेगा। इसी प्रकार जहाँगीर की वेशभूषा बनाकर उसके आकार चित्र से कलाकार जहाँगीर की शान्ति-प्रिय प्रकृति को स्पष्ट करेगा। अभिव्यक्ति केन्द्र को भली-भाँति समझ बझकर ही तूलिका आकार निर्माण के लिए उठानी चाहिए जिससे आकार की उपयोगिता पूर्णत झलके। कुछ आकार इसी उपयोगिता की दृष्टि में अंकित होते हैं।

आकार कल्पना मे अभिव्यक्ति केन्द्र के लिए यह भी आवश्यक है कि बच्चे बूढे और तरुणो के लिए किस प्रकार के आकार सम्भव हो सकते हैं। बच्चे के आकार मे चटकमटक और हल्का भाव प्रकाशन होगा। बूढे के आकार मे सरलता आदर और श्रद्धा-भाव-बोधक रेखाएँ होगी। इसी प्रकार तरुणो के आकार निर्माण मे उल्लास, मस्ती आदि के भावो से सम्बन्धित कल्पना होगी। बच्चो के माँ बाप प्राय अपने बच्चो को सजाने के लिए फूल पत्ते और फल वाले आकारो से युक्त वस्त्र पहनाते हैं। बच्चो के शृंगार इस प्रकार से किए जाते हैं कि बच्चा बहुत से बच्चों में एक अलग सौन्दर्य का केन्द्र होने से सबको अपनी ओर खीच सके। चटकीले वस्त्र, चटकीली वेशभूषा बच्चो की आकार कल्पना मे दिखाना आवश्यक होता है। फूल, पत्ते, फलो से बच्चो की आकार कल्पना का भाव यह होता है कि बच्चे फूलों की भाँति कोमल, आकर्षक, फूलो की भाँति लावण्य और हर्ष के केन्द्र हैं। आकार निर्माता को इसी प्रकार रंग रेखा लगाते हुए इसका पूरा ध्यान रखना पडता है कि जो आकार वह बना रहा है, उसका अभिप्राय पूर्णत: स्पष्ट हो रहा है या नही। चीनी कपड़ो के आकारो मे प्राय· बच्चो के कपडो मे यह देखा जाता है कि वे गुड्डो, सुन्दर चिड़ियों के आकार लेकर सजाये जाते हैं। जैसे-जैसे मनुष्य बड़ा होता चला जाता है उसका स्वभाव गम्भीर और सादा होता चला जाता है। इसी के सन्तुलन मे यदि हम किसी बूढे के आकार में देखें तो मालूम होता है कि वह सफेद कपडे सुन्दर मानता है। सजावट से उसका सम्बन्ध नही। इसी प्रकार गेरुए वस्त्र वाले के भावों से उसका आकार सात्विक भावों की अभिव्यक्ति के लिए ही होगा। इन सबका मतलब यह नही कि इन सबको और रूप मे नही रखा जा सकता; परन्तु आकार कल्पना मे यदि पहली ही बात पर हम चले तो ठीक है। आकार की उपयोगिता और स्वाभाविकता ठीक भावाभिव्यक्ति मे ही है।

जिस प्रकार आकार कल्पना से कलाकार की भावानुभूति स्पष्ट होती है उसी प्रकार जिस वस्तु का आकार कलाकार ने बनाया है उसका अन्त: और वाह्य जगत् भी इसी मे स्पष्ट हो जाता है। अकबर, जहाँगीर, औरंगजेब के उदाहरणों में हम यह स्पष्ट कर चुके हैं। आकार कर्त्ता को सभी आकारो को ठीक समझ बूझकर तूलिका उठानी चाहिए। बाल, वृद्ध, तरुण की अवस्था परिस्थिति और मन का आकार मे स्पष्टीकरण करके ही आकार कल्पना सफल मानी जा सकती है।

रंगों का महत्व

अब रग के विषय मे भी समझ लेना आवश्यक है। रगो का रेखाओ के साथ गहरा सम्बन्ध है। जिस भाव विशेष को रेखाएँ स्पष्ट करती है, उसी मे कुछ विशेष आकर्षण उत्पन्न करने के लिए आकार कल्पना मे रगो का उपयोग होता है। रग कभी सन्तुलन और कभी किसी भाव विशेष की वृद्धि के लिए आते हैं। ये भी बच्चे, बूढे और तरुण की प्रकृति भेद से प्रयुक्त होते हैं। बच्चो के लिए प्रयुक्त होने वाले रग चटकीले तथा हल्के भावस्तर के होते हैं। उनमे गम्भीर भावो की अभिव्यक्ति का प्रयास नही होता। युवावस्था के लोगो के योग्य प्रयुक्त होने वाले रग प्रबल आकर्षण युक्त होते हैं। आस-पास के लोगो की दृष्टि का केन्द्र बन जाने की आकाक्षा प्राय: युवको मे होती है इसीलिए उनकी वेश-भूषा मे भी इसी मनोविज्ञान की झलक होती है। आकार कल्पना मे तरुण के स्वरूप का निर्माण ऐसे ही रंगो से किया जायगा जो दर्शको को बलात् खीच लें। युवाओ के प्रेम, उल्लास, स्फूर्ति, मादकता, साहस, ओज, तेजस्विता आदि भावो की अभिव्यक्ति में ऐसे ही अनुकूलन रगो का प्रयोग आकार कर्त्ता को करना पड़ेगा। साराश यह कि तरुणो की आकार निर्माण योजना मे तथा पिता के आकर निर्माण मे पावनता और सरलता बोधक रगो का प्रयोग होगा। जब तक रगो का समुचित प्रयोग नही होगा तब तक आकार कल्पना अपूर्ण और प्रभाव शून्य होगी। रगो द्वारा परिस्थितियों, सूक्ष्मप्रवृत्तियो और विचारो को स्वत स्पष्टता मिल जाती है। हमारे यहाँ तीन प्रकार के रग प्रधान है, पीला, लाल और नीला, इन तीनो रगो को मूल रग कहा जाता है। प्रकृति मे ये तीनो रग प्रधानत. पाये जाते हैं और इन्ही के साथ पारस्परिक सम्मिश्रण से तीन रग और बन जाते हैं।

रग चक्र मे नीले और पीले को समान मात्रा में मिलाने से हरा रग बन जाता है; दूसरे लाल और पीला मिलाने से नारगी रंग बन जाता है लाल और नीला मिल जाने से बैंगनी रग बन जाता है। तीन प्रधान रगो को हम मूल रग कह चुके हैं। दूसरे रग जो परस्पर के संयोग से बने हैं मिश्रित या गौण रग कहलाते हैं। इन छ: रगो के अतिरिक्त भी अनेक अन्य रगों का निर्माण कलाकार कर लेते हैं। वे सभी पचासों प्रकार के रग इन्ही छ: रगो के अन्तर्गत हैं। केवल बुद्धि तथा रुचि का चमत्कार इनके अनेक रूपो का कारण है। उदाहरणार्थ आटा, आलू और घी-नमक का प्रयोग साधारण गृहिणियाँ सीधे सादे भोजन के रूप मे प्रस्तुत कर देती हैं। परन्तु आधुनिक युग की वैज्ञानिक शिक्षा सम्पन्न महिला उसी आटे घी और आलू नमक से कई प्रकार के भोजन प्रस्तुत कर सकती हैं। इसी प्रकार वर्ण योजना (कलर स्कीम) मे कलाकार अपने भावों की अभिव्यक्ति रुचि और प्रयोजन के अनुसार वर्णों (रगों) द्वारा करेगा।

रंग का प्रयोग करने के पाँच प्रकार हैं :—

१—समन्वयात्मक वर्ण योजना (Colour Scheme of Harmony)

इसमें कलाकार अपनी रुचि अथवा प्रयोजन के अनुसार किसी विशेष रग को छाँट कर आकार कल्पना मे प्रयोग करता है। समन्वयात्मक वर्ण-योजना का तात्पर्य है एक विशेष रङ्ग का आकार कल्पना मे प्रयोग करते हुए उसके समानान्तर या मिलते जुलते रग का भी प्रयोग होना आवश्यक होगा। जैसे लाल रग का उपयोग करते हुए उसके मित्र रंग बैंगनी और नारंगी का भी प्रयोग करना आवश्यक है क्योकि इन दोनो

रङ्गो मे लाल रङ्ग अवश्य रहता है। जहाँ लाल होगा वही नारङ्गी और बैंगनी अवश्य होने चाहिए तब आकार कल्पना सुन्दर होगी।

अब तक हमे मालूम हुआ कि रङ्गो मे से मित्र रङ्गो को लेकर समन्वयात्मिका शैली की आकार कल्पना होती है, परन्तु कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि बहुत से रङ्गो को विविध रूप मे लेकर भी हम एक विशेष रङ्ग का पुट देकर उनमे समन्वय उपस्थित कर सकते हैं। वे विशेष रङ्ग दो ही हैं, काला और सफेद। ये अलग अलग प्रकार से प्रयुक्त होकर समन्वयात्मक शैली की रङ्ग योजना को बना सकते हैं। समन्वयात्मक शैली दो प्रकार की हैं—हल्की और भारी। हल्की मे सफेद रङ्ग मिलाकर रङ्ग योजना होती है दूसरी में काला रङ्ग मिलाकर जो भी रङ्ग हम प्रयोग मे लायेंगे उनके लिए काले और सफेद मे से एक को समन्वय लाने के लिए हम प्रयुक्त कर सकते हैं। अच्छा होगा कि रङ्ग योजना करते समय हम रङ्ग चक्र को ध्यान में रखें या इन्द्र धनुष को ध्यान मे रखे।

२—प्रतियोगितात्मक वर्ण-योजना (Colour Scheme of Contrast)

इसके अनुसार विपरीत रङ्गो का प्रयोग होता है। उदाहरणार्थ जहाँ लाल रङ्ग होगा वहाँ हरा रङ्ग जो कि रङ्ग चक्र मे ठीक उसके सामने है, लगाया जायगा। या पीले रग के साथ बैंगनी रङ्ग लगेगा। इस प्रतियोगितात्मक वर्ण योजना का प्रयोग भी कलाकर अपनी रुचि और बुद्धि के अनुसार ही करते हैं। प्रतियोगितात्मक वर्ण योजना सौन्दर्य का स्पष्टीकरण अच्छा करती है। जब तक विरोधी रङ्ग परस्पर प्रयुक्त नही दिखाये जाते तब तक आकार कल्पना मे सौन्दर्य ग्रहण नही हो सकता।

३—प्रतियोगिता समन्वय रङ्ग योजना

कभी समन्वयात्मक तथा प्रतियोगितात्मक दोनो योजनाओं का प्रयोग कलाकर एक साथ भी कर लेते हैं। दोनो मे से कुछ थोडा अश किसी एक का बढा देते हैं। इसी को समन्वय तथा प्रतियोगितात्मक रङ्ग योजना अथवा प्रतियोगिता-समन्वय-रग योजना भी कह सकते हैं। यह तीसरा प्रकार और चौथा प्रकार सौन्दर्य वृद्धि के लिए ही आता है। जैसे—किसी बडे लम्बे लड़के की ऊँचाई को स्पष्ट करने के लिये उसके पास छोटे-छोटे लड़के अवश्य दिखाये जायेंगे। अथवा किसी को अत्यन्त सुन्दर बताने के लिए उसके पास कुरूप मनुष्य अवश्य ही बनाने पड़ेंगे। इसी प्रकार जो भी रग योजना कलाकर प्रदर्शित करना चाहेगा तथा उसका साधारणीकरण दर्शकों में करना चाहेगा तो उसे ये शैलियाँ दिखानी होगी।

पाँचवी प्रकार की रङ्ग योजना सफेद या काले रङ्ग से थोडा बहुत परिवर्तन करने से सर्वानुपाती रङ्ग शैली कहलाती है। इसमें एक रङ्ग मुख्य रहता है और अन्य रंग हल्के रूप में सहायक बनाकर आकार कल्पना प्रस्तुत की जाती है। सफेद और काला इसमे परिवर्तन के मूल हैं। इसी को अग्रेजी में मोनोक्रोम (monochrome) भी कह सकते हैं। हम रङ्ग मनोविज्ञान के विषय में पर्याप्त रूप से बता चुके हैं और इस निश्चय पर पहुँच चुके हैं कि प्राचीन इन्द्र धनुषी रङ्ग योजना अथवा नवीन रङ्ग योजनाएँ जो ऊपर हम बता चुके हैं एँतदर्थ प्रयुक्त की जा सकती हैं तथा सुन्दर आकार कल्पना प्रस्तुत की जा सकती हैं। इन सबका उपयोग यदि अपने उपयोग की वस्तुओ के श्रगार में करें तो वे सुन्दर प्रतीत होगी; कपड़ों जैसे, साड़ी की किनारियाँ, लिहाफ, पहनने के कपड़े (बच्चों तथा तरुणो के) इत्यादि आते हैं। घर की दीवारें, छत, फर्श आदि को सजाने के लिए और कालीन, दरी, मेजपोश इत्यादि के आकारो को सजाने में रगों का उपयोग ऐसा करें जिससे वे आकर्षक तथा स्वाभाविक लगे। हमारे यहाँ रग सिद्धान्त बहुत ऊँचे थे। चीन, फारस, यूनान आदि देशों में रगो के सिद्धान्तो के विषय मे उन लोगो को कुछ ज्ञान न था, वे केवल प्राकृतिक दृश्यों को देखकर रग योजना को समझते थे। सूर्योदय के समय क्षितिज पर खेलने वाले अनेकों रंगो को देखकर उन लोगों ने अपनी कला

मे रग योजना रखी। उदाहरणार्थ सूर्योदय के समय पूर्वाकाश मे पहले लाल, उसके बाद गुलाबी, फिर नारगी, उसके बाद पीला, उसके बाद हरा और उसके भी बाद नीला रग देखने मे आता है। रग योजना मे यही सिद्धान्त उन लोगो को मान्य रहा होगा। हमारे रग योजना सीखने वाले विद्यार्थियो को इन्द्र धनुषी रग योजना के नियम याद न रहे तो भी वे सूर्योदय और सूर्यास्त के समय को देखकर रग योजना का ढग समझ सकते है। प्रकृति से कलाकार बहुत कुछ सीखता है। पदार्थ, रग, वेशभूषा इत्यादि सभी बातें प्रकृति की गोद मे अनेक आकारो मे दीखती हैं। लता, वृक्ष, जीव, जन्तु, पक्षी सभी अनेक आकारो में हमारे सामने आते हैं। इन सबके अनेक आकारो को देखकर कला का विद्यार्थी अपने लिए कला साधना की सामग्री ले सकता है। विद्यार्थियो को प्रकृति की सभी वस्तुएँ ध्यान से देखनी चाहिए। उन पदार्थों के भीतर क्या-क्या विशेषताएँ है जो आकार कल्पना, कल्पना का सौन्दर्य, दिखाने में सहायक हो सकती हैं। उदाहरणार्थ गुलाब के फूल, पत्ते, पखुड़ियाँ, केसर, काटे, टहनी इन सबको भली-भाति समझ कर आकार देने वाला विद्यार्थी गुलाब का आकार सुन्दर स्वाभाविक रूप मे प्रस्तुत कर सकेगा। साराश यह कि प्रकृति के पदार्थों का सूक्ष्म निरीक्षण करने वाला सफल आकार कर्त्ता होगा। अब हम इतना कुछ कहने के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुँच गये हैं कि आकार कल्पना या डिजाइन मे यह सभी कुछ कहाँ तक अपेक्षित है। अब हम आकार कल्पना के छोटे-मोटे सभी रूपो का विश्लेषण करते है और उनमे प्रयुक्त होने वाली सभी विशेषताओ को बताते हैं।

१. किनारी डिजाइन

ये कई प्रकार के होते हैं, कुछ तोड़ मोड़ वाले होते हैं, कुछ साधारण, और कुछ मिश्रित, जिनमें कई प्रकार के गोल चौकोर आकार परस्पर संयुक्त होते है। कुछ ऐसे होते हैं जिनमे फूल पत्ती, चिड़ियाँ, जानवर एव प्राकृतिक दृश्यो का चित्रण होता है। कुछ बेलो के भी होते हैं, जैसे, अगूर की बेल एव अन्य ऊर्ध्वगामी बेले। ये सभी उपर्युक्त वस्तुएँ साधारण हैं, परन्तु जब विद्यार्थी इनके अभ्यस्त हो जाते हैं तभी वे आगे की आकार कल्पना बना सकते हैं। इन सब वस्तुओ में से हम कब और किस वस्तु को लेकर किस आकार और किनारी के लिए कौनसी वस्तु का रूप छाँटें और उसे किस प्रकार नियमबद्ध करें यह कला के विद्यार्थी को स्वय छाँटना चाहिए। इस सम्बन्ध में हम पर्याप्त चर्चा कर चुके हैं। इस प्रकार के आकारो मे इस बात का ध्यान भी अवश्य रखना होगा कि किस प्रयोजन के लिए कौन सा रग और रेखाएँ उपयुक्त होगी। स्वाभाविकता और आकर्षण आकार या डिजाइन मे तभी आयगा जब उसमें रंग और रेखाएँ उचित रूप मे प्रयुक्त होगी।

किनारी-आकार के लिए विद्यार्थी को धीरे-धीरे यह सीखना चाहिये, पहले सीधी रेखाएँ फिर उसके बीच में गोल, फिर कुछ ठेढी मेढी रेखाएँ, फिर उन्ही मे फूल पत्ती। इस प्रकार धीरे धीरे किनारी आकार-कल्पना सुन्दरता से सीखी जा सकती है। कभी-कभी विद्यार्थी किसी बनी हुई वस्तु को देखकर घबरा जाते हैं और तुरन्त बहुत बडे किनारी आकार बनाने के लिए आतुर हो उठते हैं परन्तु ऐसी स्थिति मे धैर्य और धीरे-धीरे सोच समझ कर आगे बढना ठीक होता है। जिस प्रकार प्रकृति का नियम है कि मीठा ही मीठा खाना अच्छा नही लगता मीठे के बाद नमकीन खाना अच्छा लगता है और नमकीन के बाद मीठा, इसी प्रकार किनारी आकार में बिल्कुल सीधी रेखाएँ लगातार ठीक नही लगती और लगातार गोल रेखाएँ भी ठीक नही लगती हैं। सीधी और गोल रेखाओ के पारस्परिक सन्तुलन से किनारी आकार सुन्दर बनता है। अजन्ता की आकार कल्पना मे ऐसा ही आकार दिखाई देता है। रगों के विषय में भी यही नियम है, वस्तु के आकार का ध्यान रखकर उसमे रंग देना होगा, जिस वस्तु के लिए भी हम किनारी का आकार बनायें उसी को ध्यान में रखकर सुन्दरता, उपयोग एवं आकर्षण उसमे भरेंगे। किनारी बनाने में विद्यार्थी जो गलती प्रायः कर जाते हैं वह है सातत्य (Continuity) का ठीक तरह से न बनना। दूसरी गलती कोने की हो जाती है। जब कभी किनारी बनाते-बनाते कोना बनाया जाता है तब उसमे भी

त्रुटि आ जाती है। कोना हमेशा समानान्तर होना चाहिए जो कि दो बराबर एक जैसे भागो में बट जाय। जैसा कि सलग्न चित्रो से स्पष्ट होगा। किनारी कई प्रकार की होती हैं उनमे से कौन सी किनारी किस प्रकार बनानी चाहिए यह एक प्रश्न है। साड़ी, शाल, दुसूती, कालीन, दरी, पलग-पोश, आदि पर कई ढग से किनारियाँ बनती हैं। शाल-दुशालो मे स्त्रियो के तथा पुरुषो के शाल आते हैं, पुरुषों के शालो मे किनारी इत्यादि की आवश्यकता नही होती। स्त्रियो के शालो मे प्राय एक तो किनारो पर पतला बॉर्डर होता है, और उसके दोनो तरफ पल्लो पर खूब चौडा बॉर्डर होता है, अधिकतर ये आकार फूल पत्तियो के प्रसाधनात्मक (Decorative forms) तथा पारम्परिक आकारो (Conventional forms) के होते हैं। काश्मीर के शालो के आकार इसके सुन्दर उदाहरण हैं। कभी-कभी बीच-बीच मे उसी वस्तु का छोटा रूप बना दुहरा दिया जाता है। वैसे तो रग योजना मे कलाकार अपनी इच्छानुसार जो भी रग चाहे भर सकता है परन्तु जिस रग का शाल है उसी के सर्वानुपाति रग (Harmonious colour) लगाने ठीक होते हैं, जाडे के कपड़े अधिकतर हल्के गहरे रग के ही अच्छे होते है, चाहे वह हल्का कत्थई रग हो चाहे काला हो अथवा और किसी प्रकार का रग हो।

कालीन के आकार सबसे अच्छे फारस और यूनान के प्राचीन काल से ही अधिक प्रसिद्ध चले आ रहे हैं। फारसी कालीन सर्व-प्रिय हैं। सभी के मुह से उनका नाम सुन लीजिये। इनमे अधिकतर फूल पत्ती जानवर के आकार पाये जाते हैं। ये प्राकृतिक रूप मे नही होते अपितु कलाकार इनको अपना काल्पनिक रूप दे देता है। समय के अनुसार कालीन-आकार भी अब अधिक बदलते जा रहे हैं। दृश्यो का अङ्कन भी अब शेर, चीता, ऊँट आदि के आकारो को लेकर हो रहा है। उनकी चेष्टाओ से बनी आकृतियाँ आकारो मे अङ्कित हो रही हैं। इनमे रङ्ग योजना अधिकतर चटक होती है, और उसमे भी परस्पर सर्वानुपातिता (Harmonious Scheme) होती है। इसी कारण सफेद चांदनी मे गहरे रङ्ग का कालीन उसमे अधिक चमत्कृति (Dignifying position) लाने के लिए बिछाया जाता है।

दरी की किनारियाँ अधिकतर ज्यामितिक आलेखों पर निर्धारित होती हैं। इनमे कलाकार को अपनी कल्पना के लिए अधिक क्षेत्र नही मिलता क्योकि जितनी ऐसी वस्तुएँ हैं जिनमे आकारो का उपयोग दूसरे लोग करते हैं तो उनकी कठिनाईयो का ध्यान रखना आवश्यक है। जुलाहे उस आकार को ताने बाने से बुन सकेंगे या नहीं? और उसमें कितना व्यय, श्रम पडेगा रङ्ग योजना में इनका ध्यान रखना कलाकार के लिए वाञ्छनीय है। उन रङ्गो के तागे मिलते भी हैं या नही, वे रङ्ग पक्के भी हैं या नही। रङ्ग के बक्से से तो कलाकार अनेक रङ्ग बना सकता है परन्तु तागो से विलक्षण रङ्ग नहीं बन सकते। यदि बन भी सके तो उस पर खर्च और समय अधिक लगता है, और प्रत्येक तागा उसमे काम भी नही आ सकता।

भीतरी सजावट (Interior Decorations)—इसका क्षेत्र बहुत बड़ा है। प्राचीन भवनो में भी यह अनेक प्रकार की (Interior Decorations) मिलती हैं। दीवार पर मिट्टी उभार कर बनाए हुए आलेख तथा मूर्तियाँ भी प्राचीन समय की Interior Decoration मे ही पाई जाती हैं। इसमें व्यय अधिक होता है। इसलिए आजकल इस प्रकार की सजावट कम मिलती हैं। आजकल भित्ति चित्र इत्यादि का बनाना एव उनसे भवन सजाना सरल नही। राष्ट्रपति भवन में फारसी कलाकार उसके Interior Decoration के लिए बुलाये गये थे। राष्ट्रपति भवन के भित्ति चित्र आज इस प्रकार की कला के स्पृहणीय उदाहरण हैं।

आज के बडे धनी मानी लोग इस प्रकार के प्रसाधनो को अब कपड़े और कागज आदि पर बनाकर अपने भवनो को सुसज्जित करते हैं। जिनमे Deco-ated Wall papers (डेकोरेटिड वाल पेपर्स), Curtain Designs (कर्टेन डिज़ाइन) आदि मुख्य हैं। अब हम Curtain Designs और Wall paper Design (वाल पेपर डिजाइन) पर प्रकाश डालेंगे।

२. कर्टेन और वालपेपर डिजाइन

व्यावसायिक Interior Decoration करने वाले मानव आकार अकेले अथवा पक्तिबद्ध रूप मे करना उचित समझते है। छत को सजाने मे फूलो के बारीक आकार लगाना उचित समझते है। वे जयपुर और अजन्ता आदि तथा विदेशी शैलियो मे भी हो सकते है। इटालियन शैलियो मे काम करने वाले -बडेबडे प्राकृतिक दृश्य-चित्रो मे लम्बे-लम्बे पेड, बडी-बडी झाडियाँ, निर्झर, सरोवर, मोर आदि चिडियो का चित्रण करके Interior Decoration का सीमा-विस्तार बताते हैं। बागो के अन्दर प्रसाधित (Conventional clouds) बादल, वृक्षो, मन्दिरो की पक्तियाँ, नृत्यरता- आकृतियाँ, सफेद वस्त्रो से सज्जित शङ्ख अथवा फूलो से विभूषित चौकियाँ, इस प्रकार के विषय आजकल लिए जाते हैं। इसमे गोपियो के साथ की रास लीला, मेघदूतादि आलकारिक विषय, पौराणिक आख्यान, प्रेम कथाएँ आदि का अङ्कन आता है। देहली के बिडला मन्दिर मे इस प्रकार के प्रसाधन व्यक्त करने की चेष्टाएँ हैं।

इस प्रकार के प्रसाधनो मे रङ्ग योजना किस प्रकार की होगी? यद्यपि इस रङ्ग योजना पर पहले भी साधारण रूप से प्रकाश डाल चुके हैं, आगे Interior Decoration मे तत्सम्बन्धी कुछ विशेष सुझाव स्पष्ट करेगे।

यद्यपि सिद्धान्तो की दृष्टि से पूर्व पश्चिम के आचार्यों के प्रमाण बहुत हैं फिर भी मानव प्रवृत्तियो के परिवर्तनशील होने के कारण सिद्धान्तो का निश्चित रूप नही कहा जा सकता। Interior Decoration के सिद्धान्त भी समय और परिस्थितियो के साथ बदलते रहते हैं। हम यहाँ कुछ विशेष तथ्यो पर स्थिर विचार प्रकट करेंगे। Interior Decoration के रङ्ग हल्के और रोचक होने आवश्यक है। उनमे चमत्कृति होनी आवश्यक नही। उसका चकाचौंधपन मानव मनोजगत को शान्ति और स्वास्थ्य देने की क्षमता नही रखता अपितु कुछ भारीपन अथवा थकावट सी देता है। वास्तव मे Interior Decoration का प्रयोग बाहर से थक-कर आये हुए मानव मन को शान्ति देने के लिए होना आवश्यक है। उसे देखते ही मनुष्य कुछ विलक्षण शान्ति का अनुभव करे। दूसरी बात इसमे यह भी होनी चाहिए कि जिस भीतरी भाग मे यह प्रसाधन हो वहाँ की प्रधान वस्तु पर इसका दबाव न पड़े। यह उसको प्रभावशाली बनाने मे सहाहक हो। किसी मन्दिर मे सबसे बड़ी वस्तु मूर्ति होती है। उस मूर्ति को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए ही इस Interior Decoration की आवश्यकता पडेगी न कि मूर्ति को निस्तेज दिखाने के लिए। दर्शनार्थी का केन्द्र मूर्ति है यदि मूर्ति के स्थान पर किसी और रूप को कलाकार वहाँ अङ्कित कर दे तो मूर्ति का आकर्षण निस्तेज हो जायगा जो नही होना चाहिए। इस Interior Decoration मे में किसी वस्तु को अधिक प्रभावशाली एवं स्पष्ट कर देने की क्षमता होनी आवश्यक है।

अब Interior Decoration की आकार कल्पना में आने वाली कठिनाइयों पर भी थोडा प्रकाश डालते हैं। सबसे पहली कठिनाई आकार स्वाभाविकता लाने में हैं, छोटी चीजे बडे आकार में कैसे स्वाभाविक दीखेंगी यह सबसे पहले सोचना पडेगा। दूसरी कठिनाई रङ्ग योजना की स्वाभाविकता है। छोटे बडे आकारों की रङ्ग योजना में बड़ा अन्तर हो जाता है। कभी बड़े आकार बना देने में हो सकता है कि वे अच्छे न लगें। छोटी आकार कल्पना को समीप से देख सकते हैं परन्तु बड़ी चीजो को दूर से देखना पडता है इसलिए दूरी और समीपता का भी विचार करना आवश्यक है। Interior Decoration प्रसाधन प्रवृत्तियो पर निर्भर है। समय के साथ-साथ यह भी परिवर्तित होती है। प्रागैतिहासिक काल मे शस्त्रों, जगली जीवों के आकार इस भाँति के मिलते हैं। इसके बाद Graphic Arts मे खुदाई, मूर्ति, चित्रकारी इत्यादि आई और आधुनिक युग मे भाव चित्रण और प्राकृतिक दृश्य चित्रण भी लिए जाते हैं। हमारा प्रयोग केवल आकार कल्पना ही है। समय और परिस्थितियाँ उसे विभिन्न रूप दे देती हैं।

जैसा कि हम ऊपर बता चुके है, प्राचीन काल मे भिन्न प्रकार के और अनेक शैलियो मे अन्तर्गृह प्रसाधन आलेख्य प्रयुक्त होते थे। परन्तु आज यह अधिक महगा पडने के कारण प्रयोग मे नही आते और सजावट के लिए Wall papers एव भाँति-भाँति के Curtain Design से अन्तर्गृहो को सजाया जाता है। इस प्रकार की आकार कल्पना मे साधारण ज्यामितिक आलेख्य, फूल पत्ती, उड़ती चिडियाँ, शङ्ख, दौडते जानवर, बादल आदि विशेष रूप से होते हैं। इनके अतिरिक्त अन्य जो भी उपयोगी वस्तु किसी कलाकार की समझ मे आए बनाई जा सकती है। रङ्ग लगाते समय भी इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि वे चटक न हो जाँय। रङ्ग योजना के लिए यहाँ सर्वानुपाती रङ्ग शैली (Neutral tints) को भी काम मे ला सकते है तथा जिस रङ्ग से कमरा पुता हुआ हो उसी रङ्ग को लेकर उसके विषम वर्ण आकार (Monochrome tints) बनाते चले जाँय इससे भित्ति आकार सौन्दर्य स्वाभाविक और रुचिकर हो जायगा। यदि हम केवल चटक रङ्ग ही लगायेगे तो वही दर्शक की आँखो मे आयगा और जो मुख्य वस्तु (सौन्दर्य) है वह दर्शक को न दीखेगी। चटक रङ्ग लगाकर दर्शक को अपनी और खीचना ही आकार कल्पना का उद्देश्य नही अपितु प्रधान रूप से उस स्थान या वातावरण को जिसे हम सजाते हैं सौन्दर्य पूर्ण अनुभूति कराना है। इस अनुभूति में हमे एक विशेष भाव का स्पष्टीकरण भी मिलेगा। (Interior Decoration आज तक होटल, चित्रपट गृह (Cinema halls) कलाभवन आदि के प्रसाधन के लिए प्रयुक्त होता है। इन स्थानो मे पैसे की कमी के कारण भाँति-भाँति के कागज का उपयोग होने लगा है। आवरण-पट आकार कल्पना (Curtain Designs) मे यह लिखना कि इस प्रकार की आकार कल्पना मे कुछ प्रमुख वस्तुएँ ही ली जा सकती हैं कलाकार को बाँधना होगा। वह अपनी स्वतन्त्र अभिव्यक्ति को न दिखा पायगा। वास्तव मे आवरण-पट आकारो मे किसी भी वस्तु का अङ्कन किया जा सकता है पर उसमे सातत्य (Continuity) होनी चाहिए। आधुनिक आवरण आकारो मे नीचे केवल मोटा किनारा देकर भी समाप्त कर देते हैं। नाचती हुई आकृतियाँ, जुड़ी हुई लताएँ, उड़ती तितलियाँ, पक्षी एव दौड़ते जानवरो का अङ्कन भी इसमे अनुचित न होगा। रङ्ग योजना मे भी पर्दे लगाने वाले की इच्छा प्रधान है। जैसा चाहे वैसा रग लगा सकते हैं। इसमे भी रङ्गों का उपयोग अधिक चटक नही होना चाहिये और कक्ष के रङ्ग के अनुसार होने पर ही सुन्दर दीखेगी। वैसे तो चटक रङ्ग के पर्दे भी प्रयोग मे लाए जाते हैं और वे केवल इसीलिए कि वे देर से मैले होते हैं। हमारा ध्येय वहाँ पर प्रत्येक वस्तु को कलात्मक रूप से लेने का है और इसी कारण हम इन पर्दों मे सर्वानुपाती रङ्ग योजना का प्रयोग करेगे तथा Monochrome एव Neutral tints की रङ्ग योजना भी उसी रङ्ग की बनायेंगे जो रङ्ग उस भवन मे अधिक प्रधान हो।

छत एव फर्श की आकार कल्पना भी इसी अन्तर्गृह-प्रसाधन-आकार-कल्पना मे आती है। यहाँ क्रमश: दोनो पर प्रकाश डालेगे। छत के आकार निर्माण मे प्राचीन काल मे बडी पच्चीकारी (सूक्ष्म) का काम किया जाता था। इसमे भाँति-भाँति के फूल पत्तियो के रूप अङ्कित होते थे। इनके साथ अनेक छोटे-छोटे जीवों के आकार यानि चिड़ियाँ और जानवरो के रूप अङ्कित होते थे। लोक प्रतीकात्मक आकारो का भी इनमें प्रयोग होता था। अनेक भावात्मक आकार (Abstract forms) का भी अङ्कन किया जाता था। बीच मे एक गोला और चारो ओर कोने बनाना भी अभिव्यक्ति की एक शैली रही है। कभी-कभी पूरी छत को एक ही तरह से भी अङ्कित कर देते हैं परन्तु यह आकार कल्पना आँखों को अधिक रुचिकर नही प्रतीत होती। इसमे भी हल्के रगो का उपयोग होना चाहिए। ऐसे रग हो जो शान्ति एव स्वास्थ्यप्रद हो।

फर्श की आकार कल्पना मे हमे, इससे पूर्व कि हम उसके आकार पर विचार करें, यह जान लेना आवश्यक होगा कि फर्श चौकोर पत्थर या चतुष्कोणात्मक वस्तुओ से बनाये जाते हैं। वे आकार उन चतुष्कोणात्मक पदार्थो पर ऐसे बने होने चाहिए कि उनकी अजस्रता (Continuity) अटूट हो। एक चतुष्कोण के बाद दूसरा चतुष्कोण पत्थर रखने पर ऐसे प्रतीत हो जैसे वह किसी भी आलेख को जोडता चला जा रहा हो, इस प्रकार के आकारों को हम Interlinking patterns कहते हैं जिसका अर्थ है परस्पर जुडे हुए। एक चतुष्कोण पर जो भी

आकार होगा वह इस प्रकार का बना हो जो दूसरे चतुष्कोण के पास रखने पर वही आकार आवृत्ति पाये। इन पत्थरो के रखने की युक्ति कला के विद्यार्थी को पहले ही अपने भीतर कल्पना द्वारा बैठा लेनी चाहिए तदनुसार अपने कार्य मे रत होना चाहिए। आजकल पत्थरो की अपेक्षा अनेक प्रकार के रगो के सीमेन्ट का प्रयोग होता है और उन्ही से रग बिरगे फर्श बनाये जाते हैं। प्राचीन मन्दिरो के फर्श श्वेत-श्याम पत्थरो के अधिक मिलते हैं। ताजमहल मे अनेक प्रकार के सगमरमर के ऊपर बने हुए Interlinkıng patterns मिलते है। यवन युग मे ये विशेष सुन्दर रूप मे पाये जाते हैं। यह लिखना अनुचित न होगा कि मुगल काल मे जितने अन्तर्गृह आलेखन हुए है वे अत्यन्त प्रशसनीय हैं—वे अनुपम है। अनेक प्रकार के वृक्ष, झरोखो के बीच-बीच मे पत्थरो के ऊपर अङ्कित पाये जाते हैं। फूल पत्तियों का उपयोग उनमे प्रमुख है।

ज्यामितिक आलेख इसमे अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं। उभयानुरूप और Simple Decoratıve भी ज्यामितिक पर ही आश्रित है। इसमे अधिक रग उपयोग मे नही लाये जा सकते और रग चटक भी नही होना चाहिए।

रंग योजना

आकार कल्पना चित्रकला का एक प्रधान अग है, जैसा कि अब तक स्पष्ट हो चुका है अनुभूतियों को अलकृत रूप मे रखना ही आकार कल्पना है। प्रत्येक वस्तु को यथार्थ और सुन्दर रूप मे रखने का नाम ही आकार कल्पना है। इसमे सौन्दर्य की तीव्र अनुभूति होती है और उसको ही अभिव्यक्ति देने का प्रयत्न कलाकार का रहता है। यह आकार कल्पना हमारी भीतरी भावना या कल्पना को जागृत करती है और किसी वस्तु के रूप का आनन्द नियमित सप्रयोजन और उपादेयता को ध्यान मे रख आकार कल्पना द्वारा ही होता है । आकार मे रंग योजना का सर्व प्रमुख स्थान है। आकार कल्पना के दोनों भागो—रेखा और रग—में यह दूसरी योजना, रंग योजना, भावो को स्पष्ट करने के लिए तथा आकार प्रभावशाली बनाने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। किसी वस्तु का रेखाओं द्वारा जब रूप अङ्कित किया जाता है तब उसके सही और सजीव स्वरूप की कल्पना बिना रग की सहायता के नही हो सकती। रंग ही वस्तु को हमारे अनुभव के योग्य बनाता है। केले का रूप यदि रेखाओ द्वारा बना दिया जाय तो हम उससे कदापि सन्तुष्ट नही होगे जब तक कि उसके आकार को काले पीले और हरे रगो से नही सजाते। चित्र मे दिये इन दोनो केले के फलो को देकर यह स्पष्ट हो गया कि पहले की अपेक्षा दूसरा फल अधिक स्वाभाविक बन गया है और यह स्वाभाविकता उसमे रंग ने भरी है।

रग योजना से कलाकार का वर्ण-ज्ञान तथा उसके आकार कल्पना के चरित्र एवं मनोविज्ञान का स्पष्टीकरण हो जाता है। रग से ही हम किसी की भली बुरी रुचि का निर्णय कर देते हैं । चरित्र की बहुत सी गूढ बातें रंगो से ही कलाकार स्पष्ट करता है। हमारे भारतीय साधु महात्मा गेरुआ रग किस लिए अधिक अच्छा मानते थे ? हमारे सम्पूर्ण सस्कार आदि कार्यों मे रोली, अक्षत, दही आदि का टीका क्यो लगाया जाता है ? पान का रंग ओठों पर क्यों अधिक श्रेष्ठ माना गया है ? इन सब बातो मे भारतीय रंग मनोविज्ञान छिपा है । लाल रोली या सिन्दूर से अनुराग या प्रेम की ओर संकेत होता है। गेरुआ से सात्विक भावो का स्पष्टीकरण होता है । ब्रह्म का दिव्य प्रकाश अरुण वर्ण है। उपनिषदो मे आकाश के ऊपर के लोकों का रग अरुण बताया गया है । इन सब रंगों से भारतीय जीवन के बाहरी और भीतरी रूप की अच्छी अभिव्यक्ति होती है । हमारा रग मनोविज्ञान अत्यन्त सुचारु रूप से स्पष्ट है। भारतीयो को किसी से इस विषय मे कुछ नही सीखना है।

भारतीय रग मनोविज्ञान का आधार प्रकृति है। हम आकाश के इन्द्र धनुष में अनेक रंग देखते हैं जिनमे से कुछ विरोधी प्रकृति के दीखते हैं। इसी पर आधुनिक विज्ञान खोज करके बता रहा है । प्रत्येक देश के कलाकारों ने इस इन्द्र धनुष और प्रकृति के अन्य रगो की योजना को ही लेकर अपने देश की परम्परागत रंग योजनाएँ बनाई हैं। यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि आधुनिक विज्ञान इन्हीं का अध्ययन प्रस्तुत कर रङ्गयोजना के विषय मे अपनी खोजें बता रहा है। प्रकृति के विशाल शरीर में हम देखते हैं कि विभिन्न रङ्ग इस विश्व के सौन्दर्य को बढाने के लिए ही हैं। नीले आकाश पर चमकते तारे, हरे गुलाब की झाडी की गोद मे लाल फूल; चन्द्रमा का उज्ज्वल शरीर और उसमें काला चिह्न; मनुष्य के गोरे-गोरे शरीर पर तिल; चितकबरे बकरे; भेड़; कुत्ते, बिल्लियाँ ये सब प्रकृति की रङ्ग योजना के रूप हैं। कवि और गायक भी चित्रकार की भांति इसी प्रकार प्रकृति की विराट् रङ्ग योजना को अपने गीतो मे गाते हैं।

सस्कृति के विकास के साथ-साथ रङ्ग योजना भी विकसित होती रहती है। मनुष्य आज क्या अनादि काल से रङ्ग योजना मे लीन दिखाई देता है उसे अपने रङ्गो को सस्कृति, सभ्यता के साथ विकास देने मे आनन्द आता है। बीसवी शताब्दी के आरम्भ से ही कलाकारो ने रङ्गो का उपयोग अधिक विकसित रूप मे करना शुरू किया। भारत मे विक्रम सम्वत् १ से लेकर छठी या सातवी शताब्दी तक चित्रकला-युग रहा है। इसी समय अजन्ता के सुन्दर चित्र बने। विभिन्न शैलियाँ चित्रकला के इतिहास मे जो दिखाई देती हैं वे इन्ही शताब्दियो मे विश्व मे सबसे समृद्ध दिखाई देती हैं।

इन सबके अध्ययन के अनन्तर हम इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि प्रकृति के विरोधी रङ्ग एक साथ रहने से अपना-अपना महत्व बताते हैं किन्तु विरोधी रङ्गो का विन्यास किस प्रकार करना चाहिये यही हमे समझना है।

कलाकार प्रत्येक देश की जलवायु के अनुसार रग योजना बनाते हैं जो रग जहाँ जिस जलवायु और धूप मे अच्छा लगता है, उसी को कला मे स्थान दिया जाता है। दक्षिण मे नीले, कत्थई, नारगी आदि रगो की साड़ियाँ इसलिए पहनी जाती है कि सूर्य के अधिक समीप होने के कारण इसका आकर्षण धूप मे अधिक बढ जाता है। पश्चिम में चटक रंग अधिक अपनाए जाते हैं। कालीन बनाने वाले, तथा केन्द्र की भित्तियो पर चटक रग की वर्ण योजना यही बताती है।

रगो का प्रयोग कला के विद्यार्थियो को सोच समझकर करना चाहिये। यह अनिवार्य नही कि विरोधी रंग ही ठीक लगें। उन्हे प्रत्येक रग का विन्यास उस रंग का सौन्दर्य बढाने के उद्देश्य से करना चाहिए। किस रंग के पास कौन सा रग सुन्दर लगेगा यह सब सोचकर रग का प्रयोग करना आवश्यक है। हमारे देश के विद्यार्थी रंग योजना में बहुत सी त्रुटियाँ इसीलिए करते हैं कि उन्हे रग योजना के प्रकार स्वय सोचकर या ठीक निर्देशन द्वारा नही मालूम होते। यह हमारा अनुभव है कि विद्यार्थी अधिकाश रूप से 'फूल' शब्द का उच्चारण करते ही लाल, पीले या गुलाबी रग को भर देते हैं अथवा आकार कल्पना में रग का नाम सुनते ही प्राकृतिक रंगों का ध्यान में कर रंग समवेतता (कोम्बीनेशन) का ध्यान नही रखते। इस समवेतता की उपादेयता भी नही सोचते। इसीलिए रंग की समन्वयात्मकता (कलर स्कीम आफ हारमोनी) की बात उनके विचार मे आती ही नही। रग योजना रगो की चटक मटक पर जिनका ध्यान अधिक रहता है वे उसमे रग समवेतता या अनुरूपता का भी अवश्य ध्यान रखें। इन्द्रधनुष का उदाहरण हमारे समक्ष है। इसमे रग अनुरूपता कितनी सुन्दर है, चटक रग भी हैं और वे इस ढग है कि भद्दे प्रतीत नही होते हैं। इन्द्रधनुषी रगो मे जिस प्रकार अनुरूपता पाई जाती है उसी प्रकार रग योजना मे भी कलाकारो को अनुरूपता का ध्यान रखना आवश्यक है। चटक-मटक रंग एक साथ भी आ सकते हैं यदि वे अनुरूपता मे आ जाय आचार्य ऑसवॉल तथा भारतीय प्राचीन रग योजना पद्धति, जो इन्द्र धनुष को ध्यान मे रख बनी है, के अनुसार मे आप रग समन्वयात्मकता और अनुरूपता दोनो पा लेंगे।

ऑल ओवर पैट्टर्न

(All Over Pattern)

आल ओवर पैट्टर्न अधिकतर देखने मे आते हैं। ये सर्वाधिक उपयोगी है। इनके विभिन्न प्रकार है किन्तु सिद्धान्त एक ही है। अत यह जान लेना आवश्यक होगा कि इनके प्रकार कौन-कौन से हैं ? ये किस कार्य मे आते हैं ? किन विशेष बातो का इनमे ध्यान रखना चाहिए ? इस प्रकार के आकारो मे आजस्रता (Continuity) विशेष रूप से होनी चाहिये। आज कल तथा कुछ प्राचीन आलेखो मे भी कुछ बूटो के आकार पृथक् स्थान छोड कर भी मिलते है। इससे यह समझा जाय कि ये all over patterns नही हैं। आकार कल्पना जैसा कि हम बता चुके है केवल जगह को भरने का नाम है। स्थान पूर्ति के लिए यह आवश्यक नही कि वह बेलबूटो तथा रगो से भरा जाय। केवल रिक्त स्थान बीच-बीच मे देकर भी आँखो को रोचक लगने के लिए बनाया जा सकता है।

उपर्युक्त आकार कल्पना साडियो, लिहाफो, जाजम के रूपो, बच्चो के फ्रॉक के कपडो, स्त्रियो के ब्लाउजो, वाल पेपर (wall paper) और कोट आदि बहुत से कपडो पर बन सकती हैं, परन्तु प्रत्येक आकार के लिए कुछ विशेष बाते ध्यान मे रखनी आवश्यक हैं। हम क्रमश उन्हे लेगे।

साडियो की किनारियो के विषय मे हम पहले बता चुके है कि उनके स्वरूप बनाने एव रग योजना मे किन-किन बातो का ध्यान रखना चाहिये। किनारी के आधार पर ही उसका all over pattern बनाना उचित होगा। रग योजना भी प्रत्येक कलाकार अपनी मनोवृत्ति के अनुसार बनायेगा और साडी खरीदने वालो की भी तरह-तरह की रुचियाँ होगी इस कारण कोई भी निश्चित सिद्धान्त इसके लिय नही।

लिहाफ के आकार भी all over patterns के अन्तर्गत आते है। लिहाफो के आकार सजाने मे कलाकार किसी भी रूप को अपने मन से ले सकता है, परन्तु रग लगाते समय यदि इस बात का ध्यान रखा जाय कि लिहाफ के आकार मे ऐसे रगो का उपयोग हो जो मैल खोरे हो, क्योकि लिहाफो का धुलना जल्दी से जल्दी असम्भव है। चाहे हम कितने ही खोल उन पर चढा कर रखे फिर भी तीन चार माह एक साथ प्रयोग करने से वे रग गन्दे हो ही जाते है। मैल-खोरे रगो से हमारा तात्पर्य गहरे रगो से है और अधिकतर गहरे रगो के लिहाफ आजकल के लोगो को पसन्द आते हैं।

जाजम के आकार अधिकतर Conventional form मे बनते हैं और इसके साथ-साथ रूप ऐसे होते है जिन्हे जुलाहे आसानी से बुन सके। अधिकाँश जाजमो के आकार इसी कारण बुनाई के आकारो से अधिक सम्बन्धित होते है। बुनाई के अन्तर्गत ज्यामितिक आलेख तथा कुछ थोडी सी सुन्दर आकृतियाँ जो बुनाई मे साधारण रूप मे आ सकती हैं, उपयोग मे लाई जा सकती है। हमारा ध्येय यहाँ बुनाई के सम्बन्ध मे बतलाना नही है इसलिए हम इसे अधिक विस्तार न देगे। स्त्रियो की दुसूती पर बनाने वाले आकार भी कुछ इसी प्रकार के होते है। चारो ओर से सीधे सीधे ताने आने पर एक रग का तागा कितनी बार दोहराया जाय और किस प्रकार कहाँ रोक दिया जाय जिससे वह आकार बन जाय यह एक दूसरी ही वस्तु है।

बच्चो के फ्रॉक की आकार कल्पना के विषय पर पर्याप्त लिखा जा चुका है। Selection of units और Contrast colour scheme वाले प्रसग मे इस विषय पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है, फिर भी यह ध्यान रखा जाय कि बच्चो के आकार all over patterns मे units फूल फल तथा प्रसाधनात्मक वस्तुओ के लिए जाये। रग असन्तुलनात्मक (contrast colour scheme) के लगाये जाये तो बहुत ही सुन्दर आकार होगा।

महिलाओ के ब्लाउज तथा बच्चो के फ्रॉक के कपडे दोनो अवस्थानुसार बदलते रहते है। ससार मे तृप्त मनुष्य चटक-मटक की बातो से विरक्ति पा लेता है। इसी कारण जैसे-जैसे स्त्रियो की अवस्था अधिक होती जाती है वे अधिकतर साधारण हल्के रग के ब्लाउज पहनती है, फिर भी अवस्थानुसार सरल विचारो वाली स्त्रियो को भी कुछ न कुछ प्रसाधनापूर्ण वस्त्र पहनने ही पडते है। इस कारण इसमे सभी प्रकार की रग योजनाओ का उपयोग करना चाहिए। जब तक विशेष रूप से यह न अवगत हो जाय कि किसके लिए आकार कल्पना (Design) बन रही है तब तक आकार कल्पना का निश्चित रूप नही दिया जा सकता। कपडे वाले की दुकान पर जाने पर दुकानदार ग्राहक की रुचि के अनुसार अनेक कपडे दिखाता है और उसकी यथार्थ रुचि जानने पर उसी के अनेक बाञ्छित कपडे के नमूनो के ढेर लगा देता है और अच्छा विक्रेता वही है जो ग्राहक की रुचि को शीघ्र पहचान ले। आकार कल्पना के कलाकार को भी इसी प्रकार रुचि की थाह लेना आवश्यक है। वह अपने आकारो को सर्व प्रिय बनायगा, दर्शको की रुचि का अनुसरण करेगा तो वह सफल आकार कर्त्ता माना जायेगा। भित्ति चित्र (वाल पेपर) और पर्दों के आकारो के विषय मे पीछे पर्याप्त लिखा जा चुका है। कोट कमीज आदि के आकार भी इसी All over patterns के अन्तर्गत है। इसी कारण इन पर प्रकाश डालना आवश्यक है। वैसे इनके आकार बनाने मे कोई खास बात नही है। अधिकतर मनुष्य धारियो वाले कपडे या हल्के सफेद रगो के कपडे पहनने के अभ्यासी होते है। वे ही धारियो वाले कपडे जाडो में चटक ऊनी कपडो मे भी दीखते हैं आजकल तो नवीन यन्त्रो के कारण अनेक रूपो वाले कपडे बनाये जाते है और पहने जाते है, केवल मुगल काल मे मनुष्य समाज मे जो वस्त्र प्रचलित थे उन पर विशेष प्रसाधन सामग्री देखने को मिलती है। काढी हुई जरीदार वास्कटे, कोट, टोपियाँ उस समय की मिलती है। आल ओवर पैटर्नस में कुर्सियो के कपडे भी आ जाते है।

काढ़ने बुनने के लिए आकार कल्पना

(Textile Designs)

कुछ नवीन आकार कल्पना के विषय मे अब यहाँ दो चार पक्तियाँ बतानी आवश्यक हैं। नवीन आकार कल्पना के विवेचन से हमारा अभिप्राय उन आधार मूल तत्वो का स्पष्टीकरण करना है, जिनके अन्तर्गत काढ़ना, बुनना आदि के आकार आते है। ये भी आकार कल्पना के ही रूप है। सामान्य सिद्धान्त आकार कल्पना के पहले ही पर्याप्त स्पष्ट हो गये हैं, उनके विषय मे पिष्टपेषण करना अब उचित नही प्रतीत होता। फिर भी इतना कहना आवश्यक है कि आकार कल्पना मे विशेष-लक्ष्य समय और किसी वस्तु की उपयोगिता को ध्यान मे रख उसका स्वरूप स्पष्ट करने का होता है। काढने, बुनने आदि के आकारो के आधारभूत तत्व सस्कृत के विकास की सुदीर्घ परम्पराएँ है, इनमे विभिन्न समयो के अनुसार घटित होती हुई सस्कृति इनके अनेक रूपो का कारण होती है। प्राचीन काल से ही काढने बुनने की कला का विकास उस समय हुआ जबकि नारी समाज अपनी कोमलता के सौन्दर्य भार से दबा होने के कारण जीवन क्षेत्र मे अवकाश के क्षणो का सदुपयोग कठोर परिश्रम की अपेक्षा सरल श्रम—काढने बुनने से करता रहा। यहाँ हमारा तात्पर्य यह नही कि काढने बुनने के आकारो को बताकर विद्यार्थियो को काढना बुनना सिखाएँ। हमे तो केवल आकार कल्पना के विभिन्न भेदो में आने वाले इन काढने बुनने के आकारो से विद्यार्थियो को परिचित कराना है। काढना बुनना भी एक कला है उसमे भी सौन्दर्य चिन्तना के क्षण केन्द्रित हैं। उससे भी हम किसी वस्तु को सजा सकते है। काढने बुनने के आकार कैसे बनते है यह विद्यार्थी सीख जाय। काढने बुनने मे तागो का प्रयोग किस प्रकार सुन्दर लग सकता है इस बात को ध्यान में रख हमे उनके नियमो का ज्ञान कराना आवश्यक है। कलाकार को यद्यपि नियमो मे बाधा नही जा सकता, फिर भी कलाकार को काढने बुनने की कला सम्बन्धी सभी बातो के नियमो को मानना पडेगा। काढने बुनने का आकार ऐसा न हो जो कि तागो से बनाया जा सके। कई बार ऐसा होता है कि कलाकार आकार तो बना देता है परन्तु तागो से उसे बनाने मे बड़ी कठिनाई होती है। कभी-कभी तागो से वह आकार काढा भी नही जाता। इसलिए कलाकार को जहाँ अपनी कल्पना की उच्चता का गौरव हो वही उसे काढने वाले की असमर्थता पर भी सोचना चाहिए। काढ़ने वाला कलाकार के साथ समान गति पाये, उसमे सौन्दर्य पूर्णत झलक उठे यह विचार कर ही आकार कल्पना करनी चाहिए। आज के मशीन युग मे मशीनो से बनने वाले आकारो के निर्माण मे विशेषत इन बातों का ध्यान रखना होता है कि मशीन से बनने वाले आकार में समय उपयोगिता और उस आकार के विक्रय के लिए बाजार है या हो सकेगा कि नही तभी उस आकार को आलेख्य-विषय बनाना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि किसी गोल फूल को कढ़ाई और बुनाई की आकार कल्पना मे देदे तो हमें देखना होगा कि उसमे कितना समय लगता है, कितना व्यय होता है और उससे लाभ कितना हो सकता है। मशीन से बनने वाले आकारो मे प्राय. सीधे तागे पडते है अथवा प्रतिरूपात्मकता मे हाथ से बनाये जाने वाले आकारो मे ये सब कठिनाइयाँ इतनी नही होती अत. मशीन के आकारो मे तागो का उपयोग विशेष प्रेक्षणीय होता है। रङ्ग आदि की योजना मे भी इन आकारो मे व्यय, समय और परिश्रम की अनेक कठिनाइयो का विचार होता है। तात्पर्य यह है कि आकार कर्त्ता के लिए इन सभी बातो का ध्यान रखना नितान्त आवश्यक है।

बुनने, काढने तथा मशीन से बनाये जाने वाले आकारो मे आकार कर्त्ता को कपडे की चौडाई-लम्बाई का ध्यान रखना पडता है। आकार कल्पना के समय इन सभी से आकार कल्पना के अगो की सुन्दर पूर्ति का ध्यान रखना विशेष महत्वपूर्ण है। सर्वांगीण सौन्दर्य उसके भीतर होना चाहिए जितना छोटा आकार होगा उतनी ही उसमे उलझन होती है और कपडे मे कोमलतापूर्ण समता नही आ सकती है। कपडे की कोमलता के साथ-साथ आकार मे भी कोमलता आनी आवश्यक है, यह न हो कि कपडा तो कोमल चिकना या गुद्गुदा हो और आकार उसमे कटुता या कठोरता ले आये। काढने बुनने वाले आकारो मे उन कपडो के साथ जिन पर वे बने है अनुकूलता अथवा समन्वयात्मकता होनी चाहिए न कि प्रतिकूलता अथवा वैषम्य।

काढने बुनने के आकारो के अतिरिक्त कपडे पर छापे जाने वाले आकारो के विषय मे भी कुछ शब्द कहने यहाँ प्रसगवश उचित ही होगे। कलाकार को छपाई के आकारो को जानना भी आवश्यक है। आज के युग मे छपाई के बडे-बडे साधन हो गये है। यत्रो से बने नये-नये छापे के आकार देखने मे आते है। आज लकडी, ताँबे, जस्त आदि पर आकार बनाकर मशीनो द्वारा छापने का काम होता है इन्हे छापने के अनेक रूप और नाम है। प्राचीन काल मे हमारे यहाँ छापने का कार्य केवल ठप्पे द्वारा ही होता था, जो लकडी पर खोद कर बनाया जाता था। आलू सलजम आदि के ऊपर बच्चो के खेल के ठप्पे भी इसी के रूप है। इन सब छापने के आकारो मे रिक्त स्थान अधिक न हो, जोड ठीक हो, उसकी अजस्रता (Continuity) नष्ट न हो और उसका स्वरूप भी भाव-प्रवाहात्मक हो। इन सभी बातो का छपाई की आकार कल्पना मे ध्यान रखना चाहिए। छपे हुये आकार भी कढाई-बुनाई के आकारो की भाँति अच्छा भाव प्रकाशन देते हैं। यदि उनमे रग और रूप ठीक हो तो यह कार्य अधिक व्यय साध्य नही। थोडे ही कार्य मे यह हो जाता है। फर्रुखाबादी जाजमे लिहाफ के पल्ले इसके सुन्दर उदाहरण है कि कितने कम खर्चे मे कितने सुन्दर आकार मिल जाते है। यही कारण है कि फर्रुखाबाद के छपे वस्त्र विदेशो तक मे जाते है। इस मशीन युग मे सस्ते व्यय मे सुन्दर कार्य हो तो क्या हानि है।

टेक्सटाइल डिजाइन (Textile Designs)

प्रतिदिन हमारे व्यवहार मे आने वाले वस्त्रो के रूपो का निर्माण इस बुनाई वाली आकार कल्पना मे आता है। हम अपने प्रयोग के वस्त्रो के सुन्दर-सुन्दर आकार देखना चाहते है इसी कारण उनके आकार-सौन्दर्य के प्रति हमारी सहज जिज्ञासा उत्पन्न हो जाती है कि वे किस प्रकार सुन्दर बनाये जा सकते है।

किसी भी प्रकार की प्रयोगात्मक शिक्षण की इसके लिए आवश्यकता नही और न इसके लिए किसी को जन्म से ही कलाकार होने की ही आवश्यकता है; अपितु इसमे भावात्मकता एव प्रयोगात्मकता दोनो की आवश्यकता है, अर्थात् सौन्दर्य बोध की प्रवृत्ति की। इन दोनो के साथ ही किसी भी बुनाई से बनने वाले आकार कल्पना का प्रयोजन और रीति भी जानना आवश्यक है। ऐसी आकार कल्पना एक ओर तो कलात्मकता अर्थात् हाथ की सफाई, मस्तिष्क, भाव एव रीति-नीति का बोध कराती है; दूसरी ओर उसका प्रयोजन तथा प्रयोग-शैली भी आकार कर्त्ता के लिए ज्ञातव्य है। इस आकार कल्पना मे सौन्दर्य पूर्ण अंशो का विचार और उनका पारस्परिक सम्बन्ध रंग तथा आधार यानी जिस पर आकार बनाया जाय, उसका ज्ञान तथा उसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी आकार कर्त्ता को पूर्ण रूप से समझना चाहिए। मशीन पर बनाने योग्य आकार के लिए आकार कर्त्ता को प्रयत्न करना चाहिए। कलाकार अपने रग और आकारो को घटा बढा सकेगा परन्तु मशीन जडवस्तु है उसमे एक बार स्थिर किया आकार पत्थर की लकीर है। इस प्रकार के आकार कर्त्ता को मशीन द्वारा बनाये जा सकने योग्य आकार ही प्रस्तुत करने चाहिए न कि असम्भव आकार जिन्हें मशीन प्रयोग मे नही ला सकती।

इस प्रकार के आकार कर्त्ता के लिए आकार कल्पना मे बहुत अनुभव, विशेष अध्ययन, कल्पना शक्ति,

कला की स्वतन्त्र उद्भावना तथा सास्कृतिक दृष्टिकोण का पूर्ण ज्ञान आवश्यक है। केवल अच्छे भावात्मक चित्रो के कुशल कलाकार बुनाई के आकारो को कुशलता से चित्रित नही कर सकते, इसके अपवाद (Exceptions) है बुनने के आकारो के अकन मे कलाकार को तीव्र भावानुभूति तथा दैनिक जीवन और जगत् के क्षण-क्षण परिवर्तन का ज्ञान भी अनिवार्य है। सभा जगत्, प्रकृतिगत और मानव मनोजगत सम्बन्धी ज्ञान ऐसे आकारो के निर्माण में बडा उपयोगी है। एक ही वस्तु को बार-बार दुहराने वाला कलाकार, नवीनताहीन साधक, जीवन की नवीन भावानुभूतियो की सुन्दरता न जानने वाला कलाकार सजीव आकारो की उद्भावना नही दे सकता। क्षण-क्षण में नवीन रूप मे आने वाली सुन्दरता ही कला है, और आकार कर्त्ता को इस नव सौन्दर्य का ज्ञान परम आवश्यक है। चाहे वह साहित्य सगीत चित्र, मूर्ति, नृत्य, कुछ भी हो सब मे नवीनता होनी आवश्यक है। नवीन सौन्दर्य की उद्भावना करने वाला कला साधक अमर है। प्राचीन काल के कलाकार इसीलिए आज भी चिर प्रेरणामय है क्योकि उन्होने सौन्दर्य पूर्ण आकार कल्पनाएँ त्रिकाल सौन्दर्य से भरी है। उनके आकारो का सौन्दर्य चिर सुन्दर है, शाश्वत् है।

नवीन आकारों के लिए मूलाधार (Sources of new designs)

इन सब आकारो के निर्माण ज्ञान के अनन्तर अब हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि आकारो की कल्पना की कोई निश्चित सीमा नही। प्रत्येक युग समाज और व्यक्ति की आकारो की उद्भावनाये तत्-तत्, युग, समाज और व्यक्ति की अपनी प्रेरणाओ से हुई और इस प्रकार प्रागैतिहासिक काल से लेकर आज तक आकार कल्पना के मूल सिद्धान्तो की सीमा या उनके निश्चित रूप अब तक अन्त नही पा सके। विकासवाद के सिद्धान्त के अनुसार विश्व के प्रत्येक अस्तित्व का विकास स्वत. होता चला जाता है, किसी भी पदार्थ या वस्तु का त्रैकालिक सिद्धान्त अटल नही प्रकृति, समाज, व्यक्ति आदि विकास के साथ-साथ राजनीति, धर्म सभ्यता जैसी सूक्ष्म वस्तुएँ एव साहित्य कला आदि भी विकासोन्मुखी रहती हैं। यह विकास परिवर्तन, परिवर्द्धन और नाश आदि कई नामो से अभिहित है। भाषा सस्कृति कला साहित्य से सभी रहस्यात्मक प्रभाव से तथा प्रकट प्रभावो से निरन्तर विकसित होते रहते है। परिवर्तन ही विकास का दूसरा नाम है। आकार कल्पना के सिद्धान्त तथा उसके स्वरूप भी निरन्तर विकासोन्मुखी है। इनकी इयत्ता (limit) कुछ निश्चित नही। आकार-कल्पना-शास्त्र भी इसलिए अनन्त है।

आकार कर्त्ता के लिए नवीन स्वतन्त्र उद्भावनाएँ सबसे बडी ईश्वरीय देन हैं। इस नवीन स्वतन्त्र उद्भावना मे आकार-कर्त्ता को मौलिक विकास, कल्पना शक्ति एव व्यक्तिगत तीव्र प्रेरणाओ की प्रभावशालिनी अभिव्यक्ति (Expression) की आवश्यकताएँ हैं। इनके बिना आकार कर्त्ता कभी अपना महत्वपूर्ण पद नही पा सकता। इन्ही से वह भविष्य के लिए युगप्रवर्तक का कार्य कर्त्ता है, और प्रत्येक प्रकार की नवीन कला विकास की दिशाओ का भी वही निर्देशन करता है और सामयिक कला का, रीति-नीति का नेतृत्व भी वह भली-भाँति कर सकता है। यह माना कि कला के क्षेत्र मे अनन्तता है, फिर भी कुछ निश्चित सिद्धान्तो से ही वह आगे बढ सकेगा। उसे अपने विकास काल मे सिद्धान्तो तथा नियमो से सहायता अवश्य लेनी होगी। तभी कला के अभिभावक दर्शक तथा प्रेमी उसकी कला के प्रति आकृष्ट होगे।

एक कलाकार का उत्तरदायित्व आकार कल्पना मे यह भी है कि वह अपनी कला की आकार कल्पना की साधना मे नवीन एवम् प्राचीन सभी का समन्वय कर असम्भावित सौन्दर्य को अपनी कल्पना मे साक्षात्कार करदे। अप्रत्यक्ष अप्रत्याशित (unexpected) आधारो द्वारा वह किसी भी गुप्त सौन्दर्य को अथवा विचार को अभिव्यक्ति देदे। जिस प्रकार शिल्पी अपनी कल्पना के आधार का रूप स्पष्ट कर देता है और उसी प्रकार आकार कर्त्ता भी अप्रत्यक्ष तथा सम्भाव्य आकार को अपनी कुशलता से प्रत्यक्ष कर देता है।

सक्षेप मे हम यहाँ स्पष्ट कर देना आवश्यक समझते है कि अन्त आकारो को हम मुख्यत तीन भागो मे बाँट सकते है। पहले प्रकार के आकार प्राकृतिक है, जो प्रकृति देवी द्वारा स्वत बनाये गये हैं। फूल, पत्ती, जानवर, मछली, शख, सीपियाँ, कीडे मकोडे आदि मे हम प्रकृति की कला का सौन्दर्य निखार पाते है। कलाकार इन पदार्थों को कभी-कभी प्राकृतिक रूप मे तो नही रखता, वह उन्हे अपनी इच्छानुसार रूप मे ढाल देता है, मलाधार उनका वैसा ही रहता है।

दूसरे प्रकार के आकार मनुष्यकृत है जिन्हे मनुष्यो ने अपनी आवश्यकता तथा परिस्थितियो के अनुकूल आत्मतुष्टि के लिए बनाया है। देश काल की परिस्थितियाँ भी इनमे कारण है। वे आकार बर्तन, कपडे, मकान तथा अन्य दैनिक जीवन मे उपयोग मे आने वाली वस्तुओ के है। समय और परिस्थितियो मे पडे हुए मानव समाज ने ये बनाये।

तीसरे प्रकार के आकार ज्यामितिक एव किसी विशेष निगूढ की अभिव्यक्ति के लिए हम भारत मे ही पाते है। इनमे मनुष्य और प्रकृति दोनो के प्रभाव लक्षित होते है। अर्थात् कुछ मानव बुद्धि का कौशल इनमे दीखता है और कुछ प्रकृति का।

इस प्रकार आकार कल्पना का क्षेत्र बहुत बडा और अज्ञेय हे, परन्तु कच्चे कलाकार के लिए वह हस्तामलकवत् है।

अल्पना आलेख्य

अल्पना

आलेखन के विभिन्न भागो मे अल्पना भी एक भाग है, जिसे बगाल मे अधिकाँशत. पाते है। मनुष्य का हृदय अपनी अनुभूतियो की निश्चित सीमाएँ नही रखता है, इस असीम भाव अनुभूति के ही रूप अनेक धार्मिक क्रियाओ सम्बन्धी आलेख हैं और अनेक रीतियाँ भी इन्ही का अनन्त प्रकाशन है। इनमे अल्पना भी एक सजीव आलेख्य प्रतीक है जो कि देवताओ, पर्वो और अन्य धार्मिक उत्सवो के भाव प्रकाशन के लिए प्रयुक्त होता है। सस्कृत के आलिम्बना शब्द का बोधक है जिसका अर्थ मूलत कलात्मक रूप से किसी भी भाव को प्रारम्भ करना है आपूर्वक लिम्प धातु से यह शब्द बना है जिसका मूलार्थ अगुलियो द्वारा किसी वस्तु को लोपना है । इसी का सक्षिप्त सज्ञात्मक रूप अल्पना बगाल मे है। कल्पना, जल्पना के समकक्ष ही यह अल्पना शब्द है।

अल्पना नामक आलेख्य वैसे तो सम्पूर्ण भारत मे सभी समुद्रतटान्तवर्ती सीमाओ मे पाये जाते है। परन्तु बगाल मे इसका विशेष प्रचलन है। जैसे-जैसे हम समुद्रतट से अन्तर्भाग की ओर के भू-क्षेत्र मे बढते है वैसे ही वैसे इसके प्रति रुचि लोगो की कम पाते है। अल्पना प्राचीन हिन्दुओ के धार्मिक जीवन का द्योतक है। वैसे तो हमारे इतने लम्बे चौडे देश मे ईसाई मुसलमान आदि कई सस्कृतियो के लोग रहते हैं परन्तु अल्पना विशेषत हिन्दू सस्कृति मे ही पाया जाता है। हमारे यहाँ पर्व और उत्सव प्राक् काल मे ऋतु परिवर्तन के समय ही मनाये जाते थे धीरे-धीरे इनमे विशेष परिवर्तन होते गये और इनकी आज रूपरेखाएँ प्राचीन न रह गई, इनमे अब नवीन विशेषताएँ परिस्थितिवश आती गई और इसीलिए आज के पर्व उत्सव कुछ परिवर्तित रूप मे हैं यद्यपि मूलत वे पुराने ही है। अल्पना के कई भाग है परन्तु मुख्यत हम उन्हे दो भागो मे बाँटते है, एक तो वे जो धर्म सम्प्रदाय सम्बन्धी है और दूसरे वे हैं जो सजावट के लिए बनाए जाते है। इन अल्पना आलेख्यो मे कुछ भावचित्र होते हैं जिनके भीतर कुछ कथाएँ समझाई जाती हैं। इन अल्पना आलेख्यो मे मननकूल परिवर्तन हो सकते हैं कोई एक रूढिगत रूप इनका नही परन्तु इस बात का भी ध्यान रहे कि कल्पना की स्वतन्त्रता होने पर भी अल्पना आलेख्य का मूल रूप अवश्य झलके।

ये अल्पना आलेख्य अधिकाश स्त्री समाज मे प्रचलित है। इसलिए अल्पना कुटुम्ब कला के भीतर समाविष्ट हो जाती है। ये अल्पना आलेख्य किसी पाठशाला मे नही सिखाये जाते अपितु माता अपनी बेटी को सिखाती है बेटी अपनी बेटी को सिखाती है और इन अल्पना आलेख्यो की परम्परा हमारे स्त्री समाज मे चली आ रही है। अल्पना आलेख्यो का प्रादुर्भाव हमारे नारी वर्ग की कल्पना से हुआ, जिनमे उनके धार्मिक भावो का प्रकाशन है पर्वो के समय परिवारो मे स्त्रियाँ एक मधुर भावना को ले अपने बच्चो के साथ बैठ जाती है और वे हर्ष से अपने हाथो एव उगलियों से चावल और हल्दी का ऐपन लेकर बनाती हैं। अधिकतर ये आँगनो मे दरवाजो के सामने पूरी भूमि पर बनाये जाते है। सयुक्त प्रान्त मे भूमि को गोबर से लीपकर उसपर इसे बनाते है। उँगलियो से ही वे ब्रुश का काम लेती है। धार्मिक मनोवृत्ति के लोग तो ऐसा करते हैं परन्तु जो लोग सजावट के लिए बनाते हैं वे गेरु, पीली मिट्टी, नील, काला कोयला और सफेद खडिया का भी प्रयोग इसमे करते है। फूल पत्ते टहनी बेलें भी बनाते है, परन्तु जो लोग धार्मिक प्रवृत्ति वाले है वे वृत्ताकार ही

बनाते है । वृत्ताकार अल्पनाएँ भी कई प्रकार की होती है और इनमे भेद भेदान्तर पर्व या उत्सव के अनुसार हो जाते है उदाहरणार्थ जैसे नामकरण सस्कार अथवा वर-वधू के विवाह के समय बनाने वाले आकारो मे नारायणी भावना का प्राधान्य होता है । अर्थात् वर-वधू लक्ष्मी और नारायण माने जाते है। और उनके बैठने के पटले पर कमल की भाँति वर्तुलाकार कल्पनाएँ बनाई जाती है । इन कल्पनाओ मे नारी हृदय का उल्लास हर्ष और न जाने कितनी मधुर भावनाएँ प्रकट होती है। ये सभी आकार नारी की मधुर कोमल आत्मा मे प्रतिष्ठ रहते है और माधुर्य भाव से सम्पन्न होकर किसी सुन्दर उत्कर्ष को ले प्रकट होते है। ये अल्पना आलेख्य किसी आचार शास्त्र का प्रतिपादन या शिक्षण कराने के लिए नही बनाये जाते अपितु इनमे नारी हृदय के मधुर करुण कोमल भाव-जगत् का ही प्रकाशन है। धार्मिक महत्व की दृष्टि से इनमे आधिदैविक जगत् सम्बन्धी क्या भावना स्पष्ट होती है इसके लिए हम कुछ नही कह सकते परन्तु कला के दृष्टिकोण से इनमे एक विशेष माधुर्य पूर्ण सौन्दर्य की अभिव्यक्ति अवश्य होती है। इन अल्पनाओ मे हमारे जाने पहचाने फूल पत्ते भी नये-नये रूपा मे आते हे और एक ही कमल को हम अनेक जोड तोड मोड मे पाते है। एक ही कमल हर बार नया रूप उनकी अल्पनाओ मे आता है। ये वृत्त भी परम्परागत होते हुए भी नये-नये रूपो मे हमारे समक्ष है। यही कारण हैं कि उनमे अनुकरणात्मकता तो नही होती परन्तु मूलभावना मे उनके अन्तर नही होता भले ही बगाल, यू० पी०, गुजरात आदि विभिन्न प्रान्तो मे विभिन्न रूपा मे हो ।

ये अल्पनाएँ अनेक प्रान्तो मे अनेक रूपो मे पाई जाती हैं । इनका परिगणन यदि किया जाय तो ये सैकडो की सख्या मे मिलेगे। इन वृत्तो का विवरण करना कठिन है फिर भी कुछ विशेष वृत्तो का उल्लेख करना आवश्यक है तथा उनके उद्देश्यो पर भी प्रकाश डालना अनुपयुक्त न होगा।

१—जीवन-वृत्त

उपनिषदो मे वृत्तो को जीवन कहा गया है, ये शक्ति प्राप्ति के लिए प्रयुक्त होते है। इन्हे जीवन वृत्त या प्राणवृत्त भी कहते हैं। इनमे अग्नि देव की भावना या सूर्य देव की भावना ली जाती है, क्योकि सूर्य और अग्नि दोनो जीवन शक्ति के है। वर्षा वृत्त, वायु वृत्त भी इनमे होते है। पृथ्वी, जल, तेज वायु आकाश भी कल्पना से जीवन के प्रति इनका एक दृष्टिकोण होता है। इनका ध्येय जीवन की नित्यता या शाश्वतता बताना है। जीवन, शक्ति सद्बुद्धि और सुख की प्राप्ति भी इनके निर्माण का ध्येय है। वेदोपनिषद् के मत्र बहुत से प्राण प्रतिष्ठा के समय जो गाये जाते है, उनका अभिप्राय जीवन की शाश्वतता को ही बताना है । कला मे हम यही शाश्वतता पाते है, वह जीवन से जीवन की ओर और जीवन के लिए है।

२—लक्ष्मी वृत्त

इसमे सम्पत्ति और ऋद्धि के देवता लक्ष्मी की भावना होती है । दीपावली महोत्सव के समय इसे बनाया जाता है। कमल और बेले लक्ष्मी जी के चरणो मे लहराती हैं। स्तम्भ और महल की छत को थामे रहते हैं। जहाँ चावल, गेहूँ आदि की फसलें रखी जाती हैं। लक्ष्मी के सभी आभूषण वहाँ बनाये जाते हैं। ये सभी प्रतीक लक्ष्मी पूजा के है। लक्ष्मी पूजा की कथा भी इससे स्पष्ट होती है । इस अल्पना वृत्त मे एक कथा कही जाती है कि एक बार एक राजा की दानशीलता और प्रजा वत्सलता इतनी बढी कि वह जो कला सम्बन्धी सामान बाजार मे कही न बिके राजा स्वय उसे दाम चुकाकर खरीद लेते थे। एक बार एक कलाकार ने सभी देवताओ की मूर्तियो के बनाने के पश्चात् लोहे की अलक्ष्मी की मूर्ति भी बनाई। बाजार मे ले गया। उसे बेचने पर उसे किसी ने नही खरीदा क्योकि जिसके यहाँ यह वह लौह मूर्ति रहती उसे दरिद्रता सदा घेरे रहती थी। अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार राजा ने उसे खरीद लिया। राजा उसे जब घर मे रखने लगे तो राज लक्ष्मी क्रुद्ध हो वहाँ से अलक्षित हो गई, उसी के साथ अन्य ऋद्धिया भी राजा के यहाँ से लुप्त होने लगीं। अन्त मे सत्य धर्म भी जाने लगा तो राजा ने

उसे पकड लिया और कहा कि तुम्हारे ही कारण तो यह सब हुआ, सत्य धर्म रुक गया। पुनः रानी ने लक्ष्मी देवी की प्रार्थना की और यही अल्पना बनाकर पूजा की, लौह मूर्ति वाली अलक्ष्मी से भी प्रार्थना की कि वह अन्यत्र कही चली जाय। रानी की प्रार्थना स्वीकृत हुई और लक्ष्मी प्रसन्न हो वहाँ रहने लगी। इस कथा का इतिहास इस लक्ष्मी वृत्त मे है। सयुक्त प्रान्त मे इसे गोवर्द्धन पूजा भी कहते हैं।

३—तोषला वृत्त

इसका निर्माण भूमि की उपजवृद्धि के निमित्त होता है। शिशिर ऋतु मे हिमपात के त्रास से फसलो के बचाने के लिए यह मनाया जाता है जबकि आकाश के प्रागण में क्षितिज मे पीले रङ्ग का प्रसार होता है। एक महीने तक इसकी विधि मनाई जाती है। खेतो के स्वामी अपने खेतो को फूलो से सजे-धजे जाते हैं। सूर्योदय से पूर्व ये लोग मिट्टी के दीपक शिरो पर रखे मासान्त मे नदी के किनारे ले जाते है फिर दीपदान नदी को करके वापिस आते है। इधर स्त्रियाँ नदी तट पर ताम्बे जैसे लाल वस्त्र पहने तथा पीले उत्तरीय धारण कर प्रार्थना करती हैं। इनके बाल बिखरे दिखाई देते हैं। सूर्य देव की अरुण रश्मिया इनके मुखो को उद्दीप्त करती है। ये प्रार्थनाएँ सूर्य की स्तुति मे होती है। इस स्तुति मे स्त्रियाँ सौभाग्य समृद्धि ऋद्धि सिद्धियाँ तथा कुटुम्ब परिवार के एव राजा प्रजा के सर्वतोमुखी कल्याण की कामना करती हैं।

इनके अतिरिक्त और भी कई वृत्त है जो कि ऋतुओ से सम्बन्धित न होकर दैनिक जीवन से सम्बन्धित होते हैं। इनका ग्रन्थ विस्तार की आशका से वर्णन अब उचित नही केवल नाम मात्र से उन्हे परिलक्षित कर देना चाहते है—

४—माघ मण्डल वृत्त

सूर्य की पूजा के निमित्त शिशिर के कड़ाके के जाडे मे मनाया जाता है।

५—असत्यपत वृत्त

यह पीपल के वृक्ष की पूजा मे मनाया जाता है।

६—वसुधारा वृत्त

यह वर्षा के निमित्त बनाया जाता है।

७—सहयुति वृत्त

यह दीपक-पूजन का एक विधान है जो सायकाल दीपक जलने के पूर्व प्रारम्भ होता है एक छोटी सी दीपक की लौ की पूजा मे तथा जसमाहन को फूलो का धूप दिया जाता है। सध्या की पूजा मे स्तुतियाँ भी सुन्दर गाई जाती हैं। लगभग ४० प्रकार की अल्पना यहाँ इस विधान में आती है। गन्धाक्षत जल फूलो से इनकी पूजा होती है।

८—हरिचरण वृत्त

वैशाख के प्रारम्भिक दिन से यह पूजन होता है। छोटी बालिकाएँ एक ताँबे की तश्तरी मे सन्दल की लकडी से हरि भगवान के चरणचिह्न बनाती हैं। उनके ऊपर पूजनो पचार करते अनेक इस विषय के गीत गाती हुई सर्व कल्याण कामना करती है।

९—आधार सिंहासन वृत्त

यह वृत्त एक अनुपम अद्वितीय सुन्दरी स्त्री को काष्ठ पीठ पर बैठा कर काम पूजा के निमित्त बनाया जाता है। अनेक काम पूजा सम्बन्धी भावनाओ से इसे मनाया जाता है।

विश्व भारती (शान्ति निकेतन) मे अब इन कल्पनाओ के आलेख्य शिक्षण के लिए विशेष रूप से प्रबन्ध है, स्वर्गीय सुकुमारी देवी ने अपनी छात्रा और छात्रो को इस प्रकार की अल्पनाओ को यहा केवल सिखाया ही नही अपितु कुछ नवीन रूप भी इन्हे दिया। शान्ति निकेतन मे इस परम्परा को आज कल बहन गोरा देवी चला रही हैं। स्त्रियाँ ही इन मे विशेष भाग लेती है पुरुष नही।

आकार कल्पना के विस्तृत विवरण मे हम पूर्व ही स्पष्ट कर चुके है कि रेखा योजना और रग योजना भेद से आकार कल्पना मुख्यत दो प्रकार की होती है। अल्पना मे केवल देवताओ, ऋतुओ पर ही मानव भावनाएँ केन्द्रित होती है। इसी कारण हम कमल के अनेक रूपो अनेक लता, पुष्प, फल और पशुओ मोर, गाय, कौवा, तोता, हस आदि का सरलतया आलेखन करते है, देवताओ के रूप तथा अनेक शृङ्गार सम्बन्धी सामग्री का भी अङ्कन करते है। देवताओ और देवियो के शृङ्गार की सामग्री भी इनमे अङ्कन करते है। जैसे कजर बठ्ठू शीश, बिन्दी, सिन्दूर, चारपाई, पीढा कलश, श्रीफल आदि आदि किसी देवता का शास्त्र भी इसमे आता है। लक्ष्मी जी के चरणो का अङ्कन भी किया जाता है। इनमे सभी देशकाल और वातावरणो की विशेषताए झलकती हैं। जोकि धार्मिक भावना को आकर्षक बनाती हैं।

कला के दृष्टिकोण से यद्यपि इन मे वे सभी विस्तृत लावण्य योजनाए नही होती तथापि ग्रामीण कला का सौन्दर्य तो इन मे बिखरा रहता है। इनके अन्तर्जगत् के सौदर्य को समझना भी आज कठिन है। रङ्गो का विधान इनमें अधिक नही होता। इन अल्पनाओ के आकारो का अनुकरण नही होता। ये स्वेच्छा से ही बनाये जाते है। शनै. शनै. ये विकसित होते रहते हैं।

अल्पना सम्बन्धित आकार विवरण

१०—अवृदन्य वृत्त

यह एक प्रकार का कमलाकार वृत्त होता है, जिसके आठ दल होते है। ये अधिकाश शुभ-मङ्गल अवसरो पर बनाये जाते है। ये द्वारो के सामने, आँगन मे कमरे मे जहाँ कही भी पूजा निश्चित हो वही बनाये जाते है। प्राय ये दो वृत्त ही बनते है। विवाह मे दो वर वधुओ को बैठाने के लिए बनते है। नाम करण आदि सस्कारो मे एक ही बनता है। कभी कभी पूजा के स्थान पर मङ्गल घट भी बनते है, उस पर पच पल्लव रखते है। धान, चावल या जौ उसके ऊपर भी फल, लाल कपड़ा आदि रखते हैं। अल्पना के अष्टदल के मध्य इस मङ्गल घट को स्थापित कर देते हैं।

११—काष्ठ पीठ वृत्त

यह लक्ष्मी पूजन के लिए विशेष एक काठ चौकी पर बनाया जाता है। इसमे ज्यामितिक आलेख पीठ के चारो ओर बनाये जाते हैं। पीठ के ऊर्ध्वभाग मे लक्ष्मी चरण अङ्कित होते है। इनसे लक्ष्मी के आगमन की कल्पना होती है। इधर से खम्भे बने होते है। उनके पास ही नीचे की ओर फूलो के गजरे, कघी, शीशा, मछली, काजल डिब्बियाँ, सिन्दूर आदि वस्तुएं होती है। सौभाग्य द्रव जो भी हैं वे सभी वहा प्रस्तुत होते है। यह लक्ष्मी सिद्ध पीठ भी कहा जाता है।

१२—वनस्पति वृत्त

किसी शुभ अवसर पर बालिकाए केले, आम, पीपल आदि सुन्दर वक्षो की पत्तियो से या पुष्पों से अपनी कल्पना द्वारा यह वृत्त बनाती है। इसमे फूलो के ही आकार बनते है।

१३—धान वृत्त

वैदिक काल से ही धान्य या धान की प्रतिष्ठा हमारे यहाँ है, धान के बीजो से जो वृत्त बनाया जाता है वह धान वृत्त कहलाता है। इसमे कघी के काटो जैसे आकार बनाये जाते हैं। सूखे हरे किसी भी प्रकार के धानो के बीज इस कार्य मे प्रयुक्त होते है।

१४—अनन्त वृत्त

यह एक कुहनी के ऊपर चादी, सोने या ताँबे के बने ककणाकार रूप में पहने जाने वाले भूषण विशेष का द्योतक है। इसे ककण वृत्त भी कहते हैं। इसी आकार को प्रमुख मान कर अनेक रङ्गो मे इसे सजाते है। रोहिणी नक्षत्र पूजन मे इसका प्रयोग होता है।

१५—पृथ्वी वृत्त

इसमे भगवती पृथ्वी अपने पति वराह भगवान के साथ अङ्कित होती है। इनके अधोभाग मे एक गोलार्ध होता है, जो पृथ्वी का प्रतीक है। उसके नीचे विशेष रूप से कमल दल बनते हैं, उन पत्तो के डठल का मूल पृथ्वी गोलार्ध के भीतर दिखाया जाता है। ६ अष्ट दलाकार पद्म भी उस गोलार्ध से सम्बन्धित होते हैं। पृथ्वी पूजन मे अनेक दार्शनिक भावो की रागात्मकता इनसे स्पष्ट होती है। कमल का रूप यहाँ सौभाग्य, शाति और पवित्रता का बोधक है।

१६—करुवा वृत्त

यह करुवा पूजने के समय बनता है, जिसमे लक्ष्मी की भावना है। इसके दो भाग हैं। निम्न भाग और ऊर्ध्व भाग। निम्न भाग मे कमल के साथ बेल भी बनी रहती है, जो कि गृह प्रवेश द्वार के प्रारम्भ भाग से दोनों ओर बीच तक फैली होती है। ऊर्ध्व भाग मे अष्ट दल कमल बनाया जाता है, जिसके चारो ओर बेल फैली दिखाई देती है और बीच मे लक्ष्मी के चरण चिन्ह भी होते है। इसके बीच मे यत्न हलास भी बनाये जाते हैं। करवा का पात्र पानी से भरा रहता है और उसके ऊपर आम के पत्ते रखे होते हैं। यह सौभाग्य और मगल अवसरो पर भी बनाया जाता है। निम्न भाग मे जल मे उगने वाली लताए दुपती लताएँ भी सज्जित होती है। सितम्बर अक्टूबर के महीने मे पूर्णचन्द्र के समय यह मनाया जाता है और वैसे तो यह साल मे तीन बार मनाया जाता है। छोटे बड़े सभी अपनी सामर्थ के अनुसार इसे मानते है। बान्धव प्रीति भोज भी इसमे होता है।

१७—सर्व देव प्रतिष्ठा वृत्त

इसमे सूर्य, चन्द्र, गङ्गा, यमुना, चक्की, पालकी, महल मुख्यद्वार, द्वारपाल, नारियल वृक्ष, पान का बगीचा, काजल लता, शृङ्गार सामग्री आदि प्रतीक चिन्ह बनाये जाते है। इनके साथ ही एक छोटे मुख की सडासी लिए हुए चिडिया भी बनाई जाती है। बङ्गाल मे इसका प्रचलन अधिक है। केले के वृक्ष, झाडू लगाती हुई दासी भी इसमे अङ्कित की जाती है। इन सबसे यह प्रकट किया जाता है कि महामाया हमें यह सब कुछ ऐश्वर्य दे।

१८—लक्ष्मी नरायण वृत्त

इसमे अनेक प्रकार के सौभाग्य द्रव्य अङ्कित होते हैं। इनके साथ ही सिंहासन पर लक्ष्मी नारायण विराज मान दिखाए जाते हैं। दो चिडियाएं, चरण चिन्ह, लताए, फूल, फल आदि यतेच्छ सामग्री भी इसमे दिखाई जा सकती है। भोजन थाली, गिलास हार, वाजुबन्द, नथ आदि भी विशेष रूप से बनाये जाते है।

१९—हरिवंश वृत्त

यह अल्पना वश वृद्ध के निमित्त बनाई जाती है। हरिवश पुराण मे वश वृद्धि का भाग बताया जाता है। इस अल्पना मे सूर्य, चन्द्र, तारा, कही-कही इन्द्र देवता का भी पूजन प्रयोग है। इसमे तारा विशेष का स्पष्टीकरण विशेष रूप से किया जाता है। इसमे बहुत से बच्चो के साथ माता का आकार अङ्कित होता है, कुछ बच्चे गोद मे कुछ पास खडे, कुछ जाँघो मे बैठे दिखाये जाते है। इस अल्पना को अधिकाश रूप मे नवोढा स्त्रियाँ विशेष मनाती है। किसी अन्य देवता का प्रतीक भी इन उपर्युक्त देवताओ से पृथक बनाया जा सकता है।

२०—सुवासिनी वृत्त

(सरस्वती वृत्त) इस अल्पना मे सुवासिनी देवी का भाव होता है। इसमे एक तालाब मे हँस और सुवासिनी देवी का अङ्कन होता है। इस विषय मे एक दन्त कथा है कि एक राजा के राज्य मे किसी ब्राह्मण बालक ने एक हँस को राजा के तडाग मे से पकड कर मार कर खा लिया। राजा ने इस अपराध मे लडके को बन्दी बना दिया, लडके की माँ ने सुवासिनी देवी की अराधना की और उस अपने बन्दी पुत्र को छुडा दिया। सुवासिनी देवी ने प्रसन्न होकर राजा को एक स्वप्न दिया और उस मारे हुए हँस को पुनः जीवित कर राजा को दे दिया तथा राजा की लडकी का उस लडके से ब्याह करा दिया।

२१—मनसा वृत्त

बङ्गाल मे मनसा देवी की आराधना के लिए इसका प्रचलन है। बङ्गाली साहित्य सोलहवी शताब्दी तक हँस मनसा देवी के मङ्गलो का गायन करता रहा। यन्त्र पूजा मे भी मनसा देवी का अत्यन्त प्राधान्य है। मनसा सर्प देवी कहलाती है। यह पौराणिक पूजा है। वैदिक काल मे भी इसके प्रसङ्ग पाये जाते है। मनसा देवी एक सुन्दर वस्त्रालङ्कार सयुक्त मानी जाती है। ८ या ४२ तक सर्प इसके आस-पास दिखाये जाते है। नाग देवेन्द्रो के आकार भी इसके साथ बनते है। इसके बनाने का आकार यह है कि एक दिव्य सुन्दरी स्त्री का अङ्कन कर उसके ऊपर छत्र रूप मे अष्ट सर्प मूर्त्तियाँ बनाई जाती हैं। इसके चरणो के पास कमल पुष्प और अन्य इसके पूजा योग्य वस्तुएँ बनाई जाती है। शृङ्गार की सारी सामग्री इसके साथ होती है। विशेष जो भी अन्य सजावट के उपकरण उनके हृदय से निकले वे बनाये जा सकते हैं।

२२—लक्ष्मी जगन्नाथ वृत्त

इस अल्पना मे भगवान विष्णु के शेषशायी रूप की कल्पना होती है। आषाढ के महीने मे भगवान क्षीर सागर मे सो जाते हैं। तभी उनकी प्रसन्नता के लिए इसका प्रयोग होता है। घर मे सोये हुए भगवान की आराधना लक्ष्मी देवी के साथ होती है।

२३—इन्द्रपूजा वृत्त

इसमें इन्द्र देवता की पूजा-भावना होती है। वर्षा के द्योतक होने के कारण इन्द्र का प्रिय अस्त्र वज्र इसमे विशेष रूप से अङ्कित होता है। वज्र ही इन्द्र का प्रतीक इसमे माना जाता है। इसकी कल्पना मे आमने-सामने दो वज्र बनाये जाते है जो कि कमल कुण्डल की भाँति प्रतीत होते हैं। इनके ऊपर एक-एक तितली और एक-एक कीड़ा भी अङ्कित होता है। बीच के खाली स्थान पर मछली का आकार बनाया जाता है मछली का आकार अधिक वर्षा का द्योतक है। बङ्गाल की स्त्रियाँ इसे अधिक मनाती है। भाद्र पद शुक्ल पक्ष के १२वें दिन इसका विधान होता है। यह सब एक ऊँचे लकड़ी के मच पर बनाये जाते है। नृत्यगीत सगीत भी इसमे होता है।

२४—बहु मण्डल वृत्त

यह सर्व देव प्रतिष्ठा के भेदो मे है। इसमे सूर्य, चन्द्र सप्तऋषि तथा कुछ विशेष ग्रहो के साथ इसका अङ्कन होता है। इसमे वर्षा देवता इन्द्र का भी अङ्कन होना आवश्यक है। विशेष पूजा सामग्री एव शृगार आदि के भूषण भी इसमे बने दिखाये जाते हैं। इन्द्र का अङ्कन सबसे ऊपर होता है, जिसके केश बिखरे दिखाये जाते हैं। नीचे पृष्ठ भूमि पर भक्तो का भी इन सभी अल्पनाओ के अतिरिक्त और भी कई अल्पना वृत्त जिन्हे ग्राम्य विस्तार भय से छोड दिया गया है भारत मे प्रचलित है। इनमे आर्य सस्कृति की गम्भीर स्वच्छता एव हिन्दू कर्म काण्ड की गहनता गुप्त है। हमारे देश का जीवन पर्वो और महोत्सवो मे ही बीतता था, कला उनके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे इन विभिन्न धार्मिक-क्रिया कलापो मे बिखरी थी यही स्पष्ट होता है। अल्पना भी हमारी कला का एक दार्शनिक आध्यात्मिक रूप स्पष्ट करती है। इसमे अध्यात्मतत्वो का मनोरजनात्मक ढङ्ग से स्पष्टीकरण है।

अन्तःकक्ष प्रसाधन आकार

(Elements of Interior Designs)

इस प्रकार के आकारो को बनाने के लिए कलाकार को बहुत सी बातो की पूरी जानकारी रखनी आवश्यक है, उनमे चित्र, भवननिर्माण कला, प्रसाधन (Decoration) रगाई प्रकाश एव वातावरण का पूरा ज्ञान होना चाहिए। इन सबसे अन्त कक्ष प्रसाधन आकारो द्वारा एक ऐसा वातावरण बनाया बनाया जा सके जिससे वाञ्छित उद्देश्य की पूर्ति हो जाय, अर्थात आकार कर्ता को इन सभी का विशेष ध्यान रखना चाहिए, केवल आकार निर्माण तक ही उसे सीमित नही रहना चाहिए। किसी अन्तः कक्ष को सजाने के लिए उसके भीतर रहने वाली सभी वस्तुओ का स्वाभाविक स्वरूप उपस्थित करना ही सच्ची कला है।

इसमे एक प्रश्न यह उपस्थित होता है कि इतने सूक्ष्म और कठिन आकार चित्रण को कैसे कला का जिज्ञासु हृदयगम कर सकता है तो उसका उत्तर यह है कि कला के जिज्ञासु को सर्व प्रथम सवेदनशील होना आवश्यक है। सम्वेदना से ही वह प्रत्येक वस्तु के मर्म तक पहुँच पायेगा। इसी सवेदनशीलता द्वारा वह किसी अज्ञात वस्तु को अवगत कर सकता है उदाहरणार्थ यदि कोई व्यक्ति किसी भवन कला के रूप को देखता है और उसे स्वय भवन निर्माण कला नही आती तो सर्व प्रथम उसे उस कला को अवगत करने के लिए सम्वेदन शीलता की आवश्यकता पडेगी। वह इसी के द्वारा भवन के झरोखे, खिडकी, ऊँचाई आदि विभिन्न अङ्गो के भीतर छिपी भावाभिव्यक्ति को जान सकेगा। यद्यपि भवन निर्माण ज्ञान किसी विशेष सूक्ष्म कार्यों के कारण कला के अन्तर्गत नही आता तब भी इन-इन सूक्ष्म मार्मिक भावाभिव्यक्तियो के ही करण भवन निर्माण कौशल को भी कला मे स्थान मिला है भावाभिव्यक्ति का उद्देश्य यदि इसके द्वारा सफल नही होता तो यह किसी काम का काम नही। भावाभिव्यक्ति की सूक्ष्मता ही कला का सौन्दर्य है। अन्त. कक्ष प्रसाधन आकार एक कला है, जो सभी कलाओ से सम्बन्धित है, क्योकि मूर्ति, चित्र, वस्तु, आदि मे जो कुछ भी प्रसाधन सामग्री (Decorative elements) है उसे अन्तः कक्ष प्रसाधना करने वाले कलाकार को जानना आवश्यक है। अन्त. कक्ष प्रसाधना के लिए उपयुक्त किन्ही मुख्य बातो पर हम क्रमश विचार प्रस्तुत करेंगे, जिनमे पहले—Composition and proportion :—आते हैं जिनका स्पष्टीकरण रेखा स्थल, रङ्ग और रीति द्वारा होगा। यद्यपि से सब एक ही स्थल पर स्पष्ट करने योग्य है तथापि कला के विद्यार्थियो को और अधिक स्पष्ट बताने के लिए हम इन्हे क्रमश लेगे। यद्यपि इन सबका पृथक-पृथक निर्देश करने से ये हृदयगम हो सकेंगे तथापि इन सबका कला द्वारा समान-समवेत प्रभाव हम पर अथवा देखने वालो पर पडना चाहिए तभी इस अन्त कक्ष प्रसाधन कला का उद्देश्य पूर्ण हो पाता है। भारतीय कला का दार्शनिक सिद्धान्त यही है कि अपूर्णता से पूर्णता मे विलीन हो जाना अथवा एक से अनेक मे विलीनीकरण, अन्त से अनन्त मे समाजाना, बिन्दु का सिन्धु मे विलीन हो जाना, कला के ये सभी उपकरण अपने विभिन्न रूपो, भावों और प्रतीको द्वारा एक विराट् परिपुष्ट रसात्मक सौन्दर्य की अभिव्यक्ति कर पाते है, इनकी व्यक्तिगत एकता अनेकता की पुष्टि के लिए ही है।

आकार निर्माण क्रिया (Composition)

इसका अर्थ है किसी आकार को बनाने का ढङ्ग जिसमे रूप, रङ्ग-स्थल आदि के साथ उपयोग, भावप्रकाश और सभी का एकीकरण आदि बाते आती है । आकार निर्माण क्रिया ही सारी आकार कल्पना मे प्रधान है । इस क्रिया मे विपरीत पदार्थ योजना आवश्यक है अर्थात् बडी सी खिडकी के पास छोटी खिडकी बना देना छोटे आकार के समक्ष बडा आकार बना देना जिससे दोनो का अस्तित्व सघटित हो सके । इनमे सावकाशता भी दिखानी आवश्यक है अर्थात् बहुत सी वस्तुओ को एक साथ दिखाने के लिए उनमे बीच-बीच मे अवकाश (खाली स्थान) भी दिखाना होगा, क्योकि इसके दिखाने का तात्पर्य होगा दर्शक की आँखो के लिए आराम। घिचपिच या ठूँसा ठूँस आँखे किसी की भी पसन्द नही करेगी । उदाहरण के लिए यदि हम किसी मकान के भीतर की प्रसाधन क्रिया करे तो हमे वहाँ खिडकी के ऊपर कार्निस के पास बडे-बडे दरवाजे ताख अलमारी इत्यादि का सामान्य प्रभाव दर्शक पर उपस्थित करने का प्रयत्न करना होगा । इसमे स्वाभाविकता, उचितता का भी ध्यान रहे, अनावश्यक कोई वस्तु उसमे न लाई जाय । इस क्रिया मे ये सभी विशेषताएँ यदि न आयें तो यह सफल नही, इनका सबका उचित रूप मे उपस्थित हो जाना ही इसकी सफलता है ।

इनके अतिरिक्त एक जो सबसे बडी विशेषता इस क्रिया में होनी आवश्यक है वह है केन्द्रीकरण, अर्थात् जिस विशेष प्रयोजन सिद्धि के लिए अन्य सभी उपकरण जुटाए जाते है, उन सभी का किसी एक विशेष केन्द्र का आकर्षण बनाने के लिए वहाँ उपयोग हो । बहुत से उपकरणो का एकत्रीकरण इसलिए करते है कि उनसे कोई एक विशेष केन्द्र तैयार होता है । आकार निर्माण क्रिया मे यही विशेष ध्यान रहे कि उसका केन्द्र आकर्षक बन सके । उदाहरणार्थ हम प्राचीन काल के मन्दिरो को देखे तो हमे अवगत होगा कि उनके सजाने मे लाल और सफेद रङ्गो का उपयोग विशेष होता है, और उनके बीच मे काले रङ्ग या काली मूर्ति का विन्यास होता था । सफेद और लाल के बीच मे रखा काला रङ्ग ही केन्द्र है । यह केन्द्र तभी चमत्कृत हो सकेगा जब लाल-श्वेत रङ्ग उसकी परिधि मे हो ।

इस क्रिया मे इन सबके साथ सावकाशता, समानान्तरता, सन्तुलनात्मकता तथा तारतम्य भी अपेक्षित है ।

समानान्तरता (Symmetry)

जब कभी किसी वस्तु को हम देखते हैं तो उनके दोनो पार्श्वों को समानान्तर भाग मे हम पाते हैं अर्थात् उस वस्तु के दोनो हिस्से एक ही अन्तर पर होते है, यदि ऐसा न हो तो वस्तु एक ओर कम और दूसरी ओर अधिक होने के कारण कुरूप होगी । दोनो ओर दो नेत्र ठीक रहने से दोनो मे समानान्तरता दीखती है यदि एक नेत्र बन्द हो तो चेहरे की समानान्तरता नष्ट हो जाती है । अन्त कक्ष प्रसाधन मे यही समानान्तरता होनी चाहिए ।

सावकाशता (Balance)

दो समानान्तर वस्तुओ को ठीक सा रखने के लिए उपयुक्त सावकाशता पर रखना होता है । विरोधी प्रकृति की वस्तुओ को एक साथ तभी रखा जा सकता है जबकि दोनो के बीच एक सावकाशता रखी जाय । इसी सावकाशता से समानान्तरता सुन्दर लगती है । आलेख्यो मे सावकाशता से ही तो पदार्थ पृथक्-पृथक दिखाये जा सकते हैं । तारतम्य, (Rhythm) भाव प्रकाशन का जो अटूट प्रवाह आदि से लेकर अन्त तक दिखाई देता है वह तारतम्य कहलाता है, बिना तारतम्य के आलेख्य पूर्ण नही ।

सन्तुलनात्मकता

यह भी आलेख्य का अत्यन्तावश्यक अङ्ग है, इसके बिना चित्र के विविध भाव स्पष्ट नही हो सकते । दो या अधिक विपरीत या विभिन्नताबोधक पदार्थों को एक साथ रखने का नाम सन्तुलनात्मकता है । छोटे के पास बडा, लाल के पास सफेद रङ्ग, सीधे के पास टेढा, सुन्दर के पास असुन्दर बताना ही सन्तुलनात्मकता है । ऊपर

अङ्कित आकारो मे सन्तुलनात्मकता अच्छी स्पष्ट हो गई है, क भाग मे जो आकार है उसी के विपरीत ख, ग, घ मे क्रमशः विपरीतता दृष्टिगोचर होती है। इन सभी को परस्पर न्यूनाधिक रूप मे देखने का नाम सन्तुलनात्मकता है। क मे अगो की पूर्णता है, ख मे वह भरावट कम हो गई, 'ग' मे पूरे कोष्ठ भरे है 'घ' मे केवल एक ही कोष्ठ कुछ भरा है। इनसे इनका पारस्परिक अन्तर हो जाता है।

ऊपर हमने जो कुछ लिखा है उससे स्पष्ट हो गया कि आलेख्य वस्तु मे कितने अग है और इनमे से किसी एक की भी यदि न्यूनता आ जाय तो आलेख्य पदार्थ का आकार भद्दा हो जायगा। अन्त कक्ष प्रसाधना मे इनका पूरा उपयोग होना चाहिए।

ऊपर हमने भित्ति चित्रण का स्पष्टीकरण दिया है अब द्वार चित्रण के आलेख्य पर प्रकाश डालेगे जो प्राचीन काल मे केलो के पत्रो द्वारा बनाये जाते है। मगल घटो के साथ इन द्वार चित्रणाओ मे हम देखेगे कि उपयुक्त आलेख्य विशेषताएँ इनमे कहाँ तक आ पाई हैं।

उपर्युक्त सभी आलेख्यो का हम क्रमश स्पष्टीकरण देना आवश्यक समझते हैं। पहले मे सीधी रेखाओ से आलेख्य को सजाया गया है। इनमे सावकाशता के साथ-साथ पुनरावृत्ति भी है। परन्तु यह आकार उतना सौन्दर्य नही देता जितना आवश्यक है, स्थान की न्यूनता का भी इसमे आभास खटकता है। दूसरे आलेख्य मे स्थानन्यूनता तो उतनी नही खटकती फिर भी भला नही लगता। तीसरे मे सीधी रेखाओ की अपेक्षा गोल रेखाओ का उपयोग है परन्तु इसमे और भी अधिक सौन्दर्य दुर्बलता प्रतीत होती है। चौथे मे सावकाशता तो तीनो की अपेक्षा अधिक प्रतीत होती है परन्तु अन्तः सौन्दर्य की झलक इसमे भी नही। पाँचवे मे हमने सावकाशता अधिक पाने के कारण बीच मे एक और द्वार रेखा बोधक चिन्ह बना दिया इससे इसका सौन्दर्य और भी कुण्ठित हो गया। छठे मे छोटे बडे रूप की सन्तुलनात्मकता तो है परन्तु इसकी इसमे आवश्यकता ही प्रतीत नही होती। सातवें मे सन्तुलनात्मकता तथा कार्निस द्वारा सौन्दर्य तो सभी थोडा बहुत बन ही गया परन्तु पूरा सौन्दर्य इसमे भी नही आया है। माना कि इन सब आकारो मे हमने आलेख्य अगो को लेने क प्रयत्न किया फिर भी सौन्दर्य की पूर्णता दिखाने के लिए किसी भी निश्चय नियम की आवश्यकता नही होती सौन्दर्य किसी एक के अभाव मे भी यदि झलक सकता है तो झलक सकता है। आठवें मे अजन्ता शैली के रूप को सुन्दरता से प्रस्तुत करने का प्रयास है, परन्तु इस आलेख्य मे स्थान के अनुकूल वातावरण बनाने के सभी अग होने पर भी सौन्दर्य की पूर्णता नही। तात्पर्य यह है कि आलेख्य मे सौन्दर्य प्रस्तुत करने के लिए केवल नियम पालन अथवा नियमोल्लघन ही आवश्यक नही अपितु आवश्यकता इस बात की है कि उसमे दोनो स्थितियो मे सौन्दर्य भावना का तथा आलेखन के उद्देश्य का स्पष्टीकरण हो जाय। ये सभी स्वतन्त्र शैली के आलेख्य कहलाते हैं।

नवे आकार मे स्वतन्त्रशैली का कुछ उल्लघन है। उसे रीति बद्ध करने का प्रयत्न किया गया है, जिससे एक भाव तथा सौन्दर्य स्पष्ट हो जाय। तिब्बती लोग पूजा में झडियाँ टाँग लेते हैं। इसमे रीति बद्धता के कारण कुछ विशेष भाव तथा सौन्दर्य का स्पष्टीकरण हो गया है। आलेखन का अभिप्राय यह नही कि उसमे कोई वस्तु बडी बनाकर दिखाने से ही सौन्दर्य आता है। या किसी वस्तु के नाना रूपो को खिलवाड सा बना प्रस्तुत किया जाय अपितु किसी भी वस्तु के आलेख्य से उसमे सौन्दर्य और आलेखक का उद्देश्य स्पष्ट हो जाना चाहिए।

अंश कल्पना या (Proportion) विभाजन

आलेख्य मे भाव प्रकाशन के लिए अनेक अश या भाग होते है। कार्निस, खिड़की प्लास्टर, तसवीर टाँगने की पक्ति आदि कई बातो का इसी विभाजन से पता चलता है। विभिन्न वस्तुओं को सजावट मे कहाँ कहाँ ठीक रखा जाय यही सब आलेखक को अश कल्पना द्वारा किसी अन्त. कक्ष प्रसाधना मे समझनी

चाहिए। अन्त कछ प्रसाधना मे कलाकार और प्रसाधना कराने वाला दोनो को इन सब का ध्यान रखना चाहिए कि कहाँ क्या वस्तु हो। भव्यता और सुन्दरता मे दोनो ही अन्त कक्ष प्रसाधना के लिए केन्द्र हैं, इन दोनो के लिए ही सब आलेख अग है।

पुनर्नवीकरण (Patterns)

सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के लिए अनेक साधन हैं, परन्तु उन सबका पुनर्नवीकरण आलेख का एक आवश्यक अग है। जाने अनजाने मे हमे कल्पना द्वारा जो सौन्दर्य अनुभूति या विचार अपने मे दीखता है, उसका औचित्यपूर्ण ढंग से प्रकाशन हम आलेख्य की उन सभी बार-बार प्रयुक्त होने वाली रेखाओ द्वारा करते है जो कि अपनी समुचित प्रबन्धामयकता से सौन्दर्य को एक तरह सजीव कर देती है। इसी समुचित सौन्दर्य की पुन. पुन रेखाओ द्वारा होने वाली अभिव्यक्ति को पुनर्नवीकरण कहते हैं। ये रेखाये अगो की रमणीय चेष्टाओ को बताते है जिन्हे अग्रेजी मे पोज या गेश्चर कहते है; साहित्य के शब्दो मे इन्ही को कायिक अनुभाव कहा जाता है। ये सभी हमे परम्परा द्वारा अपने मानव समाज से मिलते हैं। इन रमणीय रेखाओ द्वारा आलेख्य वस्तु के मनोविज्ञान, शक्ति, कार्य, तर्क, वितर्क आदि अनेक आन्तरिक तथा वाह्य ज्ञातव्य बातो का ज्ञान हो जाता है। यहाँ तक कि उनके आचार विचार भी इन्ही से स्पष्ट हो जाते हैं। इन्ही से प्राचीन इतिहास और सस्कृति का क्रमिक विकास भी झलकता है इसीलिए कहा जाता है कि इन्ही रेखाओ से किसी देश या व्यक्ति की मौलिकता स्पष्ट हो जाती है। यही पद्धति कलाकारो द्वारा अपनाई गई है। प्रत्येक ललित कला मे—सगीत, नृत्य, चित्र, वस्तु, काव्य चाहे कोई भी हो यह परम्परागत मौलिकता रेखाओ द्वारा स्पष्ट होती है।

इन पुनर्नवीकरण की विशेषता राजपूत शैली की आलेख्य कला मे मिलती है। रग की विशेषता हमारे यहाँ काश्मीर के शाल-दुशालो मे पाई जाती है। इस बीसवी शताब्दी से एक और शैली आकार कल्पना मे आ गई है और वह है प्रभाववादी चित्रण शैली। यह विदेशी कला से आई है, इसके प्रवर्तक फ्रेंच कलाकर सीजाँ है। इस प्रभावशाली चित्रण मे रग, रेखा, छाया, प्रकाश आदि कुछ भी नही रह गया है, जो कि सच पूछा जाय तो आकार, रग, ढाँचा आदि सभी चित्रकला के विशेष अग है। इसी प्रभाववादी चित्रण शैली ने आचार विचार सम्बन्धी द्योतक विशेषताएँ भी समाप्त कर दी है। अब इस बीसवी सदी की चित्रण शैली मे जैसे-तैसे की ही प्रधानता रह गई है। अर्थात् कला को शास्त्रीय सौन्दर्य से मुक्त कर व्यक्ति विशेष की रुचि पर बैठा दिया गया है। यह प्रभाववादी चित्रण की शैली की मुख्य विशेषता है।

आचार विशेष का स्पष्टीकरण कला द्वारा ही करना आलेखक का मुख्य कार्य जब हम मान बैठे हैं तब उसमे किसी अन्य देश की रीति एव व्यक्तित्व का स्पष्टीकरण मूल रेखाओ द्वारा ऐसे हो जिसमे कलाकार के व्यक्तित्व की अवधारण शक्ति भी लक्षित हो। इसीलिए प्लेटो ने कहा है कि सौन्दर्य उस वस्तु का नाम है जो हमारे भाव जगत मे प्रत्यक्ष रूप से ऐसे झलके जिसमे औचित्य, नियमितता, सुप्रबन्धता और अनुभूतिमत्ता सब एक साथ हो और साथ ही मस्तिष्क का अपूर्वग्राहक गुण (Beauty) भी उसमे हो। हमारा हृदय प्रियता को पाता है और मस्तिष्क सौन्दर्य को पहचानता है। विषय बोध से होने वाला हृदय का सन्तोष मस्तिष्क द्वारा ही उत्पन्न होता है। आचार का स्पष्टीकरण इसीलिए कला मे अपेक्षित है कि उसमे हमारे मस्तिष्क को एक चेतना-गति मिलती है। पुनर्नवीकरण मे आचार प्रतिपादक क्षमता ही चित्र या आलेख्य मे देवत्व की प्रतिष्ठा करती है और यही हमारे बौद्धिक धरातल को जागृति देने वाली है, इसमें ऐन्द्रिक भूख मिटाने की क्षमता भी होती है परन्तु मुख्यत उसका कार्य हमारे बौद्धिक धरातल मे देवत्व की प्रतिष्ठा करना है। जीवन मे बहुत से क्षण ऐसे आते है जबकि हम आलेख्य द्वारा अपने जीवन के मौलिक नैतिक रूप को प्रत्यक्ष

रूप मे लाते है। भारतीय कला की यही विशेषता है कि उस मे अन्तर्जीवन के उन सूक्ष्म आकर्षणपूर्ण सौन्दर्य केन्द्रो को प्रत्यक्ष कराया जाता है जो हमे देवत्व की आनन्दमयी भूमिका तक ले जाते है। विश्व का क्लेश सन्ताप तब हमे नही व्यापता। अजन्ता, अलोरा और एलीफेन्टा के गुहाचित्र इसी के द्योतक है कि उनमे भी अन्त कक्ष प्रसाधना द्वारा साँस्कृतिक दृष्टि से भारतीय आचार विचार का ही आलेखन है। हो सकता है कि कोई पाठक हमारे इन विचारो से सहमत न हो तथापि अपने दृष्टिकोण से तो हम यही समझते हैं कि इन चित्रो को गुहाओ के भीतर बनाने मे और क्या उद्देश्य हो सकता है। इनके अनन्तर पाये जाने वाले गुप्त काल के अन्त प्रसाधना मे आकर्षण तो है परन्तु इन चित्रो की अपेक्षा सौन्दर्य कम है। अन्त प्रसाधना मे आलेखक के उद्देश्य की पूर्ति तथा तत्सम्बन्धित वातावरण एव प्रभावात्मकता अवश्य आ जानी चाहिए। सास्कृतिकता तो इस प्रकार के आलेखन का प्राण ही है। विश्व-भर के अन्त कक्ष प्रसाधना को यदि देखा जाय तो सबमे एक आन्तरिक अभिन्नता दिखाई देती है। सबका उद्देश्य एक ही उपकरण और शैलियाँ नि सन्देह पृथक्-पृथक है। अन्त. कक्ष प्रसाधना के सभी अग और उपयोगिता बोधक उपकरण प्रत्येक देश की आवश्यकताओ के अनुसार पृथक-पृथक हो सकते है, परन्तु उन सबका भीतरी लक्ष्य एक है। विशेषता अन्त कक्ष प्रसाधना मे रग वैषम्य भी एक आवश्यक अग है। रग वैषम्य से तात्पर्य है अनेक रगो का सुन्दरता के लिए उपयोग। रग योजना इस प्रकार से इसमे होनी चाहिए कि आँखो को एक प्रकार से अपार सन्तोष मिले।

स्तर का महत्व

अन्त: कक्ष प्रसाधना मे स्तर का भी अपना महत्व है। जब तक आलेखक को स्तर का ज्ञान ठीक नही तब तक प्रसाधन कार्य ठीक नही होता। कौन से आलेख के लिए किस प्रकार का स्तर (Texture) आधार चाहिये, यह पहले आलेखक को भली-भाँति जान लेना चाहिए। कौन सा आकार कहाँ किस स्तर पर बन सकता है, यही जानना स्तर ज्ञान है। स्तर ही विशेष-विशेष भाव और प्रभाव को डालने की क्षमता रखता है। बौद्धिक और भावात्मक दोनो जागृतियाँ भी आलेखन को इसी स्तर द्वारा प्राप्त हो सकती है। वैसे तो अन्त. कक्ष प्रसाधना मे भित्ति चित्रणा भी आती है, परन्तु उसका विषय अन्त कक्ष प्रसाधना से कुछ अलग है। इसलिए हम उसके विषय मे इस प्रसग पर कुछ न कहेगे परन्तु इतना अवश्य कहेगे कि भित्ति चित्रणा (Mural decoration) मे भी अनेक देशवासियो ने अपने-अपने अनुभव और बौद्धिक सस्कारो के आधार पर अनेक ढङ्ग से स्तर बनाये है, जिनमे उनके जातीय जीवन के सम्पूर्ण साँस्कृतिक इतिहास का स्पष्टीकरण होता है। अन्त कक्ष प्रसाधना मे इस प्रकार जातीय चेतना, व्यक्तित्व की अभिव्यजना और आचार-विचार का प्रत्यक्षीकरण होता है और आलेख्य के इतिहास बनाने मे इसका अपना अलग महत्व और स्थान है।

आकार कल्पना का विश्व-प्रिय रूप

आकार कल्पना का यदि हम विश्व व्यापक रूप देखे तो हमे यह सहज ही मे अवगत हो जायगा कि इस प्रकार की कला ने ससार के बहुत से देशो को विमुग्ध किया, और वहाँ के लोक-जीवन मे अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाया ।

चीन मे इस प्रकार की कला का विवरण वहाँ के प्राचीन धर्म-ग्रन्थो मे पाया जाता है। ईसा की पहली शताब्दी मे जब वहाँ हस सस्कृति का शासन था उस समय कलात्मक उन्नति मे कपड़े के ऊपर बनने वाले आकार चरमोत्कर्ष पर थे। (कुछ लोगो के मतानुसार इस चीन की आकार कल्पना पर ईरानी प्रभाव भी था। यद्यपि मौलिकता मे चीन बढा चढा था)। इधर जापान मे भी आकार कल्पना के प्राचीन रूप मिलते है, जिन्हे चीन का ही प्रभाव माना जाता है। चीन जापान की आकार कल्पना मे एक प्रकार से एकत्व है, क्योकि चीन के ही कुछ जुलाहे ईसाई युग मे जापान जाकर बस गए थे, इन्ही से वहाँ की आकार कल्पना प्रभावित हुई। चीन, जापान की प्राचीन आकार कल्पना यद्यपि प्रतीकात्मक (Symbolic) थी जो कि अब तक चली आ रही है फिर भी उसमे फूल, पत्ते, चिडियाँ, पशु तथा अपनी मौलिकता लिए प्राकृतिक दृश्य-चित्रण भी है। इस आकार कल्पना की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसमे कार्य भार देखने मे नरम लगता है, किन्तु उन रेखाओ को बनाने के लिए चिन्तन शक्ति बड़ी तीव्र और गहरी होती है जो सम्पूर्ति (Finishing touch) मे सुन्दर उभार दे देते हैं। साटन के कपड़े पर इनके छपे आकार अपना विशिष्ट स्थान रखते है ।

दूसरी ओर यूरोप मे भी आकार कल्पना का एक अपना विमोहक इतिहास है। यहाँ सर्वप्रथम ग्रीक सस्कृति के लोगो ने इसे अपनाया। जैसा कि इतिहासकारो का कहना है कि सभ्यता के प्राचीन केन्द्र मिश्र, बेवीलोन, यूनान रहे है, और यही से आकार कल्पना विशेष उन्नति पर थी। रोम में यूनानी प्रभाव से आकार कल्पना का कार्य गिरजाघरो मे तथा अन्य सामाजिक भवनो मे पूर्ण विकसित रूप मे मिलता है। अंग्रेजी तथा इटालियन लोगो की अभिरूचि इसमे बहुत बाद मे हुई। फ्रेंच लोग इसमे कुछ नवीनताएँ लाए। रेखा चातुरी इनकी प्रमुख विशेषता थी। स्पेन मे आकर कल्पना प्रसाधनात्मक शैली (Decorative Style) मे पाई जाती है। वह हमारे सिन्ध, काठियावाड और कच्छ की आकार कल्पना से साम्य रखती है। जर्मनी ने इस क्षेत्र मे कोई विशेष रुचि नही दिखाई। जो भी वहाँ इस दिशा मे मिलता है वह ईसाई धार्मिक ढग का का कार्य मिलता है। स्केडीनेविया ने ज्यामितिक आलेखो का विकास किया जो अपने ढग के निराले हैं और उनमे श्रम-तल्लीनता विशेष होती है। इनके अतिरिक्त जो आकार मिलते है उनमें ग्राम्य जीवन एव शीत प्रदेश के जीवन से सम्बन्धित आकार मिलते है।

इसी प्रकार अरब का भी आकार कल्पना सम्बन्धी इतिहास अपना अलग है। अरब के खलीफा के सिपहसालार मुहम्मद बिन कासिम ने सिन्ध के राजा दाहर पर आक्रमण किया। इसके बाद तो लगातार पश्चिमी भारत उनके आक्रमणो से आक्रान्त रहा और बहुत से प्रदेशो पर तो इनका अधिकार हो गया। फलस्वरूप बहुत से लोग इन भूखण्डो मे अरब से आकर बस गए। इसी कारण हमारे तथा वहाँ के आकारों मे पर्याप्त साम्य पाया जाता है। तुर्किस्तान मे भी स्केन्डीनेविया की भाँति ज्यामितिक आलेखो का बाहुल्य है।

तुर्किस्तान मे मानव, पशु, पत्ते, फूल आदि के आकारो के घने चित्रण चटख रगो मे मिलते है। इनका प्रभाव भारतीय काश्मीरी आकारो पर अधिक पडा। रग योजना यदि यह कहा जाय कि वही की है तो यह अनुचित न होगा।

भारतीय आकार कल्पना के विषय मे अब हमे कुछ बताना है। साधारणतः विशाल दृष्टि कोण से पहले हम इस विषय मे बता चुके है। अब प्रत्येक प्रान्त की आकार कल्पना के विषय मे हम उनकी प्रमुख विशेषताओ सहित कुछ बतायेगे। आकार कल्पना का वैदिक काल मे अपने यहाँ पूर्ण विकास था। रामायण महाभारत काल तक भी आकार कल्पना अपने उत्तरोत्तर चरमोत्कर्ष को तत्कालीन मानव भाव धाराओ को अपने मे केन्द्रित करती नदी प्रवाह की भाँति आगे बढती रही। चीनी यात्री मेगस्थनीज ने यहाँ की मल-मल के ऊपर बने आकारो का सुन्दर उल्लेख किया है। गुप्त काल भारतीय सस्कृति का स्वर्ण युग माना जाता है। इसी युग मे साहित्य और इतर कलाएँ अपने चरमोत्कर्ष पर थी। हर्ष तथा कालिदास आदि कवियो के ग्रन्थो मे भी आकार कल्पना के उल्लेख पाये जाते है। महाकवि बाण के हर्ष चरित गद्य ग्रन्थ मे लिखा है कि हर्षवर्धन महाराज की धोती पर बत्तखो की कसीदाकारी थी। हर्षवर्धन की अन्त पुर की स्त्रियो तथा सामन्तो के सुसज्जित वस्त्रो का वर्णन आकार कल्पना के उदाहरण है। उन पर फूल, चिडियाँ, बादल, आदि के रूप प्रसाधनात्मक (Decorative Style) मे थे। उन स्वर्ण जटित पुष्पो की आकार कल्पना प्रसिद्ध है। बनारसी साडियाँ, हैदराबाद के हेमरू, काठियावाड और उदयपुर के दुपट्टे, काश्मीर के शाल, मिर्जापुर के कालीन सुन्दर आकार कल्पना के रूप है। सबकी अपनी एक विशिष्ट परम्परा है। यह आकार कल्पना भारत के प्राचीन कलाकारो के सकलन (Records) हैं जो उनकी कला साधना के उत्कर्ष को बताते है। वे अपने समय के रचनात्मक रूपो के सफल तथा उपयोगी कलाकार थे। ये सभी उनके व्यक्तिगत जीवन को स्पष्ट करते है। आज इसके प्रति सम्पूर्ण ससार मे एक प्रकार की जागरूकता दिखाई पडती है और इसके अनेक सगठनो के प्रयत्न हो रहे है। भारतीय कलाकारो ने अपने समय के आदर्शों तथा उद्देश्यो के साथ भारतीय सस्कृति का चरमोत्कर्ष अपनी इन रचनाओ मे स्पष्ट किया। यह हमारे यहाँ ही पुराकाल से नही चली आ रही है अपितु सम्पूर्ण विश्व मे इसके प्रति तीव्र रुचि पाते है। प्राचीन काल के लोगो का जीवन यद्यपि बाह्य रूप से इतना सुखी एव बाह्य सौन्दर्यपूर्ण नही दिखाई देता फिर भी धार्मिक एव आध्यात्मिक विश्वासो की छाप लगाकर उन्होने आकार कल्पना के व्यापक सौन्दर्य का परिलक्षण किया था। उत्तर माध्यमिक काल मे भारतीयो ने अपने मुसलमान तथा अग्रेज शासको को सगमरमर पर, लकडी के बक्सो पर, कपडो पर एव अन्य धातुओ पर बने आकार भेंट रूप मे देकर उन्हे भारतीय कला के प्रति आकृष्ट किया। वे सुन्दर कलाये आज भी अजायबघरो मे सुरक्षित मिलती हैं। अपने पूर्वजो को आज के विकासशील साधक और जगली असभ्य मानते है, किन्तु उनकी आकार कल्पना मे पाये जाने वाले रूप, विचार, भाव, आकाक्षाये तथा प्रवृत्तियाँ हमे यह बताती है कि वे पर्याप्त कला साधक थे। उनकी साधना मौलिक थी। वह समस्त जाति एव सस्कृति का प्रतीक थी, उस समय के एक साधक मे सम्पूर्ण जातीय सस्कृति बोलती थी। वह साधक केवल अपने ही लिए नही प्रत्युत सम्पूर्ण जाति के लिए साधना करता था।

इस प्रकार की पावन कला साधना भारत मे एक ओर जातीय जीवन और दूसरी ओर कलाकार के व्यक्तिगत जीवन दोनो का समन्वय करती हुई लोकोत्तर आनन्द एव मगलमयी वर्षा करती हुई अनादि काल से चली आकर आज भी जीवन्त है। जीवन की अखण्ड एकता का स्वरूप उसकी प्राण शक्ति है। हडप्पा तथा मोहन-जोदड़ो के शेषाश इसी का एक उदाहरण है। आज हम गौरव के साथ उसका उल्लेख कर सकते है और इससे भी अधिक गौरव हमे तब होता है जब उस समय के अति साधारण गृहस्थ अथवा नागरिक के घर मे भी कला

की ऊँची से ऊँची कृतियाँ मिलती है। आज हम उनका अनुकरण न करे पर शक्ति, बल, प्रेरणा तो प्राप्त कर ही सकते है। आज की कला आवश्यकताओ मे हमे पुराकालीन भारत की इन साधनाओ से पर्याप्त प्रेरणा एव सुझाव मिलेगे। जीवन की कलात्मक साधना मे प्रगतिशील बनने के लिए हमे प्राचीन को भूल न जाना होगा। केवल प्राचीन पर निर्भर रहना भी आज के जीवन के लिए पर्याप्त नही। उसमे नये-नये प्रयोगो का उपक्रम अनिवार्य है।

इस यन्त्र युग के वैज्ञानिक प्रभाव से आज हमारी आकार कल्पना की समाप्ति सी हो रही है। इस युग मे मशीन ने उपयोग को अपनी उत्पादन अधिकता से इसे हल्का कर दिया है। उत्पादन अधिक और सौन्दर्य मापदण्ड कम के ही कारण आज कला के प्रति लोगो मे वह रुचि नही रही जो पहले थी। औद्योगिक क्रान्ति मे एक ही वस्तु की सहस्रो सैकडो लक्षो आकार देकर व्यक्तिगत परिश्रम सन्तुलन एव क्रय-विक्रय के लिये होने वाले प्रयत्न की इति श्री करदी। पूर्व काल मे एक व्यक्ति आकार कल्पना, रग योजना प्रसाधना तथा उसके लिए पुण्यविधि मे जाना इत्यादि सभी कार्य करता था, वह पूर्ण शक्ति लगाकर अपनी कला को जन-जीवन तक पहुँचाता था। कलात्मक निर्माण रुचि रखने वाले कुछ ही लोग होते हैं और अधिक सख्या कलाप्रिय ग्राहको की होती है। इसीलिए कला का कुछ दिनो व्यक्तिगत मूल्य बहुत था जो आज विनष्ट हो गया है। ऐसी कला के अवशेष आज दयनीय रूप मे हमे अजायबघरो मे ही मिलते है।

अब हम उपर्युक्त कथन को प्रबल प्रमाणो द्वारा पुष्ट करने के लिए क्रमश उन स्थानो का उल्लेख करेंगे जहाँ आज भी प्राचीन आकार कल्पना का भण्डार सुसज्जित है।

१. अजन्ता—यहाँ प्रागैतिहासिक काल से लेकर ईसवी सन् ५० तक जो आकार कल्पना मिलती है उसमे अलकारिकता को किस प्रकार दिखाया गया है, उसके लिखने मे असमर्थ हूँ। इनमे प्राकृतिक वस्तुओ को इतनी दक्षता के साथ प्रस्तुत किया गया है कि उन्हे देखकर हम सहज ही मे प्रभावात्मकता सूक्ष्म सौन्दर्य एव कल्पना-चातुर्य का अनुभव कर लेते हैं। अजन्ता के चित्रो की अनुकृति करने वाले प्रसिद्ध यूरोपियन कलाकार श्री ग्रिफिथ ने अपनी पुस्तक मे इस अजन्ता अल्पना की बडी महिमा गाई है और विशेष कर उन्होने कहा है "अजन्ता के चित्रो का अनुकरण करने मे जब इतना आनन्द मिला तो बनाने वालो को कितना आनन्द मिला होगा ? वह कितना महान होगा जिसने पृथ्वी पर इतना मादक-आकर्षक कल्पना विधान उतारा ?" जौर्ज वाट्स ने भी इसके लिए कहा था—'हम लोग मिश्र, यूनान और चीन की आकार कल्पना के बारे मे बहुत कुछ अनुमान लगाते थे परन्तु अजन्ता की आकार कल्पना तो इनसे कई गुणा बढी चढी है। इतने बडे भवन मे इतने सूक्ष्म आकार प्रस्तुत किये हैं कि उन्हे देखने वाला और समझने वाला ही उनके महत्व को समझ सकता है।

उनके कोट तथा पगडिएँ फारसी ढग की हैं। मोजो और जूतो पर लहरियेदार पट्टी, फल, फूल, नाचते गाते मदिरा-पान करते हुए लोगो के अकन है। चिडिया कमल के साथ इस प्रकार बनाई गई हैं कि वे सजीव उड़ने को प्रस्तुत सी लगती है। बैल, हाथी, बन्दर, तोते, बत्तखो आदि के आकार सभी सौन्दर्य विधानात्मक शक्ति से बनाये गये हैं। कही पूरा खिला हुआ कमल का फूल, कही कली और कही अधखिली कली, कही अनन्नास और कही आम, सभी सजीवता से अकित है (प्लेट न० १ और २)। हम इन आकारो की ऊँचाई का अनुमान नही लगा सकते।

बौद्ध भिक्षु यद्यपि ससार त्यागी थे किन्तु जीवन की पूर्णता एव अखण्ड आनन्द के भोक्ता थे। ससार के सभी अनुभव उन्हे ज्ञात थे किन्तु उनकी दृष्टि सदैव ही निर्लेप रही 'पद्म पत्र इवाम्भसा' की रूढ़ोक्ति उन्होने चरितार्थ की। अपने इसी जीवन-दर्शन के अनुसार उन्होने आकारो मे कमल को मुख्यता दी। जहाँ कही भी देखो छत पर, दीवार पर, या स्तभो पर कमल की ही प्रधानता है। रगाई के क्षेत्र मे ही नही, अपितु खुदाई के क्षेत्र मे भी उन बौद्ध कलाकारो ने अपना जीवन उतारा है। उड़ती हुई अप्सराओ के आकार जैसे रगो मे उभरे

हैं उसी प्रकार पत्थरो मे भी, मनुष्यकारो मे उन्हे यक्ष अति प्रिय थे। खम्भो के ऊपरी हिस्सो मे सब जगह वे ही मिलते है।

हास्य की सृष्टि के लिए अथवा मै कहूँगा किसी रग विशेष के कम प्रयोग के लिए राज वर्ग के सेवको मे बौनो को बहुधा स्थान मिला है। नर्तकियो के कपडो पर पहियो वाला आकार और बौनो के छत पर के आकार वर्तुलाकार और कही कही चौकोर भी है। उनकी रग योजना मे हरा, पीला, लाल और सफेद अधिक है। हरा रग इतना गहरा और चमकदार है कि उससे सहज ही मखमल का भान होता है।

स्तम्भो के निचले भागो मे फलो के आकार है, कही-कही उन्ही से अमानवीय आकार की सृष्टि भी की गई है। गुफाद्वार के दोनो ओर तथा ऊपर मनुष्याकारो का प्रयोग मिलता है, जिन कुछ स्थानो पर पुनरावृत्ति भी मिलती है।

२ उडीसा—अच्छी आकार कल्पना के लिए भुवनेश्वर तो प्रसिद्ध है ही, इसके साथ पुरी, कोणार्क, लिगराज मे भी अच्छी आकार कल्पनाएँ मिलती है। उडीसा की आकार कल्पनाओ मे कल्पना की जितनी उडान मिलती है उतनी किसी अन्य स्थान मे नही। एक साधारण सी वस्तु का इतना आलकारिक रूप मिलता है कि देखकर आश्चर्य होता है। घडो और उनपर रखे दियो का साधारण सा आकार शख और शख प्रसूत लता का आकार इस कथन की पुष्टि करते है। पुरी मे मूर्ति सौन्दर्य विधान विशेष है, उनमे गुप्त काल के कलाकारो की सी सास्कृतिक भावनाये विशेष मिलती हैं। कोणार्क के आकारो मे सूर्य देव के रथ का रूप अद्भुत है। अजन्ता आदि गुफाओ मे जानवरो के आकार मिलते है किन्तु सौन्दर्य वृद्धि के लिए उनके वास्तविक स्वरूप का जितना विघटन उड़ीसा के आकारो मे मिलता है शायद अन्य कही नही मिलता (Plate No 1) फर्गूसन साहब के अभिलेखो मे कोणार्क की आकार कल्पना अद्वितीय बताई गई है। लिगराज के आकारो मे जानवरो के जोड तोड विशेष कुशलता से बने है। ये जमीन के ऊपर बने है। अनन्त वासुदेव आदि लिगराग के पडोसी मन्दिरो मे झाड-फूल, फल और लता जो यूनान की विशेषता थी वह मुख्य है। इनकी झालरदार आकार कल्पनाये प्रसिद्ध है। इसी सम्बन्ध मे गौरा मन्दिर का उल्लेख भी आवश्यक है। यहाँ सुन्दर-सुन्दर स्त्री-पुरुषो के मुख के आकार तथा उनकी मुद्राओ (Poses) का नाग नागनियो के साथ सुन्दर अकन हुआ है। इन आकारो की दूसरी विशेषता है भिन्नता मे एकता का आभास देना। उदाहरण के लिए दो नम्बर प्लेट के बीच के आकार को ले। सब आकृतियो की मुख-मुद्राये हस्त मुद्राये तथा अलकरण अलग-अलग है किन्तु प्रभाव मे एकता है। किसी को इन सबका पता तब तक नही चल सकता जब तक कि वह उन्हे ध्यान से न देखे। इसका मुख्य कारण यह है कि उन्होने मनुष्याकृतियो को विसर्ग के एक अग के रूप मे ही देखा है। अत: अपनी इच्छानुसार जैसा चाहा बदल दिया है। यही मान्यता उनकी एक तीसरी विशेषता का आधार भी बन गई है, वह है मनुष्यो तथा पशुओ के आकारो का सामजस्य। दूसरे शब्दो मे हम यह कह सकते है कि उडीसा के चित्रकारो ने आकारो के सौन्दर्य पर अधिक ध्यान दिया है, उनकी आधार भूत वस्तुओ पर कम। सच पूछा जाय तो एक अच्छी आकार कल्पना के लिए यह गुण है भी आवश्यक। कुछ आकार कल्पनाओ मे वस्तु के ठोस धरातल से ऊपर बहुत ऊपर कल्पना की रगीन उडाने भी भरी गई है। यद्यपि सौन्दर्य की दृष्टि से उन्हे प्रथम कोटि के अन्तर्गत नही रख सकते किन्तु प्रयोग की दृष्टि से अवश्य सराहनीय है। तीन नम्बर प्लेट का नीचे वाला आकार कुछ ऐसा ही है। बाघ की गुफाओ मे भी ऐसे प्रयोग किये गये है। वात्सल्य भाव मे बौने लोगो का चित्रण भी सफलतापूर्वक हुआ है।

३. अमरावती—कृष्णा नदी के दक्षिणी तट पर मद्रास प्रान्त मे यह अमरावती नगर है। प्राचीन काल मे यही धरणी कोट कहलाता था। यह लगभग २० शताब्दी पुराना स्थान है। यहाँ के आकार गौतमबुद्ध

की जीवन सम्बन्धी घटनाओ से अकित है। गौतम का अश्वारोहण तथा अन्य घोडो की कतारे अर्धांगविन्यास (Profiles) के रूप मे है। इनकी गठन (Composition) बहुत ठोस है। अमरावती के आकारो को अन्य आकारो से अलग करने वाली विशेषता है वहाँ के चित्रकारो का मनुष्याकृतियों से प्रेम। आकार कल्पना वर्तुलाकार हो या वर्गाकार या किसी अन्य रूप मे पर बाहुल्य मिलता है मनुष्याकारो को ही। कुछ आकार तो अच्छे खासे भित्ति चित्र (Murals) बन गये है। प्लेट न० ७ के ऊपर का चित्र आकार कल्पना की अपेक्षा भित्तिचित्र की कोटि मे अधिक बैठता है। नीचे वाला चित्र अमरावती स्तूप के जङ्गले से लिया गया है। उसमे पीछे की पच्चीकारी का समावेश इसीलिए हुआ है, ताकि सादी सी मनुष्याकृति और उभर आये। इसी मे पुरुष की आकृतियो के गजे होने की विशेषता भी झलकती है। प्लेट न० ८ मे हाथियो के दो रूप मिलते हैं। एक सादा और दूसरा आलकारिक। आलकारिक रूप मे मछली के आकार की इतनी अधिक विशेषताएँ आ गई हैं कि उन्हे एकाएक पहचाना भी नही जा सकता। इस दृष्टि से वे भुवनेश्वर के समीप बैठाये जा सकते है और कमल के रूपो के कारण अजन्ता के। अत हम यही क्यो न समझ ले कि अमरावती के चित्रकारो ने जहाँ जो वस्तु अच्छी लगी ले ली।

जिन वस्तुओ को आलकारिक रूप मिला है उनमे दूसरा स्थान है सर्प का। कही-कही पर पुरुष स्त्री के युग्म को खडा कर भी एक अलग चित्र बना दिया गया है (प्लेट न० ९) इस प्रकार हम देखते हैं कि अमरावती की आकार कल्पनाये अजन्ता तथा भुवनेश्वर के समान विस्तृत भूमि के दर्शन भले न कराएँ पर कल्पनाएँ शक्ति की प्रचुरता का प्रमाण अवश्य है।

४ **बाघ की गुफायें:**—भारत की गण मान्य गुफाओ मे से बाघ की गुफाये अपनी आकार कल्पना के सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध है। यूनान की प्राचीन चित्रकला तथा मूर्ति कला अपनी पूर्णता मे अप्रतिम है तो बाघ के भित्ति चित्र आकारो की विपुलता के लिए प्रसिद्ध हैं। वहाँ चित्रकारो की कल्पना शक्ति ने इतने विस्तृत क्षेत्र को अपने भीतर समेट लिया है कि सम्पूर्ण एशिया के लिए वे एक प्रेरणा की वस्तु बन गई है। उनका आलकारिक गठन, रेखाओ का स्वाभाविक सौन्दर्य और आकारो की शालीनता चित्रकारो के लिए अक्षय भडार है।

दूसरी गुफा, जिसका सम्बन्ध पाण्डवो से बताया जाता है, शेरो के आकार के लिए प्रसिद्ध है जो दरवाजे के ऊपर बने हुए हैं। यही पर ये गुफाये अजन्ता से अलग होकर अपनी मौलिकता प्रदर्शित करती है।

तीसरी गुफा हाथी खाना कहलाती है। चित्रकारी की दृष्टि से इसका कोई विशेष महत्व नही है। सजावट मे पहली दोनो गुफाओ से अधिक आकर्षक है चौथी गुफा अर्थात् 'रङ्ग महल'। यदि इन नामो को अब तक अपरिवर्तित रूप मे चला आता हुआ समझ लिया जाय तो इस गुफा को निर्माण करने वाले का शयनागार समझा जा सकता है। अतएव उसकी दीवारो पर इतनी महीन चित्रकारी स्वाभाविक है। गुप्त काल की कला इस ध्वस्त रूप में भी उसके उखडे हुए पलस्तर पर अपने पूर्व रूप मे चमक रही है।

दीवारो के अतिरिक्त स्तम्भो के ऊपरी भाग मे बने हुए आकार भी कम महत्वपूर्ण नही है। मकराकृतियाँ पश्चिमी एशिया के आकार से मिलती है और स्त्रियो के आकार साँची की आकृतियो से। सम्भवत आलकारिक गठन मे प्रयुक्त होने वाले आकारो मे हाथी, साँड और शेर जैसे जानवरो हस जैसे पक्षियों और आम इत्यादि फलो को विशेष स्थान मिला है (प्लेट न० १०)। उपर्युक्त विवरण से यह निर्विवाद रूप से स्पष्ट हो जाता है कि बाघ के आकार एक विस्तृत वस्तु जगत को अपने मे समेटे हुए है। हर प्रकार की रुचि वाले के लिए उसमे आकर्षण

है, स्वय को खो देने के लिए भाव भूमि है। समस्त एशिया पर इसका कितना प्रभाव पडा है इसका आभास इसके चित्रकारो को नही रहा होगा किन्तु उसकी जगत प्रसिद्धि उसकी उत्कृष्टता का स्पष्ट प्रमाण है।

५. वेरूल (Ellora)—अजन्ता के साथ ही वेरूल का नाम भी लिया जाता है किन्तु दुर्भाग्यवश जहाँ तक आकार कल्पना का प्रश्न है काल के कराल हाथो से अजन्ता की अपेक्षा बहुत कम सौन्दर्य बच सका है। बौद्ध गुफाओ और जैन गुफाओ को छोड देने के पश्चात् भी अकेली वैष्णव गुफाएँ ही वेरूल की प्रसिद्धि स्थिर रखने में समर्थ है। वैष्णवो की सबसे पहली गुफा कैलाश मे शिव मदिर के स्तभो पर बने आकार इतने बारीक और सुन्दर है कि प्रतीत होता है मानो इनके अतिरिक्त आकारो की कल्पना ही नही की जा सकती।

कही-कही के अवशेषो से प्रतीत होता है कि आरम्भ मे इसकी दीवारो और छत पर चित्रकारी रही होगी और बाद के किसी दूसरे युग मे फिर हुई होगी। छत पर के आकारो के कोने बचे है। उनमे कमल के पत्तो के आकार बने है और उनमे वही लोच है जो अजन्ता के आकारो मे किन्तु रगो मे ताजगी और हलकापन है। स्तम्भो के आकारो मे कमल के मूल आकार के ही आलकारिक रूप अधिक मिलते है। इसका यह अर्थ नही कि मनुष्य तथा पशुओ की आकृतियो को स्थान नही मिला है। ग्यारह न० प्लेट के शेर वाले आकार से यह सिद्ध हो जाता है कि वहाँ के कलाकार भी आलकारिक रूपो के सृजन मे उतने सिद्धहस्त थे जितने अजन्ता या भुवनेश्वर के।

६. एलीफेन्टा (Elephanta)—बम्बई बन्दरगाह से कोई सात मील की दूरी पर एलीफेन्टा का टापू है जिसके पश्चिमी भाग में उत्तर पूर्व दिशा मे शेरो की वृहद् गुफायें है। कुछ गुफायें पूर्वी भाग मे भी हैं किन्तु प्रतीत होता है कि वे सिर्फ रहने के काम आती थी। सब गुफाओ में सबसे बडी और अधिक महत्वपूर्ण है गुफा न० १ इसी को पूजागृह भी कहा जाता है।

एलीफेन्टा की आकार कल्पनाएँ इसी गुफा मे मिलती है। गोल स्तभो के ऊपरी भाग लोटे की तरह हैं और उनमे तोरी की तरह बाहर को धारियाँ उभरी हुई हैं। शैवो की उपासना मे पार्वती का प्रमुख स्थान है अतएव उसके वाहन सिह से भी उनका घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ। इसी कारण हम देखते है कि यहा की आकार कल्पनाओ मे शेरो के मुख का आलकारिक अकन, उसके पजो के समान लम्बूतरे और आगे से घूम जाने वाले आकार बहुतायत से मिलते हैं। समरसता को भग करने के लिए बीच मे आडी सीधी रेखाये भी रखी गई हैं।

७. बादामी (Badami)—ईसा की छटी शताब्दी से लेकर आठवी शताब्दी तक जन लोक विश्रुत हो चुकी है। चालुक्य वश की कलाप्रियता बादामी गुफाओ के लिए वरदान बन गई। इस काल मे वहाँ पर जो तीन ब्राह्मण और एक जैन गुफाये काटी गई उनमे दक्षिणी नही प्रत्युत् उत्तर की गुप्त कालीन कला का प्रभाव है।

वहाँ के आकारो मे पशु-पक्षी के रूप को एक कर देने की विचित्र विशेषता है। प्लेट न० १३ के नीचे वाले आकार मे तोता, मुर्गा और कुत्ता सम्मिश्रित रूप मे पाये जाते है। बीच का वर्तुलाकार जलचरो के रूप को लेकर बनाया गया है। साराश यह है कि उन कलाकारो ने प्रकृति की किसी भी वस्तु को लेकर अभीष्ट प्रभाव उत्पन्न कर दिया है।

उपर्युक्त दृष्टिकोण से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन गुफा मन्दिरो का निर्माण एक ही समिति के सरक्षण मे हुआ, स्थान भेद से विकास मे अन्तर आ जाना तो स्वाभाविक है।

८. मथुरा—कुषाण वश ने ईसा की दूसरी तीसरी शताब्दी मे उत्तर भारत के कलाकौशल को चरमसीमा पर पहुँचाया। उसके राज्य की सीमाएँ पेशावर माणिक्याल, सुई बिहार, मथुरा श्रावस्ती, सारनाथ आदि तक

मानी गई हैं। इन समस्त नगरो मे मथुरा विशेष प्रसिद्ध हो गया क्योकि पश्चिम से पूर्व तथा दक्षिण से उत्तर को जाने वाले व्यापारी यही से होकर गुजरते थे।

यह बात ठीक है कि व्यापार की दृष्टि से अधिक उत्पादन वहाँ की आकार कल्पनाओ में साची जैसी सफाई लाने मे बाधक हुआ किन्तु केन्द्र स्थल होने के कारण उन पर कई सस्कृतियो का प्रभाव अवश्य है। गोल आकारो के बीच मे मनुष्याकृति और चारो ओर कमल के आलकारिक रूप यहाँ की विशेषता है। इसी प्रकार आयताकारो मे भी मनुष्य, पशु तथा पक्षियो को एक मे मिलाकर एक नया रूप दे दिया गया है। शेरो के आकार मे एलीफेन्टा का सा सौन्दर्य है जिससे प्रतीत होता है कि अपने निर्माण काल मे ही ये सारे भारत मे फैल गये थे। भाँति-भाँति के फूलो, कलियो और पत्तियो के आलकारिक रूप भी पर्याप्त सख्या में मिलते हैं। १४ न० प्लेट के आकार ऐसे ही है। गोल तश्तरियो पर सीधे-सादे ज्यामितीय आकारो को भी लिया गया है। वहाँ बनी हुई मूर्तियो के आभरण तत्कालीन आकार परम्परा को समझने मे पर्याप्त सहायता करते हैं।

९. **सांची**—साची का विश्व-विश्रुत स्तूप दक्षिण के प्रसिद्ध आध्रवश के राज्य-काल मे निर्मित हुआ। प्रतीत होता है कि पहले उसके जगले लकडी के बनाये गये थे। कालान्तर मे उनके खराब हो जाने पर उनके स्थान पर पत्थरो के जगले तैयार किये गये। साची को इतना प्रसिद्ध करने वाली वस्तुएँ हैं वहाँ के सुन्दर द्वार। उन पर इतना महीन और त्रुटिहीन काम हुआ है कि वह कल्पना लोक की वस्तु सी प्रतीत होती है।

उत्तरी द्वार (जो सब से अधिक सुन्दर है) मे ऊपर की ओर तीन पंक्तियाँ हैं। तीनों में एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक मनुष्यो पशुओ तथा मोर इत्यादि पक्षियो के भाँति-भाँति के आलकारिक रूप मिलते हैं। बीच के आयताकार स्थानो मे सूरजमुखी और कोनो पर गोल रेखाओ से आकार बने हैं। कही-कही स्तूप के आकार का भी आलकारिक अकन है। इसी द्वार मे एक स्थान पर पख वाले हिरण का आकार कलाकार की नई सूझ है।

पूर्वी द्वार मे बैलो पर चढे सवारो का आकार कही और देखने को नही मिलता। उसके साथ ही साँडनी सवार आकार कल्पना के क्षेत्र में एक नयापन है।

एक स्थान पर नाना प्रकार के फूलो को इकट्ठा कर नये प्रकार का आकार उपस्थित करने का प्रयत्न भी किया गया है। फूलो मे सूरजमुखी शायद उन्हे अधिक प्रिय थे और पक्षियो मे बुगले। वैसे मोरो के आकार भी है किन्तु उन्हे स्वतन्त्र सत्ता नही प्राप्त हुई है।

स्तम्भो पर प्राप्त होने वाले आकार कमल से बने है, वे एलोरा के स्तम्भो के इतने निकट बैठते हैं मानो साँची के किसी कारीगर ने एलोरा में खुदाई की हो। स्तम्भो पर ही मनुष्याकृतियो को लेकर बनाए गए आकार स्वतन्त्र चित्र का सा सौन्दर्य रखते हैं। वे केवल सौन्दर्य प्रसाधन न रहकर हिन्दू पौराणिक गाथाओ के मूर्त्त रूप हैं। स्तम्भो के ऊपरी भाग को हस्तिमुख से सुशोभित करना परम्परागत है।

१०. **भरहुत**—नागौद रियासत मे भरहुत-स्तूप का निर्माण यहा के कलाकारो ने ही किया है किन्तु कुछ विद्वानो का कथन है कि स्तम्भों के ऊपरी भाग की बनावट पर पाश्चात्य प्रभाव है। उनमे बने शेरों और बैलो के आकार आत्मा मे भारतीय नही हैं।

प्लेट नं० १८ को देखने से पता चलता है कि किसी प्रकार घटियों का साधारण सा आकार भी आवृत्ति से कितना सुन्दर बन जाता है। झालरो मे ये लटकने से एक विशेष लहर पैदा कर देती है। इन आकारो का सौन्दर्य हमारे सामने तब और भी स्पष्ट हो जाता है जब हमारा ध्यान इस बात पर जाता है कि साँची की भाँति यहाँ पर भी ये पहले लकडी पर बनाये गये थे और बाद मे पत्थर पर।

११. प्राचीन पुस्तको में बने आकार—दीवारो पर और स्वतन्त्र चित्रो के साथ बने आकारो के अतिरिक्त प्राचीन पुस्तको मे भी आकार कल्पना का भण्डार मिलता है। मुसलमानो के धर्म मे मनुष्याकृति का अङ्कन खुदा के विरुद्ध खडे होना है, इसलिए उनकी पुस्तको की इस कमी को खुश-नसीवी और आकार कल्पना द्वारा पूरा किया गया। कालान्तर मे जब अकबर की उदार हृदयता ने धर्म की रूढियो को तोड दिया तो आकार कल्पना मे भी पशु पक्षी तथा मनुष्य इत्यादि के रूप समाविष्ट होने लगे। प्लेट न० २२ मे मुगल पुस्तको मे पाये जाने वाले आकारो को दिया गया है।

मुगलो से पूर्व जैन पुस्तकों के हाशियो पर भी आकार कल्पनाये मिलती हैं। उनके रङ्ग भडकीले हैं और आकारो मे वह सफाई नही है जो मुगल पुस्तको मे मिलती है। दूसरा अन्तर यह है कि मुगल पुस्तको मे जहाँ किसी विशिष्ट घटना, जो किसी भी व्यक्ति के जीवन मे घट सकती है, से सम्बन्धित आकार है, वहाँ जैन पुस्तको मे केवल महावीर जैन की जीवन घटनाओ को ही लिया गया है। दो आकारो को अलग करने के लिए एक या दो मोटी-मोटी रेखायें भर खीच दी गई है।

जाली का काम

यह तो नही कहा जा सकता कि मुसलमानो के आगमन से पूर्व भारत मे पत्थर को काटकर जाली बनाने का काम नही होता था क्योकि वेरूल की कैलास नामक गुफा में तथा दक्षिण के अन्य मन्दिरो में इसके अति प्राचीन नमूने मिलते है, किन्तु कुछ विशेष कारणो से मुसलमानो मे इस कला का जितना प्रचार हुआ और सौन्दर्य की जिस पराकाष्ठा तक इसको उन्होने पहुँचाया शायद किसी और जाति ने नही। व्याख्या की सुविधा के लिए यदि हिन्दू पद्धति और मुसलमान पद्धति सज्ञायें ले ली जाय तो कह सकते है कि प्रथम के अन्तर्गत आने वाली जालियाँ बहुधा षट्कोण की आकार कल्पना लिए हुये होती है जिनमे बीच-बीच में पत्र समूह भी आ जाता है। कही-कही पौराणिक घटनाओ को दर्शाने वाली मनुष्याकृतियाँ भी मिलती हैं।

मुसलमानो को कला के क्षेत्र मे अधिक स्वतन्त्रता नही प्राप्त थी अतएव विषय-चयन की दृष्टि से उनका क्षेत्र बहुत सीमित था। फलस्वरूप उस थोडे से क्षेत्र मे ही उन्होने अपनी कला को उत्कृष्टता की चरम सीमा पर पहुँचा दिया। ज्यामितीय आकारो के अपरिमित विभेद उनकी बनाई गई जालियो में मिलते हैं।

मुसलमानी ढग की जालियो मे सर्वोत्कृष्ट नमूने गुजरात प्रान्त मे अहमदाबाद नगर मे मिलते हैं। इसके पहले बनी मुसलमाँनी इमारतो मे और यहाँ की मस्जिदो में भी जालियो मे भारतीय परम्परा का पर्याप्त प्रभाव मिलता है, किन्तु दरवाजो के स्थान पर तथा टट्टियो (Screens) के लिए भी इस जाली का ही प्रयोग करना उनकी नई सूझ थी। मकबरो के चारो ओर बरामदे की आड के लिए भी ये जालियाँ ही बनाई गई हैं।

अहमदाबाद—ईसा सन् १५०० मे बने सिदी सैय्यद की मस्जिद मे बनी दस अर्द्ध-वृत्ताकार खिडकियों की जालियाँ अहमदाबाद मे नही अपितु संसार भर मे प्रसिद्ध हैं। उनमे से दो के नमूने इस पुस्तक में दिये गये है। ज्यामितीय आकारो को लेकर चला है और दूसरा भारतीय पद्धति पर पेड के रूप को।

फर्गुसन का कथन है—To excel the skill with which the vegetable form are conventionalized just to the extent required for the purpose. The equal spacing also of the subject by the three ordinary trees and four palm trees take it out of the category of direct imitation of nature, and renders it sufficiently structural for its situation, but perhaps the greatest skill is shown in the even manner in which the pattern is spread over the surface There are some exquisite specimens of lattices in precious marbles at Agra and Delhi, but none equal to the designs of Ahmedabad.

आगरा और दिल्ली मे भी जाली का यह काम इतना सुन्दर है और इतनी अधिक मात्रा मे है कि उनमे से कौन सा सुन्दर है यह छाँटना कठिन हो जाता है। अत. फतेहपुर सीकरी मे ईसा सन् १५७१ मे बने सलीम चिश्ती के मकबरे के बरामदे मे सगमरमर की बाड (Screen) मे बने ज्यामितीय तथा पौधे के आलकारिक आकार के सम्मिश्रण से बनी सुन्दर आकार कल्पना का नमूना दे रहे हैं ताकि विद्यार्थी स्वय अकबर कालीन जाली की उत्कृष्टता का आभास पा सके।

ताजमहल मे चैत्य (कब्र) के चारों ओर बनी बाड़ शाहजहाँ कालीन जाली का अद्वितीय नमूना है। इनमें उन्ही रेखाओ की आवृत्ति उसे एशियाई जालियो की अपेक्षा इटली के अभ्युदय काल की जालियो के अधिक निकट ले आती है। सर जॉन मार्शल के अनुसार ताजमहल के समस्त अलकारणो में केवल यहीं इटली का प्रभाव मिलता है तो भी इसे विशुद्ध भारतीय इसलिए माना गया है क्योकि यह आकार कपडे के लिए उपयुक्त होकर भी पत्थर पर बनाया गया है।

जड़ाई और पच्चीकारी का काम

संगमरमर मे जड़ाई और पच्चीकारी—चौहदवी शताब्दी मे एशिया तथा यूरोप मे दीवार इत्यादि किसी फलक की समरसता को भग करने के लिए बीच-बीच मे सगमरमर के टुकडे जडकर एक लम्बी पेटी बना देने की प्रथा थी। भारत मे तुगलक शाह का मकबरा और अलाउद्दीन का दरवाजा इसके उदाहरण हैं। मुसलमानो ने इस पद्धति को मध्य एशिया, सीरिया और मिश्र मे तथा ईसाइयो ने इटली की इमारतो मे अपनाया। अकबर के समय मे इस जडाई के साथ-साथ पच्चीकारी का काम भी होने लगा, जो रोमन और बिजेन्टाइन की पद्धति पर छोटे से बडा बनाया जाता था, किन्तु आकार कल्पना हमेशा फारसी ही होती थी। इनके बीच-बीच मे हरे मीने का काम उसके सौन्दर्य को द्विगुणित कर देता था।

पिएट्रा डुरा—इटली ने जड़ाई के काम मे कुछ परिवर्तन कर एक नई कला को जन्म दिया। यह था गोमेदक रत्न, सूर्यकान्त मणि इत्यादि कीमती पत्थरो को पतला-पतला काटकर सगमरमर मे बने गढढो मे जडना। प्रान्तीय भाषा मे इनका नाम रखा गया पिएट्रा डुरा। फ्लोरेस मे इसके तत्कालीन नमूने मिलते है जो है तो छोटे पर जिनसे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि बडे पैमाने मे वे कैसे सुन्दर लगेगे।

बडे पैमाने पर उनके सौन्दर्य के दर्शन भारतवर्ष मे होते है क्योकि मुसलमान काल मे जहाँ तक कला का प्रश्न था खर्च की ओर कोई ध्यान नही दिया जाता था। अकबर के मकबरे (१६०५-१२) के दक्षिणी दरवाजे पर लाल बलुआ पर की गई पच्चीकारी प्रभाव मे इटली के पिएट्रा डुरा के समान ही है।

मुगल बादशाह फूलो के बडे शौकीन थे, अतएव उनके वरद् हस्त के नीचे पनपने वाली कला मे फूल, पौधों का कलात्मक रूप निखरना स्वाभाविक था। भारतीय फूलो को फारसी ढग का आलकारिक रूप देकर दो विभिन्न सस्कृतियो का एकीकरण भारतीय मस्तिष्क की निराली सूझ है।

पिएट्रा डुरा के कुछ प्राचीन भारतीय नमूने—मेजर काले के अनुसार उदयपुर के जुगमन्दिर महल मे बना 'गोल मण्डल' (ईसा सन् १६२३ के लगभग) पिएट्रा डुरा जड़ाई का पहला नमूना है। यह शाहजादा खुर्रम (बाद मे शहशाह शाजहाँ) के लिए बनवाया गया था। ईसा सन् १६२१ मे आगरा मे बने एतमादउद्दौला के मकबरे (जो उसकी लडकी नूरजहाँ ने बनवाया था) मे आकार कल्पना की इस पद्धति को बडे पैमाने पर अपनाया गया है।

शाहजहाँ द्वारा बनवाई गई इमारते—(ईसा सन् १६२७-५८) देश निष्कासन काल मे शाहजहाँ के मन पर पिएट्रा डुरा का इतना अधिक प्रभाव पडा कि बादशाह बनने पर पच्चीकारी की ओर बिल्कुल

नोट—पिएट्रा डुरा की उत्पत्ति—**मेजर कॉले का कथन है कि पिएट्रा डुरा के प्राचीनतम नमूने फर्डिनेन्ड प्रथम द्वारा बनवाई गई फेब्रिका नामक इमारत में मिलते हैं। भारत मे इसके उदाहरण इतने पुराने नहीं मिलते हैं। अतः उनका मत है कि भारत में पिएट्रा डुरा इटली से आया। दूसरी ओर सर जॉन मार्शल का कथन है कि मध्य भारत के मण्डु नगर में खिलजी (जो ईसा सन् १४७४ मे मरा) के मकबरे के ध्वसावशेषो मे पिएट्रा डुरा के नमूने मिलते है ऐसी अवस्था मे यह कैसे माना जा सकता है कि उसका प्रवेश इटली से हुआ। लेकिन उन्हीं के पहले के वृत्तान्तो मे यह झलक मिलती है कि इस मकबरे के ध्वंसावशेषो मे प्राप्त जड़ाई के नमूने पिएट्रा डुरा के अन्तर्गत नही रख सकते।**

ध्यान ही नही दिया। ताजमहल; आगरा और दिल्ली मे पिएट्रा डुरा का इतना अधिक काम है कि किताबो पर किताबे लिखी जा सकती हैं। उनमे सरक्षक के कलात्मक सम्मान के प्रत्यक्ष दर्शन होते हैं।

पिएट्रा डुरा के आधुनिक नमूने—अठारहवी शताब्दी मे मुगल राज्य के पतन के पश्चात् उसके सरक्षण मे पनपने वाली कलाओ का ह्रास होना भी स्वाभाविक था। ईसा सन् १८३० तक लोग इसे बिल्कुल भूले रहे। इसी सन् मे अस्पतालो के इन्सपेक्टर जनरल डा० मुरे (Dr. Murray) शिल्पियो को फिर से इस कला के उत्थान के लिए प्रेरणा दी। उनका उद्देश्य इसे व्यावसायिक रूप देने का था। तब से यूरोप यात्रियो को बेचने के लिए इसे छोटे पैमाने पर बनाया जाता है। अभी तक किसी ने पूरी इमारत को इसी से अलकृत करने की नही सोची है।

कांच की पच्चीकारी—फतहपुर सीकरी मे सलीम चिश्ती के मकबरे मे सीपी की पच्चीकारी की गई है। कांच की पच्चीकारी उदयपुर के शीश महल, आंबेर, आगरा, लाहौर और दूसरे स्थानो पर मिलती है।

टाइल

प्राचीन फारस के टाइल—बेबीलोनिया मे दीवारो को सजाने के लिए उनमे बीच बीच मे रङ्गीन मिट्टी के आँवे मे पके हुये चौकोर टुकड़ो को जडने की प्रथा थी। वहाँ से फारस वालो ने इसे सीखा और अन्यान्य कलाओ मे स्थान दिया। चीन के प्रभाव मे आकर उन्होने इसमे एक और परिवर्तन किया, वह था टाइलो पर शीशे की सी चमक लाना। इस प्रकार टाइलो मे टिकाऊपन भी आ गया और सौन्दर्य भी।

तैमूर कालीन फारसी टाइल—एम० मिजन का विश्वास है कि फारस की चौदहवी और पन्द्रहवी शताब्दी मे बनी इमारतो (विशेषत तैमूर के मकबरे मे) जो चमकदार टाइलो का उपयोग हुआ है उसकी रीति उन्होने खुरासान निवासियो से ली थी। भारत मे रङ्गीन टाइलो का उपयोग १४वी शताब्दी के प्रथम चरण मे बनी इमारतो मे मिलता है। हो सकता है इनमे के कुछ १३वी शताब्दी मे ही बन गइ हो। हाँ यह अवश्य है कि मुगल बादशाहो की इस तैमूरी परम्परा ने टाइलो के इस प्रयोग को एक फैशन बना दिया। कुछ इसी विचार धारा से प्रभावित होकर कुछ लोगो का कथन है कि भारतीय टाइल सुन्दर होते हुए भी रङ्ग और चमक मे फारसी टाइलो की समता नही कर सकते। मुलतान मे टाइलो के काम का आरम्भिक युग ई० सन १२६४ और १२८६ के बीच मुलतान मे बाहा-उल-हक का मकबरा बना। ई० सन् १८८२ मे जब कनिंघम साहब उसे देखने गये थे तो उस समय तक उसमे कामदार टाइलो के नमूने बचे थे। उनमे शायद कुछ मकबरे के निर्माण के बहुत बाद मे लगाये गये हो क्योकि १७वी शताब्दी मे वह मकबरा फिर से बनाया गया था। सर जॉन मार्शल का कथन है कि अधिकतर टाइल सत्रहवी शती के ही है। ई० सन् १३२० मे बना बाहा-उल-हक के पोते रूकु-उदीन का अठपहलू मकबरा जो मुल्तान मे ही बना है, बाहर की ओर टाइलो से बनी आकार कल्पनाओ के लिए प्रसिद्ध है। इसकी गहरी लाल ईंटो के बीच मे गहरे नीले, आसमानी नीले और सफेद टाइलो से रङ्ग योजना मे प्रखरता आ गई है। कालान्तर मे विकसित होने वाली पच्चीकारी और इनमे केवल इतना ही अन्तर है कि ये पृष्ठ भूमि से आधा इच से लेकर दो इच तक उभरे रहते हैं। इनके बनाने मे कठिनाई तो अवश्य आती होगी किन्तु इनमे स्वाभाविक रूप से आने वाले छाया प्रकाश से निस्सन्देह वृद्धि होती थी। १५वी शती और उसके बाद बने सीतापुर के मकबरो मे पीला रङ्ग भी प्रयुक्त हुआ।

गौर टाइल—बङ्गाल के गौर प्रान्त में ई० सन् १४७५ और १४८० के बीच तान्तीपारा और लत्तन नाम की दो मस्जिदे बनी। इनकी आकार कल्पना के लिए प्रयोग मे लाये गये टाइल पुरानी पद्धति से ही पकाये गये है। दक्षिण केन्सिगटन के विक्टोरिया और एलबर्ट अजायबघर मे इन टाइलो के कुछ नमूने हैं जिनके बारे मे कहा गया है कि उनकी आकर कल्पना और रङ्ग योजना मुसलमानी टाइलो से भिन्न विशुद्ध भारतीय है। श्रीयुत वुडवर्ड के कथनानुसार ये टाइल न होकर पकी हुई ईटो के अधिक निकट बैठती है। अन्तर केवल इतना है कि इनके किनारे भर दिये गये हैं जिन पर गहरा नीला रङ्ग चढा दिया गया है। इसी नीली पृष्ठ भूमि पर सफेद से ११वी—१२वी शती के ढङ्ग की आकार कल्पना की गई है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि मुसलमानो की सत्ता स्थापित होने के पूर्व भी शायद बङ्गाल के हिन्दुओ को यह कला अपने प्रारम्भिक रूप मे ज्ञात थी।

ग्वालियर के टाइल—ई० की १६वी शती के आरम्भ मे ग्वालियर मे बने मानसिह के महल मे इन चमकदार टाइलो का बहुत प्रयोग हुआ है। इसका विवरण हमे 'बाबर' के सस्मरणो मे मिलता है। दीवारो के बाहरी भाग में हरे रग के टाइल लगे हैं और चारो ओर रगीन टाइलो से ही कदली स्तम्भ बनाये गये हैं।

ई० सन् १८७१ मे लिखे श्री कनिघम साहब के अभिलेखानुसार—केले के पेड अब भी बचे हुए हैं जिनकी चर्चा बाबर ने की है। केलो को प्राकृतिक ऊँचाई का बनाया गया है केवल हरे रग के पत्तो का पीले तने से एक ही प्रकार से निकालना कुछ अस्वाभाविक बन गया है। हाँ नीले टाइलो मे शक्करपारे की आकार कल्पना और नजदीक-नजदीक आडी रेखाये बडा आकर्षक प्रभाव उत्पन्न करती हैं।

मुगलकालीन टाइलो का काम—मुगल काल मे इस कला ने बहुत विकास किया। इस काल मे अधिकतर टाइलो के छोटे-छोटे टुकडे काट कर दूसरी पृष्ठ भूमि मे पच्चीकारी के ढग पर जड देते थे। इसको उन्होने एक नया नाम 'कशी' दिया। इस प्रकार का काम १७वी शती के बाद का अधिक है और उसमे रग की विविधता भी मिलती है। जे० एल० किपलिंग का कहना है कि ये कलाकार पहले अभीष्ट आकार की आकार कल्पनाये बना लेते थे तत्पश्चात् पकाने से पहले उनके छोटे-छोटे टुकडे कर लेते थे। किन्तु ए० ए० एन्ड्रूज का कथन है कि पकाने के के बाद, उनको चमकदार बनाने के बाद उनके टुकडे किये जाते थे।

यह 'कशी' का काम शेरशाह और हुमायूँ के मकबरो मे कम, जहाँगीर और शाहजहाँ के मकबरो मे अधिक पाया जाता है। आज यह कला मर चुकी है।

लाहौर के किले मे टाइलो का काम—लाहौर के किले मे विश्व विश्रुत टाइलो का पट्टी को इस सम्बन्ध मे नही भुलाया जा सकता। यह हाथी-पोल से लेकर उत्तर पूर्व के आगन मे बनी बुर्जी तक ४६७ गज लम्बी और १७ गज चौडी है। लगभग सम्पूर्ण पृष्ठ भूमि पर हाथियो की लडाई, पोलो का खेल तथा अन्य दृश्य बने हुए हैं। डा० बोगल ने ११६ गज तक की आकार कल्पनाओ का ट्रेस लिया है जिनमे से कुछ पजाब सर्कल की ए० सोसायटी के प्रगति विवरण मे छोटे पैमाने पर निकले हैं।

वजीर खान की मस्जिद—बड़े पैमाने पर दुनिया मे सबसे सुन्दर काशी के नमूने सन् १६३४ ई० मे वजीर खान (लाहौर के गवर्नर) द्वारा बनवाई गई मस्जिद मे मिलते है। इस गुम्बद नुमा इमारत के चारो कोनो पर छोटी-छोटी पतली २ ईंटो से बनी चार सुन्दर मीनारे हैं। सम्पूर्ण बाह्य भाग मे अत्यन्त चमकदार टाइलो से आकार कल्पनायें बनी है।

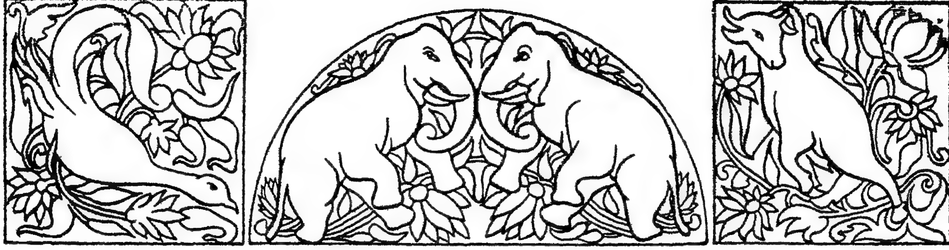
चीनी का रोजा—स्वर्गीय श्री ई० डब्लू० स्मिथ ने अपनी 'कशी' से सम्बन्धित पुस्तक मे आगरा के चीनी के रोजे की बहुत प्रशसा की है। फलत. उसे पर्याप्त लोकप्रियता प्राप्त हुई। यह अठपहलू गुम्बद नुमा मकबरा कौन से सन् मे बना यह तो ठीक-ठीक नही बताया जा सकता पर कहा जाता है कि कविवर अफजल खान की यादगार मे (जिसकी मृत्यु सन् १७३९ में हुई) औरगजेब ने इसे बनवाया था। और लोगो का कहना है कि आरम्भ मे यह ऊपर से लेकर नीचे तक विविध रगो में 'कशी' के काम से भरा हुआ था। टाइलो की मोटाई ५/८ इच है और वे एक इच मोटे प्लास्टर पर जो स्वय दो इच मोटे एक दूसरे प्लास्टर पर बिठाया गया है, जडे गये हैं। रगो मे नीला, हरा, नारगी, सिंदूरी रक्तिम प्रमुख हैं वैसे इनसे बने कई हल्के गहरे रग भी मिलते है किन्तु धातु जैसी चमक सबमे मिलती है। मकबरे के भीतरी भाग मे भी चित्रकारी मिलती है। आधुनिक टाइल (१८वी शती के चौकोर टाइल) टाइलो का तीसरा प्रकार १८वी शती की इमारतो मे मिलता है। उदाहरण स्वरूप लाहौर मे मुहम्मद अमीम की मस्जिद और उसके निकट जॅकरिया खान की मस्जिद को लिया जा सकता है। जॅकरिया खान की मस्जिद वहाँ के राजप्रमुख (सन् १७१७-१७३८ ई०) की बनवाई हुई है। बड़े आश्चर्य की बात है कि शाहदरा में सन् १६६४ ई० मे बने आसफ

खान के मकबरे मे भी आधुनिक ढग की कशी का काम मिलता है। ये टाइल चौकोर हैं। प्राचीन टाइलो मे हर इकाई मे आकार कल्पना अलग होती थी किन्तु इनमे यह बात नही पाई जाती। प्रतीत होता है कि यह आधुनिक पद्धति यूरोप से ग्रहण की गई है। नीले, पीले और हरे रग भी बहुत हल्के हैं।

लाहौर के निकट बेगमपुरा मे शर्फ-उन्निसा का सारवला मकबरे में कशी के काम के अतिरिक्त दीवारो के निचले भाग मे नीले और सफेद रग के चौकोर टाइले जड़े गये हैं ठीक इसी प्रकार जिस प्रकार पश्चिमी यूरोप मे मिलते हैं अत हम इस मकबरे को भी १८वी शती की ही कृति मान सकते हैं।

मुल्तान और सिंध के आधुनिक ढग के टाइलो का विवरण व्यवसाय सम्बन्धी अनेक पुस्तको मे मिलता है। सिन्धु के टाइलो के स० १५०९ ई० के प्राचीनतम नमूने दबगीर मस्जिद और मिर्जा जानी-बेग मस्जिद मे मिलते हैं। इनमे केवल दो ही रग मिलते हैं—गहरा नीला और हल्का नीला।

प्लेट नं० १

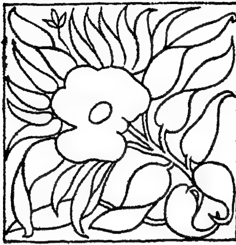


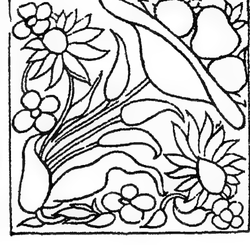




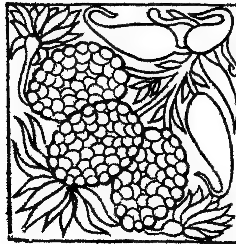


प्लेट नं० २



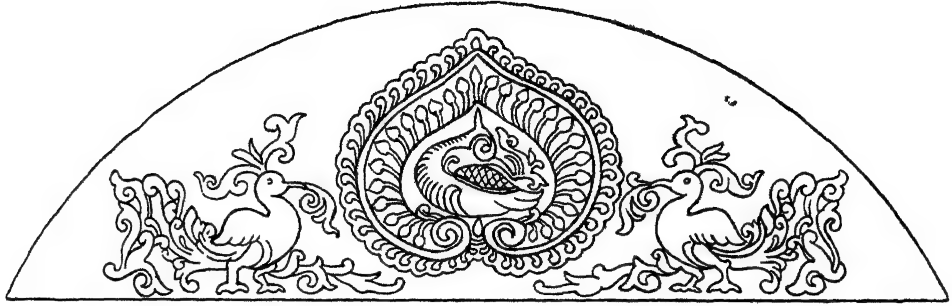
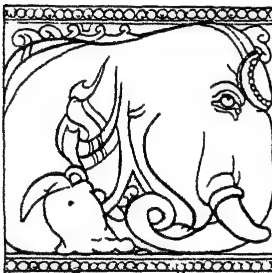
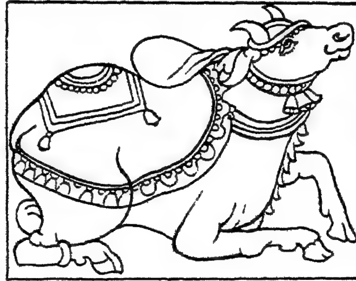


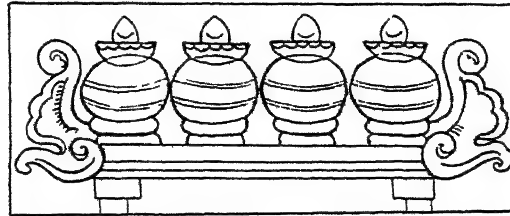
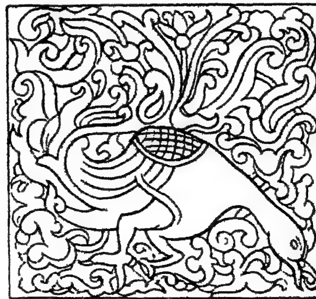




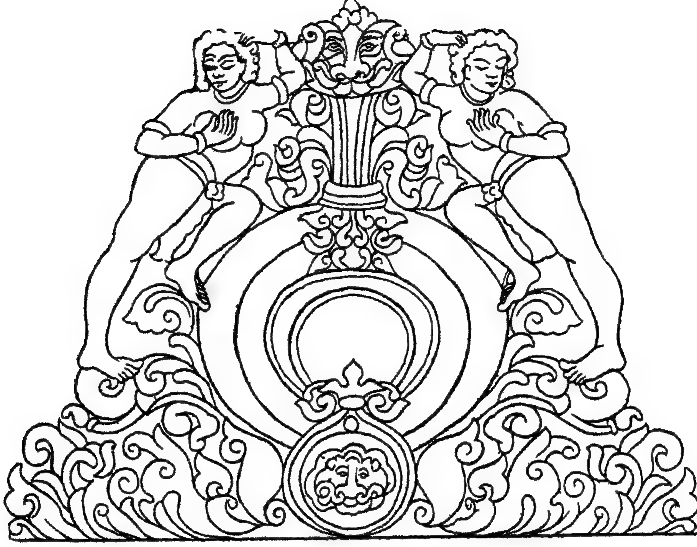


प्लेट नं० ३

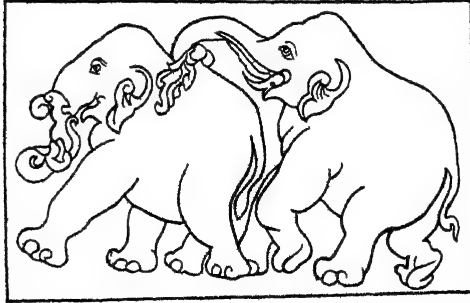





प्लेट नं० ४



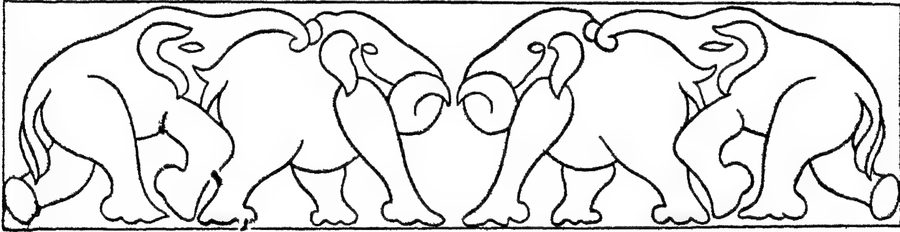


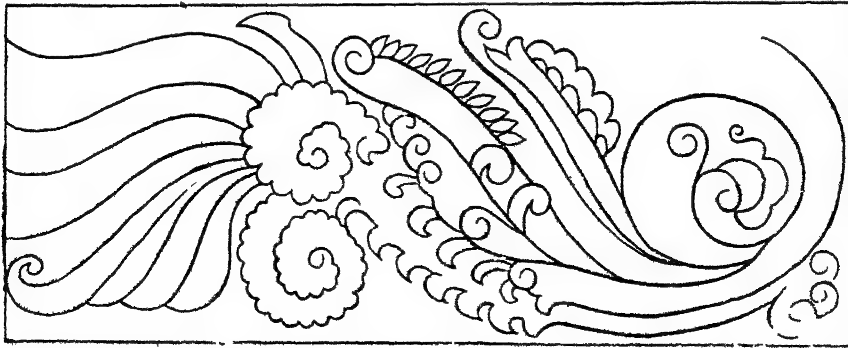


प्लेट नं० ५

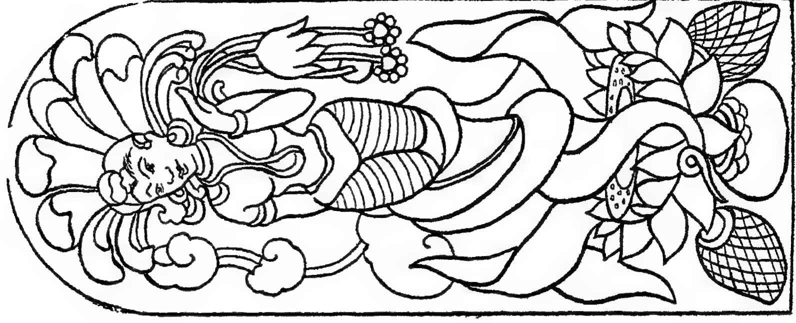


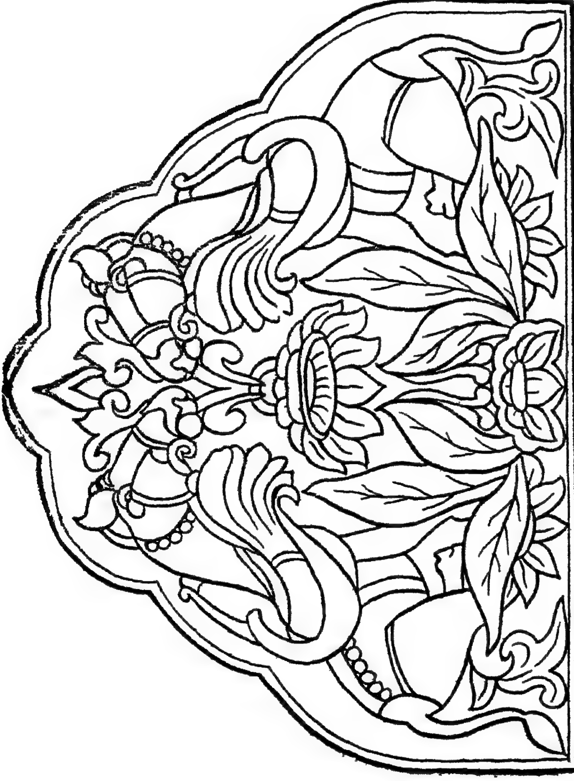


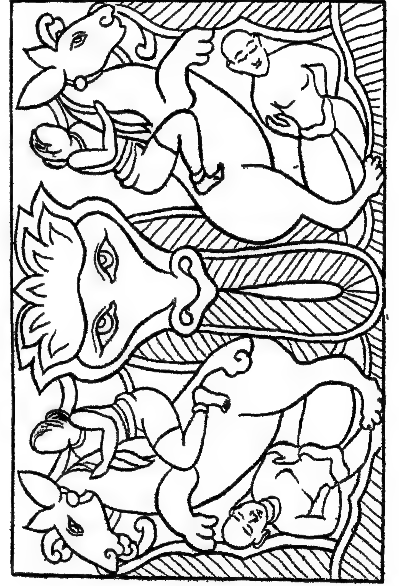


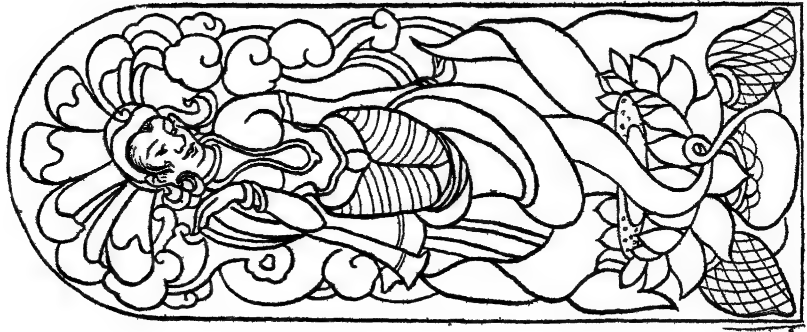


प्लेट नं० ६

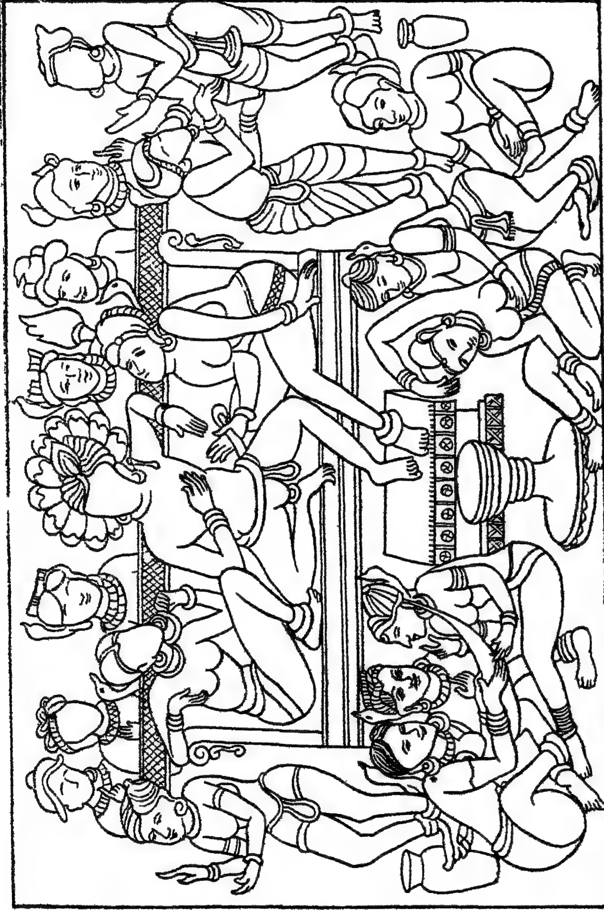


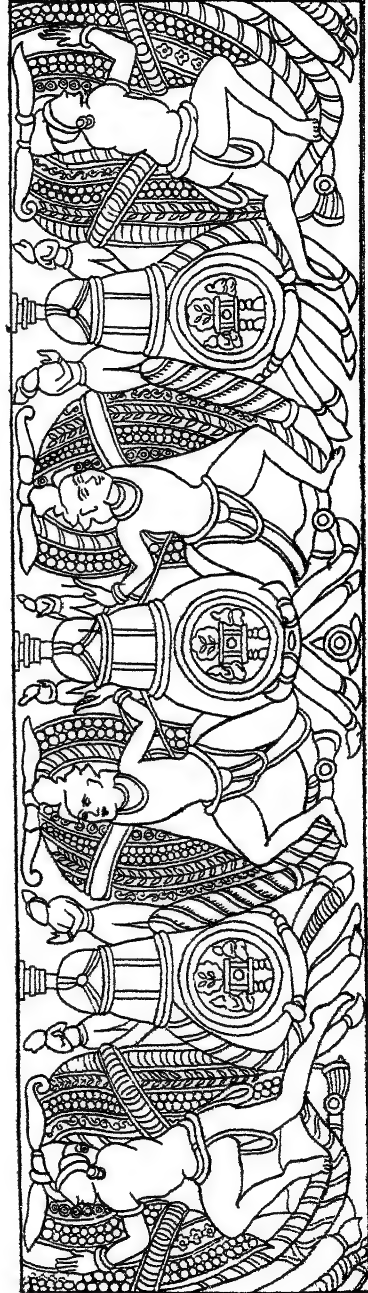




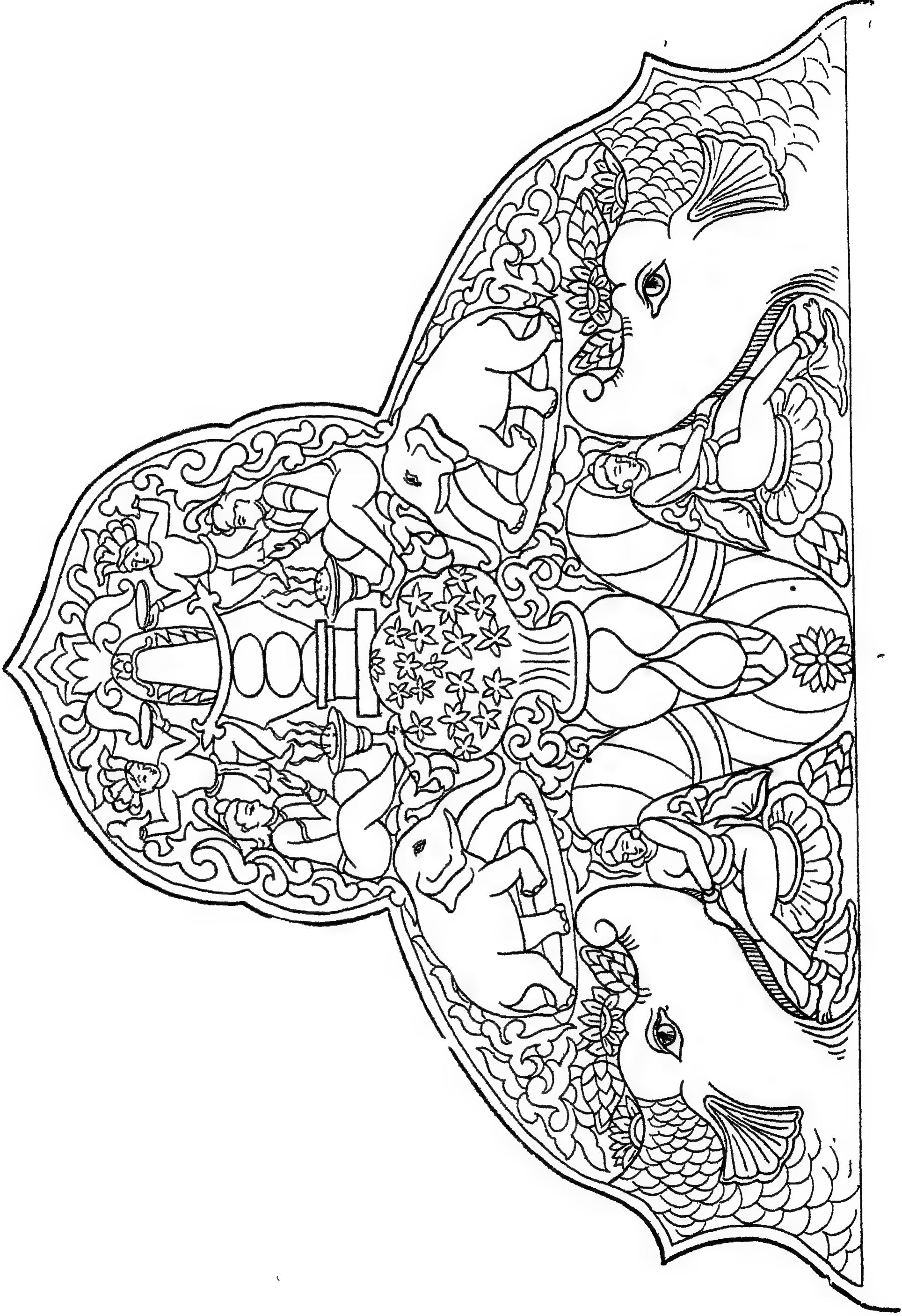


प्लेट नं० ७

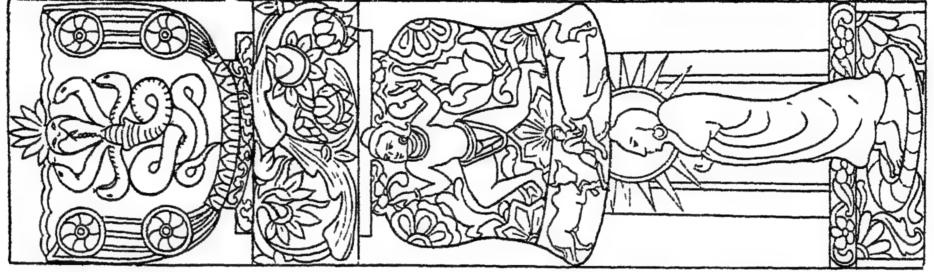




प्लेट नं० ८

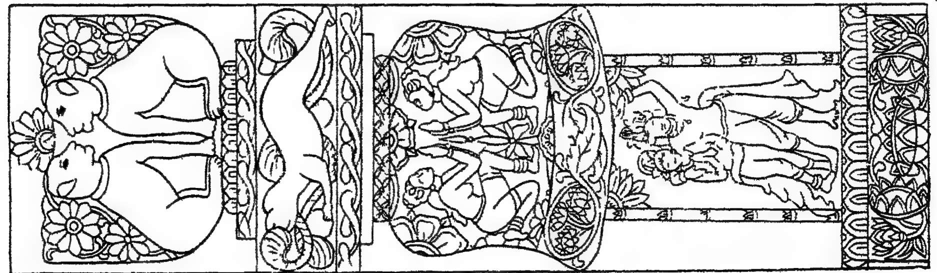


प्लेट नं० ६









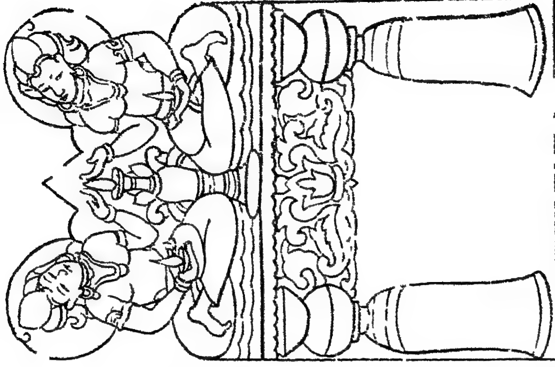
प्लेट नं० १०

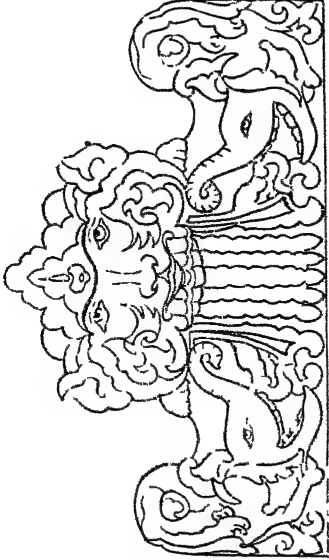






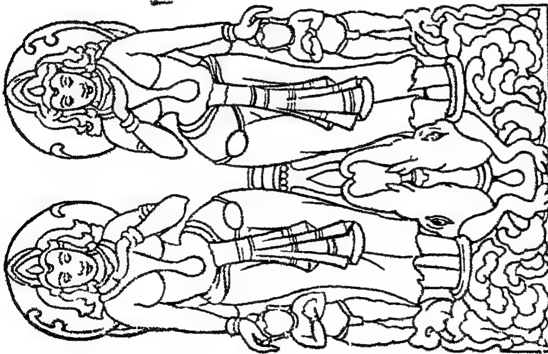
प्लेट नं० ११

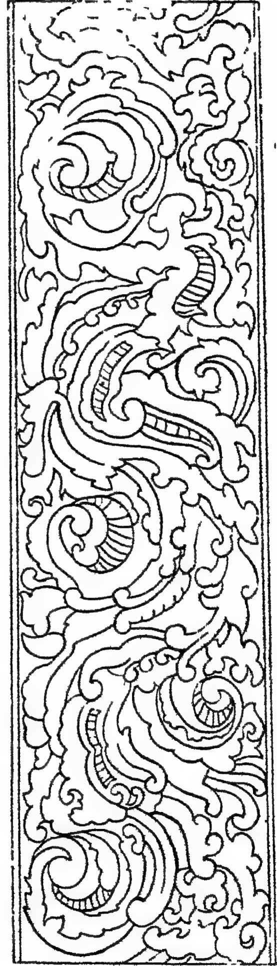




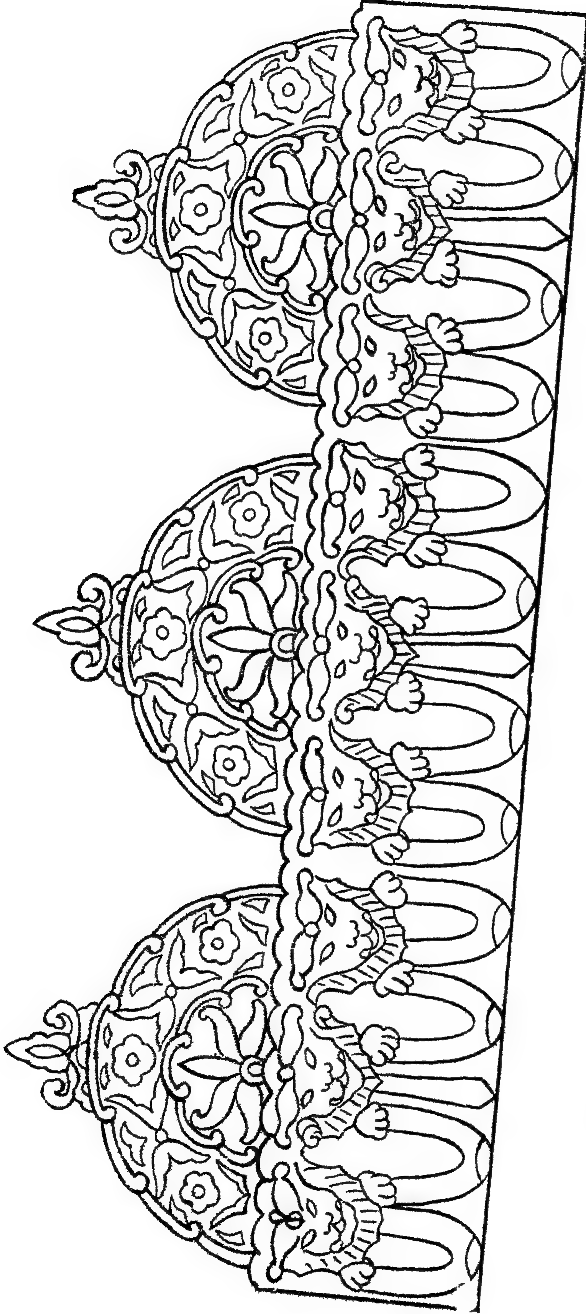


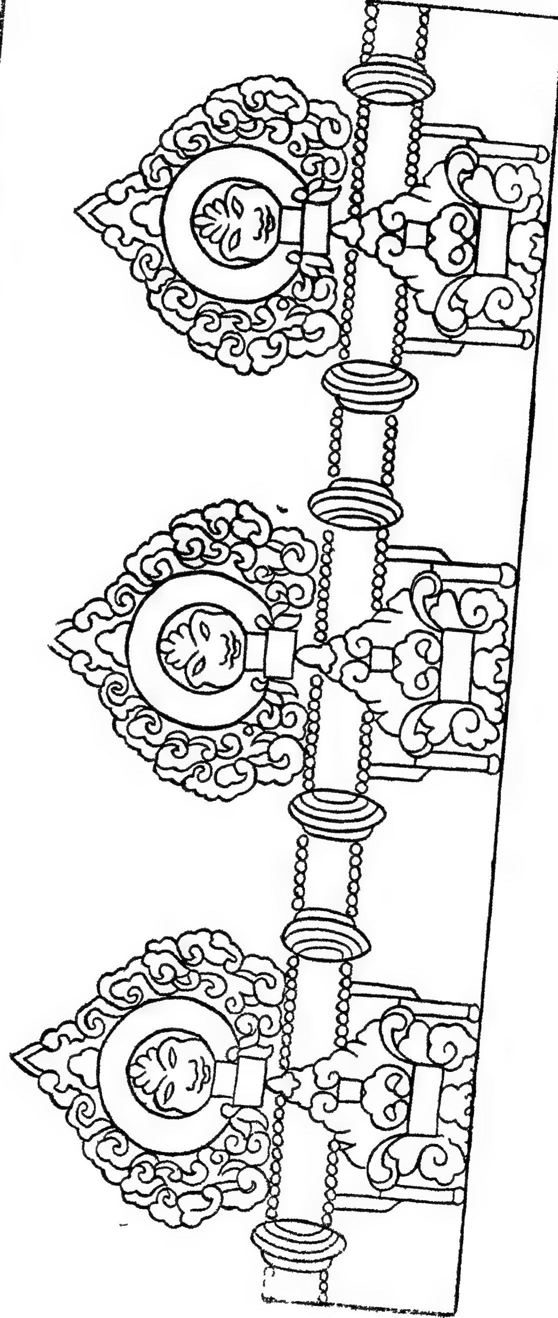




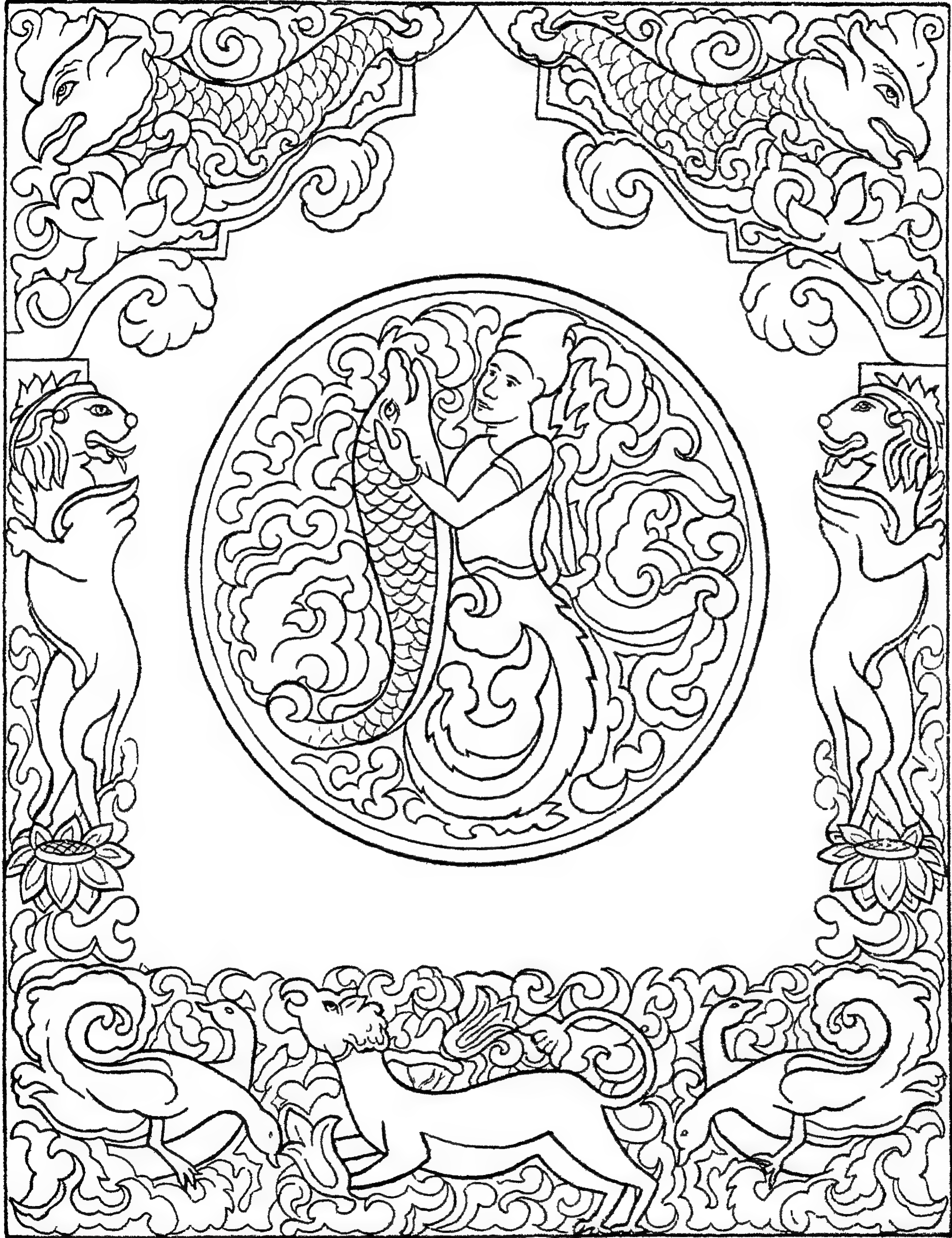


प्लेट नं० १२





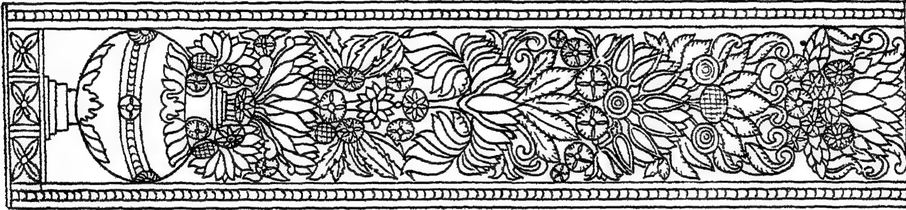
प्लेट नं० १३



प्लेट नं० १४



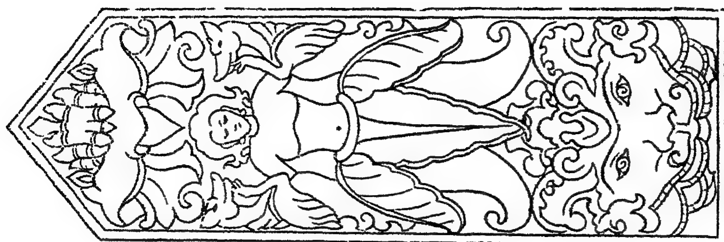


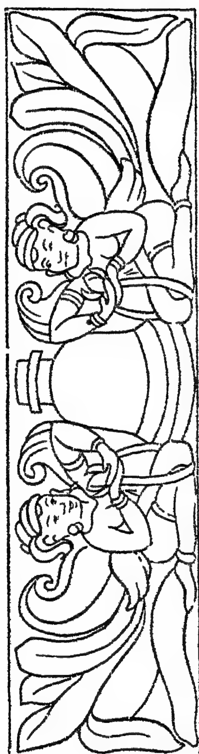


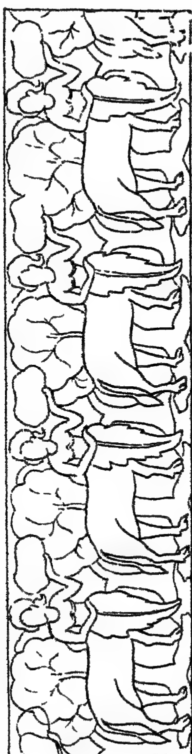




प्लेट नं० १५





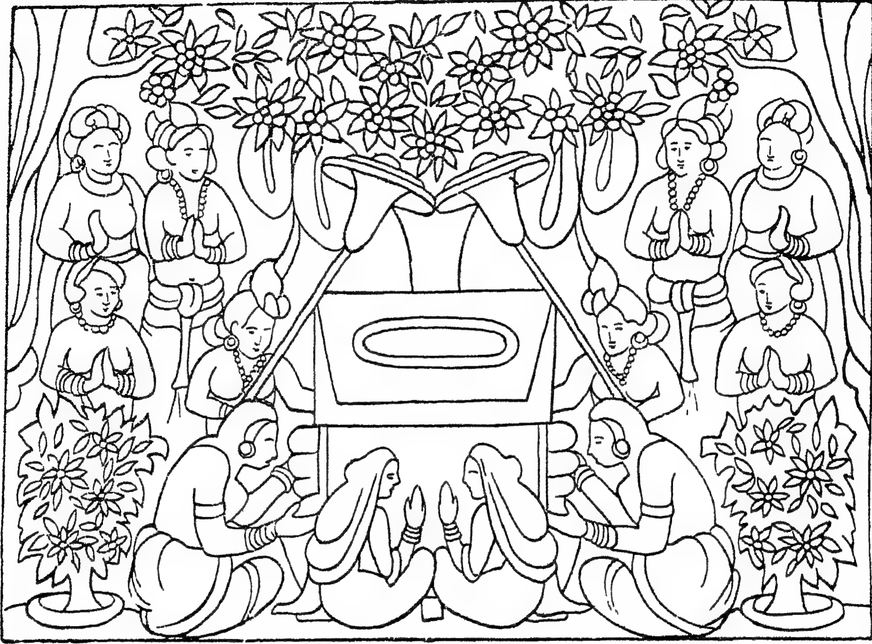




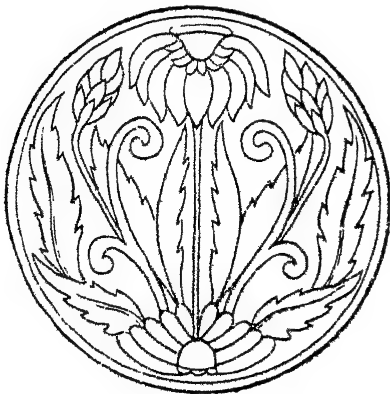




प्लेट नं० १६

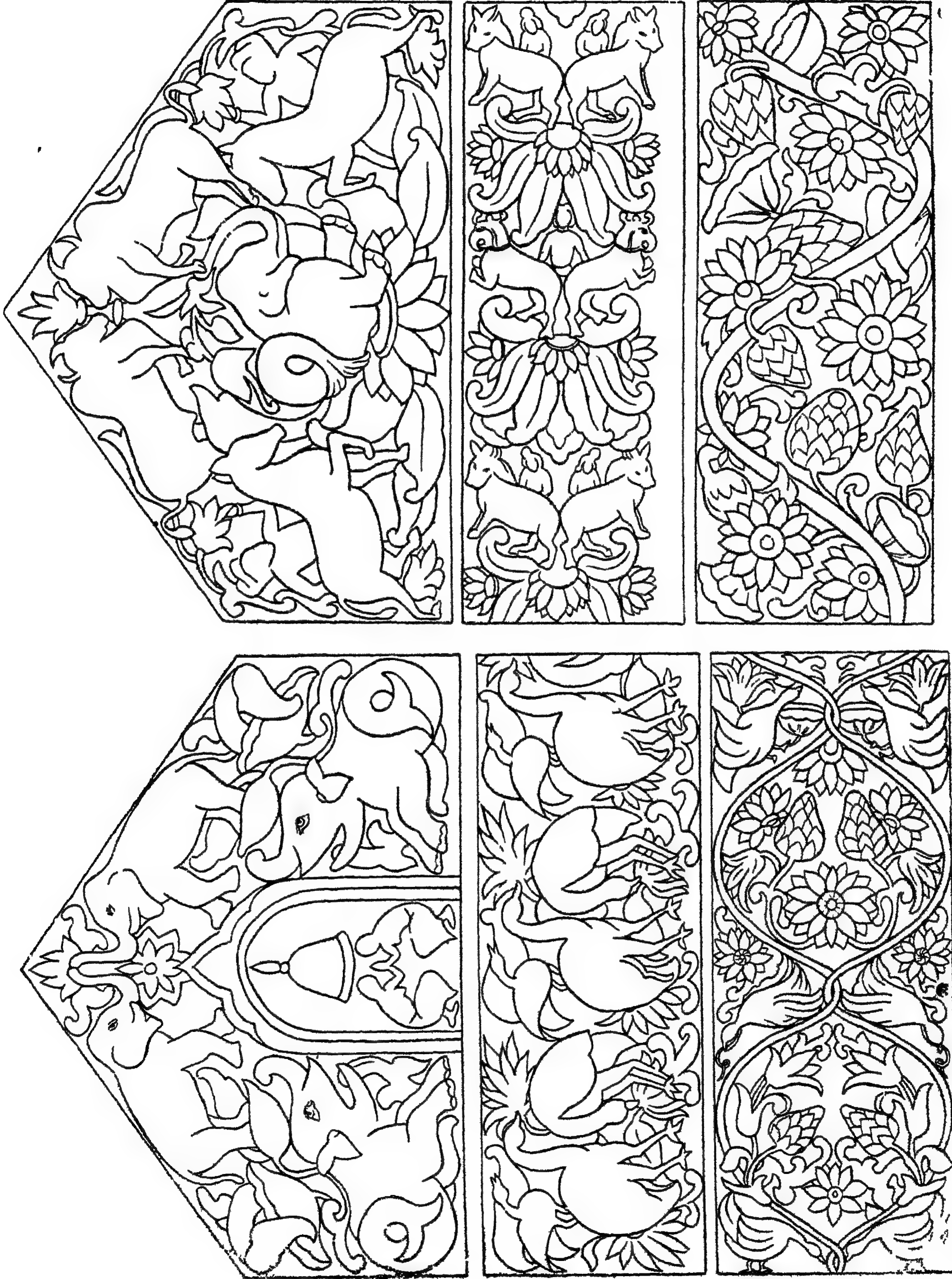




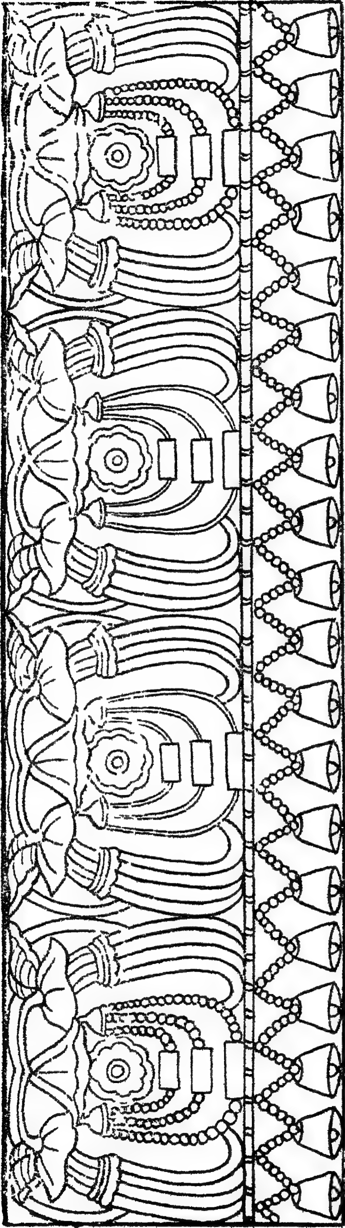


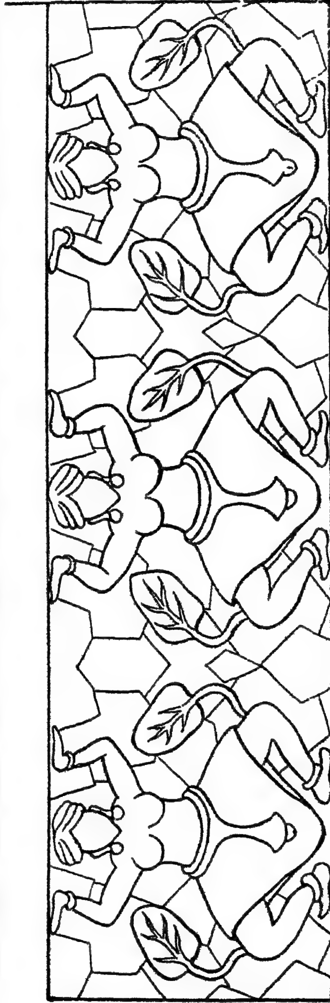


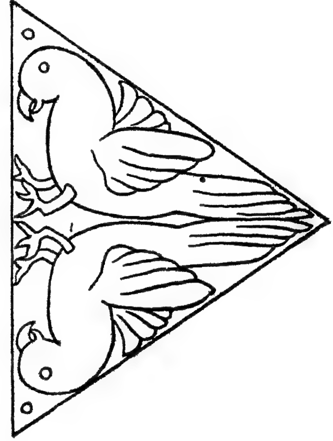
प्लेट नं० १७



प्लेट न० १८



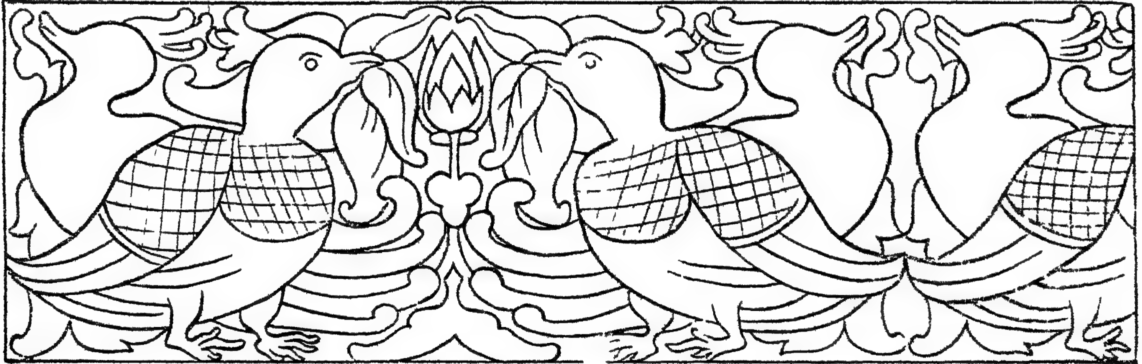


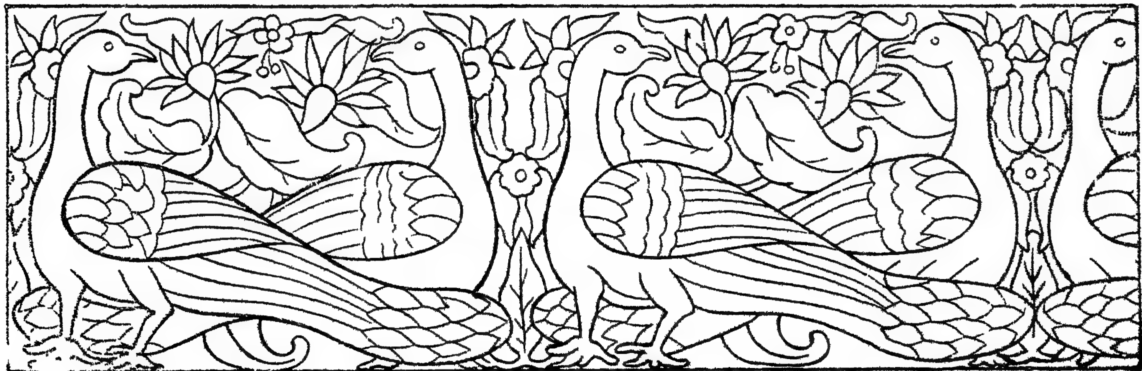


प्लेट नं० १६

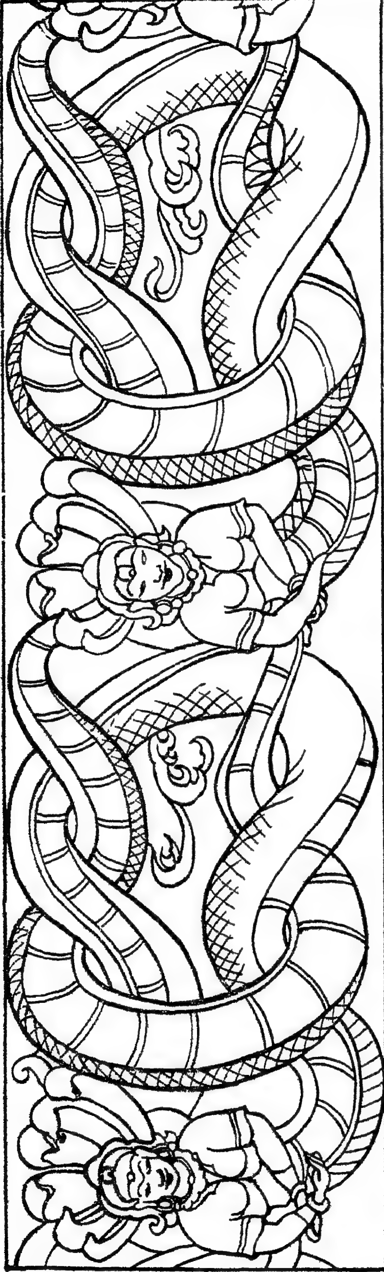




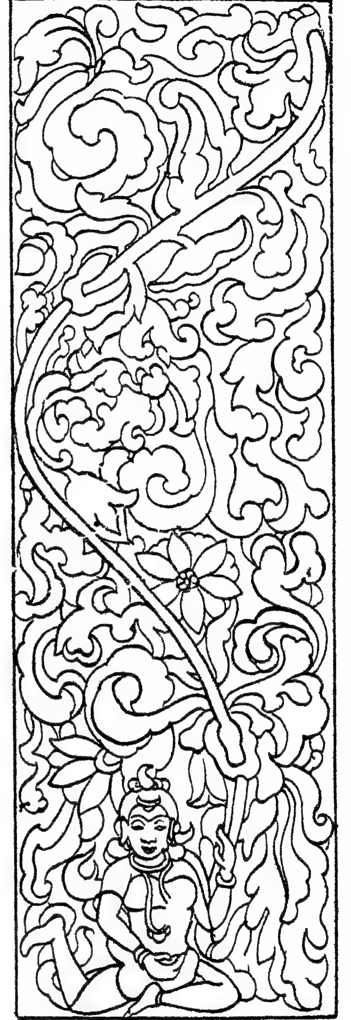




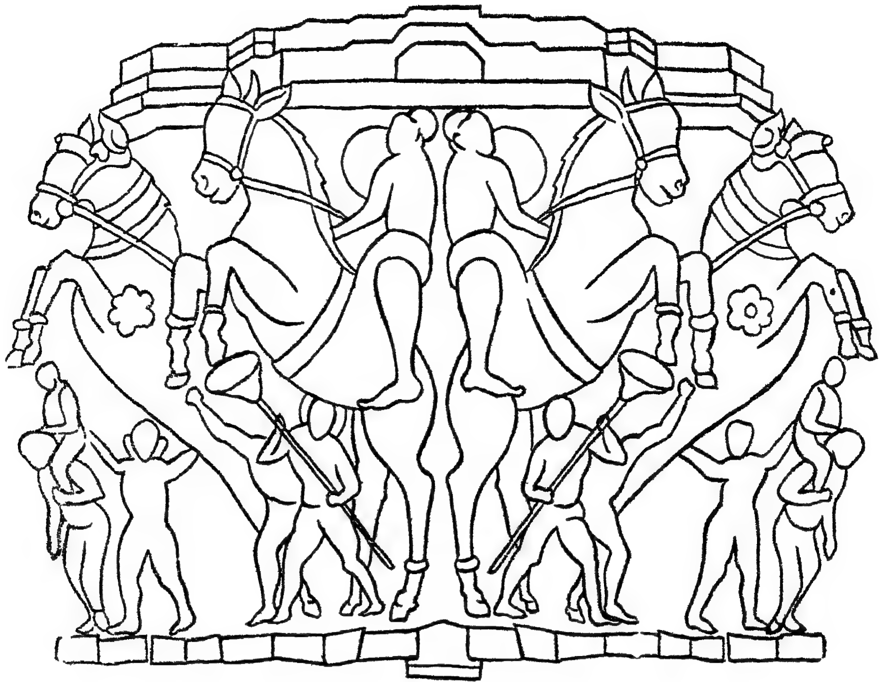
प्लेट नं० २०







प्लेट नं० २१



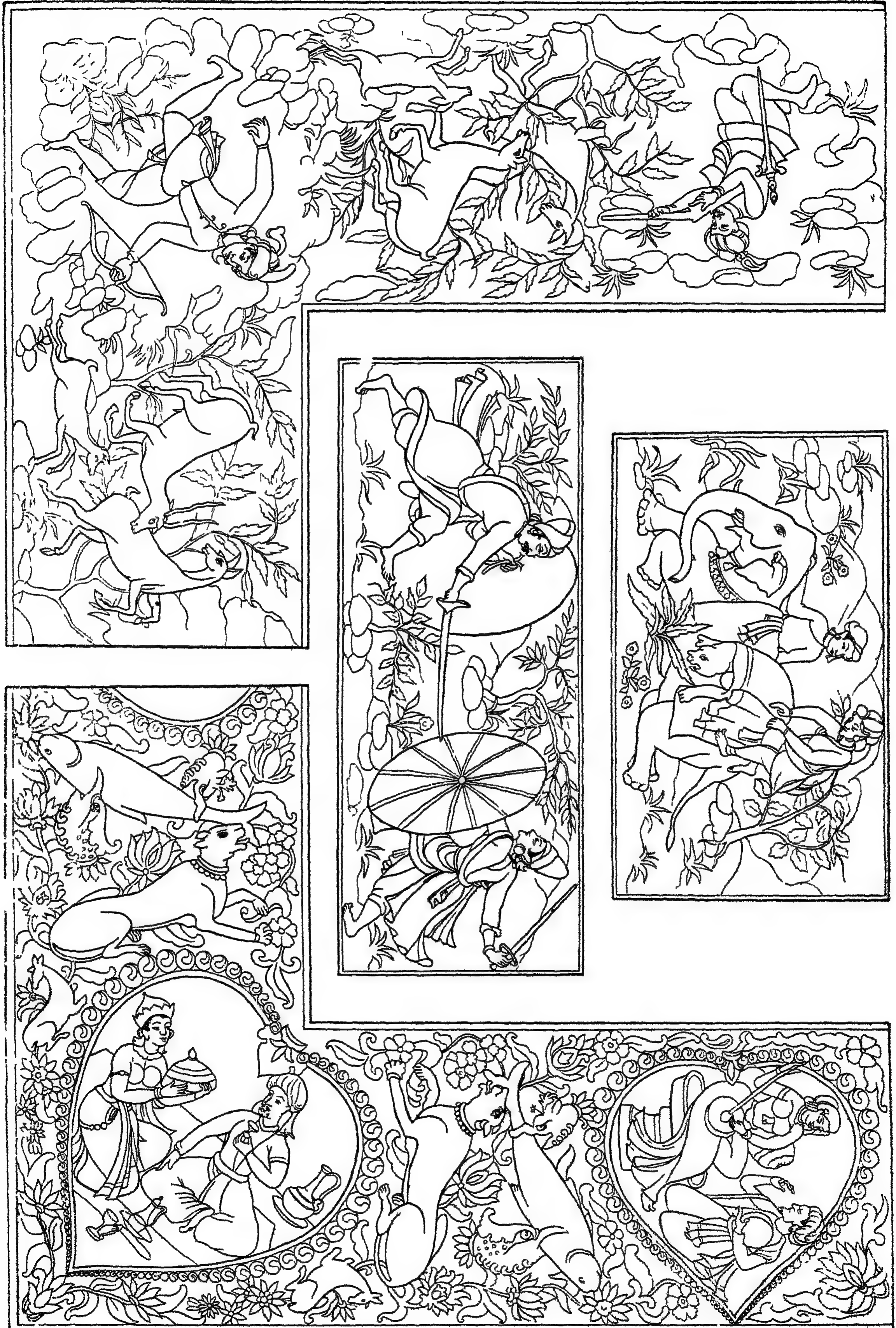
आकार कल्पना कैसे की जाती है ?

पिछले अध्यायो मे हम आकार कल्पना के सिद्धान्तों का विवेचन कर आए हैं। उन सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप कैसे दिया जाता है अब इसी की विवेचना हम करेंगे।

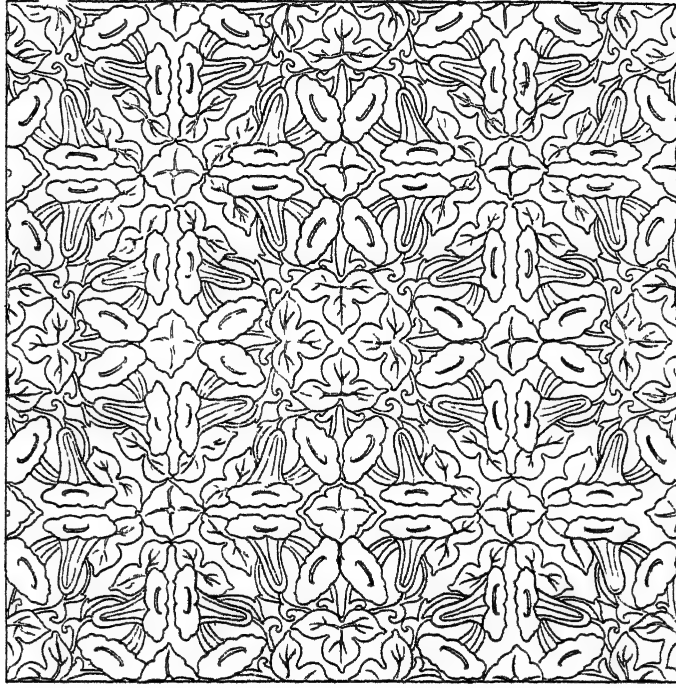
आकार कल्पना चाहे जिस वस्तु के लिए की जाय उसके प्राथमिक नियम वैसे ही रहते है। फर्श पर की आकार कल्पना छत पर की आकार कल्पना से अवश्य ही भिन्न होगी किन्तु स्थान देखते हुए दोनो में रूपो का सौन्दर्य और प्रभावोत्पादकता होनी चाहिए। अतएव एक निश्चित स्थान (वृत्त, वर्ग, आयत आदि) किस प्रकार भरा जाता है कि कोई कोना रिक्त न लगे और न कोई स्थान घिचपिच लगे यही-यही बताने का हमारा प्रयत्न होगा।

१—एक दिए हुए आकार के पहले दो भाग कर लिए। २—उसमे कोई सुन्दर सी कल्पना कर उसी को उलट कर दूसरी ओर बना लिया। ३—इसके पश्चात फिर यदि बीच मे स्थान अधिक बच जाता है तो उसे भरने के लिए कोई और कल्पना कर ली। यह हमारी आकार कल्पना की इकाई बन गई। इसी की आवृत्ति से हम पूरी जगह भर लेते है। यदि फिर भी हम देखते है कि कोई जगह खाली सी लगती है तो उसे भी किसी छोटी सी आकार कल्पना से भर लेते है जो उसी से सम्बन्धित हो। इस प्रकार हमारी आकार कल्पना का रेखा रूप तैयार हो जाता है। इसके बाद अपनी रुचि के अनुसार रंग योजना बनाकर हम उसमें रग भर सकते है। रंग योजना के सम्बन्ध में हम पहले बता चुके है।

नोट :—यह आवश्यक नही कि इकाई की आवृत्ति द्वारा ही आकार कल्पना पूरी बन सके। बहुत सी आकार कल्पनाये भिन्न-भिन्न रूपो द्वारा पूरी की जाती हैं जिसके उदाहरण पुस्तक मे दिये गये है। यहाँ केवल किनारी और बीच की आकार कल्पना के नमूने दिये गये हैं आकार कल्पना को अन्य पद्धतियाँ क्रमानुसार प्लेटो के साथ दे दी गई है।

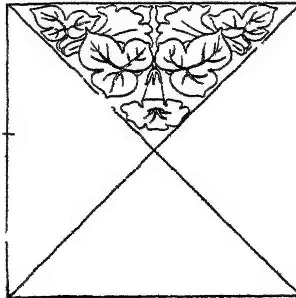


प्लेट नं० २३



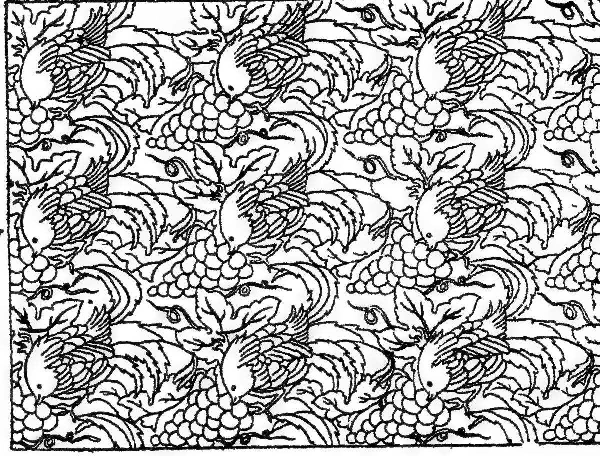


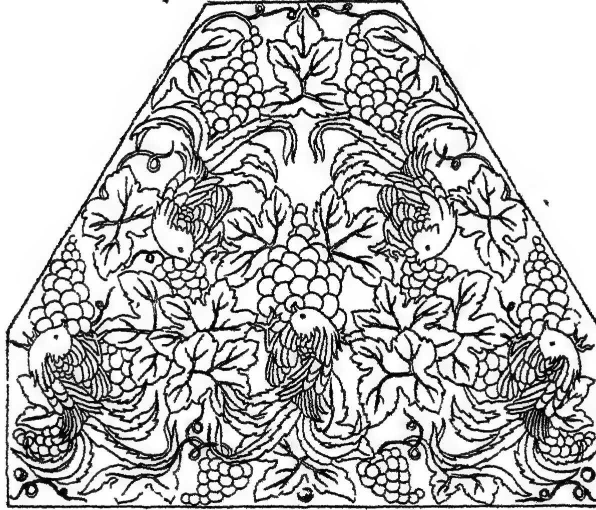




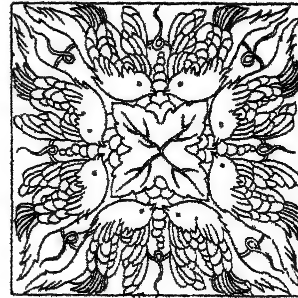


प्लेट नं० २४



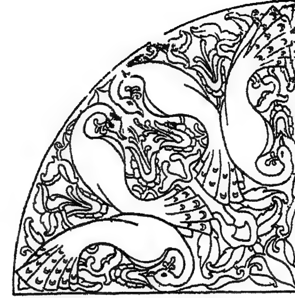
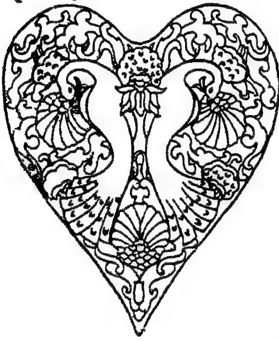
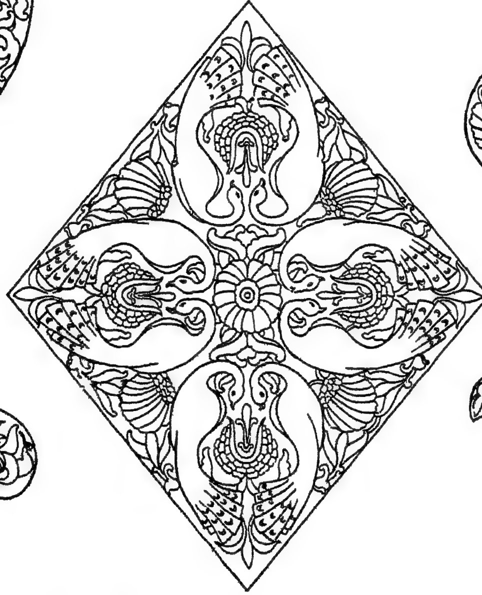
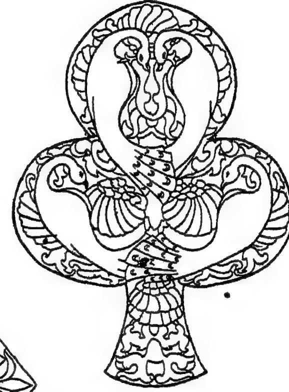
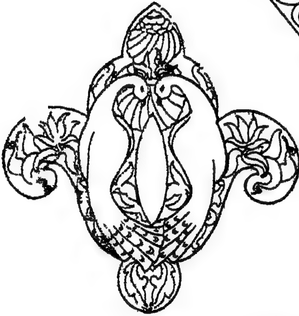
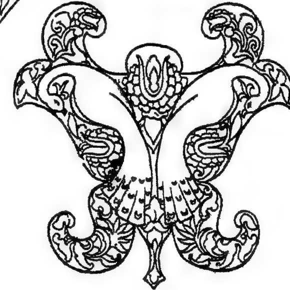
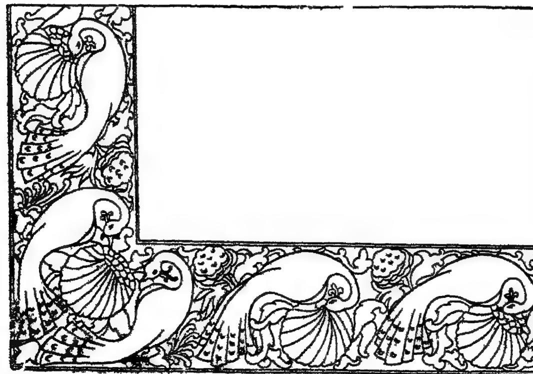






प्लेट नं० २५



प्लेट नं० २६



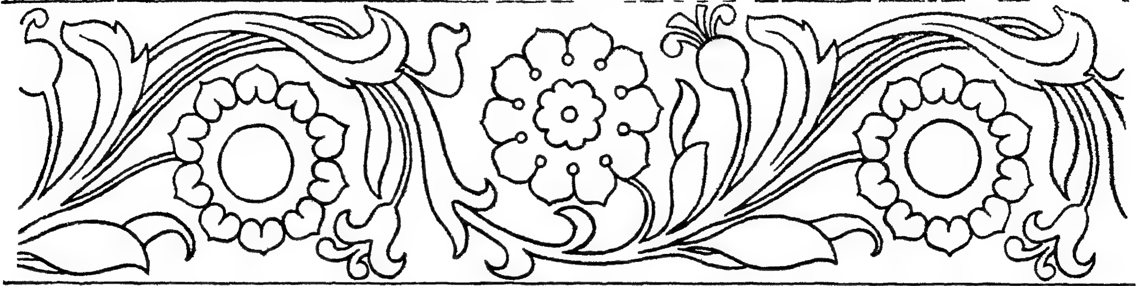
किनारी की आकार कल्पनाएँ

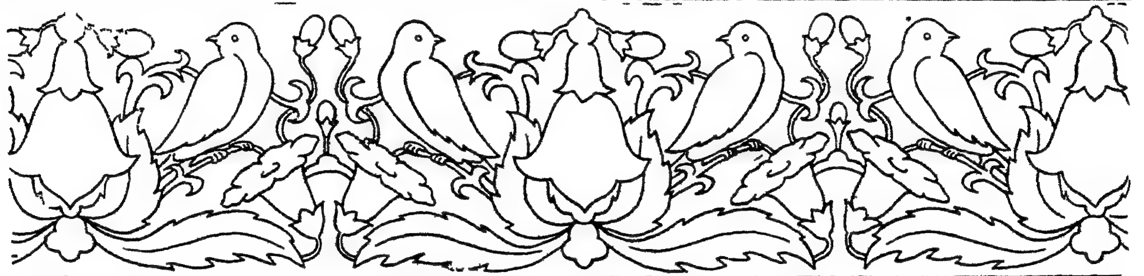
प्रकृति नई-नई कल्पनाएँ प्राप्त करने के लिए अक्षय भण्डार है। सच पूछिये तो मनुष्य की कल्पना जागृत वही से होती है। इन आकारों मे यही दर्शाने का प्रयत्न किया गया है कि किस प्रकार प्रकृति की किसी एक वस्तु को आलकारिक रूप देकर आकार कल्पना की इकाई बना ली जाती है। पहले उसका रूप अतिसाधारण होता है अर्थात् पत्तियाँ और फूल। और चलकर उनमें पक्षियो, तितलियो या पशओ की आकृति का भी समावेश कर उन्हे जटिल बना लिया जाता है। अधिक उच्च स्तर पर पहुँच कर जब कल्पना और जागृत हो जाती है तो कुछ काल्पनिक रूप भी आने लगते है। या तो उन्हे अलग रखते हैं या प्रकृति के अनुरूपो के साथ।

आकार कल्पना को और आकर्षक बनाने के लिए या उन्हे बिल्कुल नया रूप देने के लिये व्यंग चित्रो का प्रयोग होता है। इस विभाग की अन्तिम दो आकार कल्पनाएँ इसी प्रकार की है। बच्चो के लिये इनमें विशेष आकर्षण होता है। इन्ही व्यंग चित्रो के द्वारा किसी घटना दृश्य को भी अकित कर आकार कल्पना की इकाई बनाई जा सकती है। उदाहरणार्थ शिकारी वाला आकार। दूसरी मे पद्धति की दृष्टि से भी विविधता मिलती है। पहली और तीसरी पंक्ति में रूप तिब्बती है, दूसरी में कत्थकली नृत्य की एक मुद्रा है और अन्तिम मे पुजारिन का रूप लिया गया है।

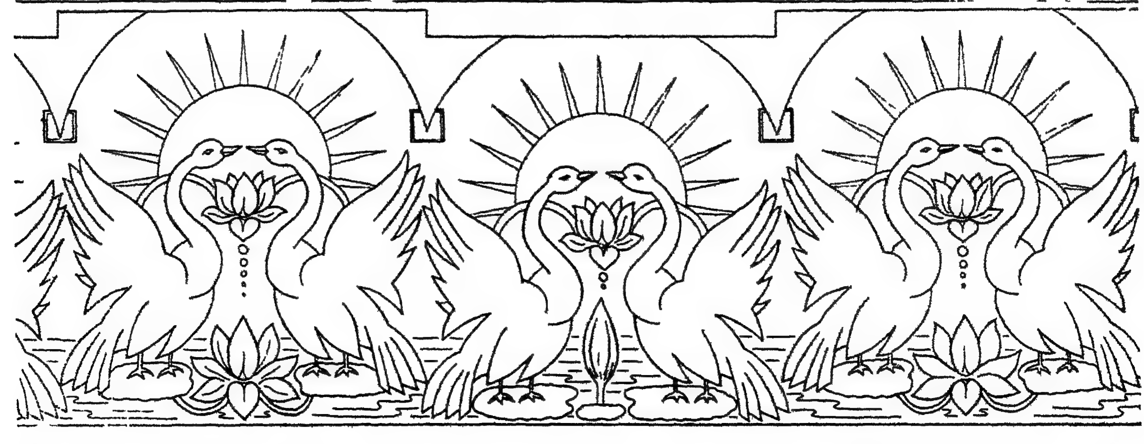
तिब्बती ढंग के आकारो में मनुष्याकृतियों और प्राचीन काल्पनिक पशुओ के रूपो को सङ्गठित किया गया है। इसके लिए उस देश की प्राचीन मान्वताओ तथा पौराणिक आख्यानो का अध्ययन आवश्यक है। कत्थकली मुद्रा इस बात का संकेत है कि आकार कल्पनाओ में स्थिर सौन्दर्य स्थान मिलता ही है, गत्यात्मक सौन्दर्य उसके सौन्दर्य और भी बढा देता है जहाँ तक रङ्गों का प्रश्न है वह दो प्रकार से हल किया जा सकता है। एक तो ऊपर से भरकर दूसरे रङ्गीन कागजो को ही कटकर सफेद कागज पर चिपका कर।

प्लेट नं० २७

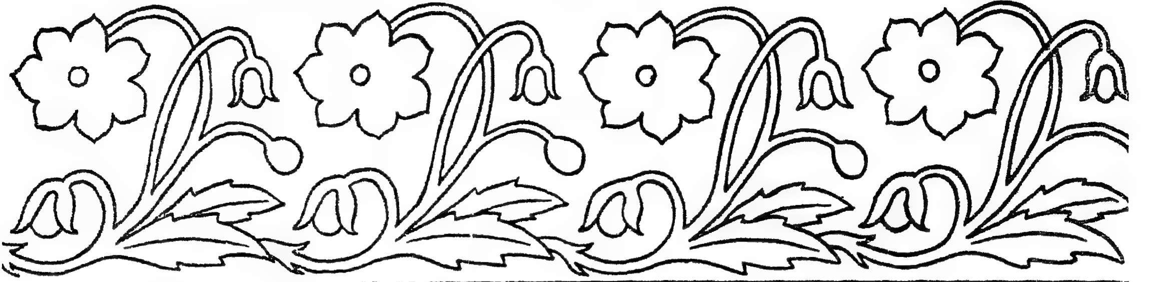




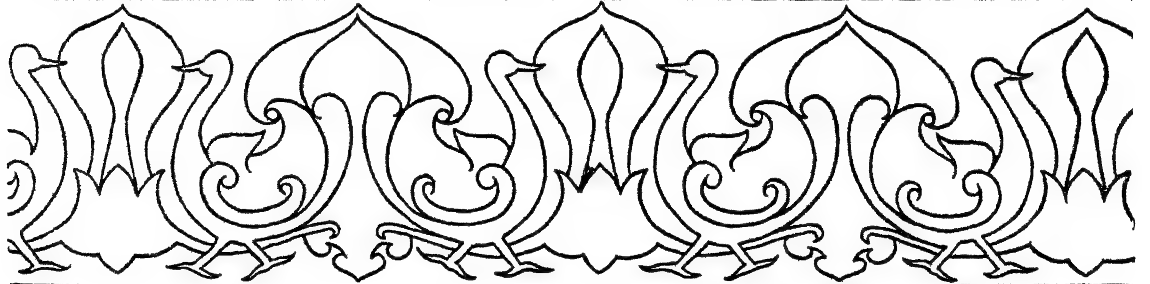


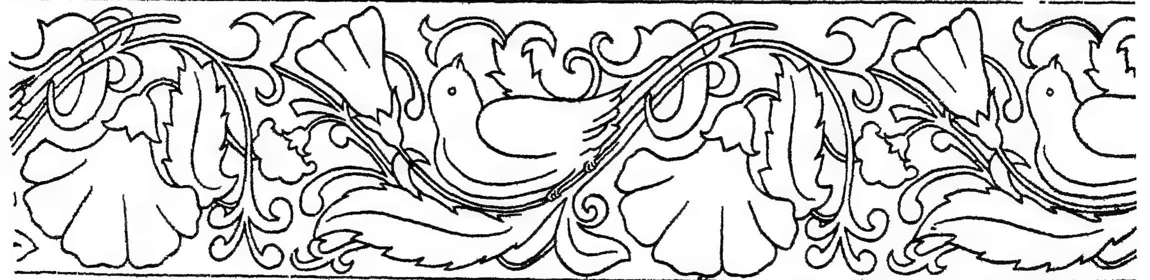


प्लेट नं० २८

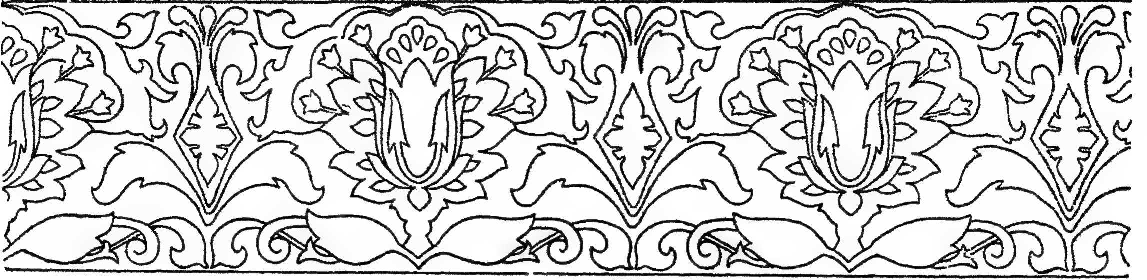


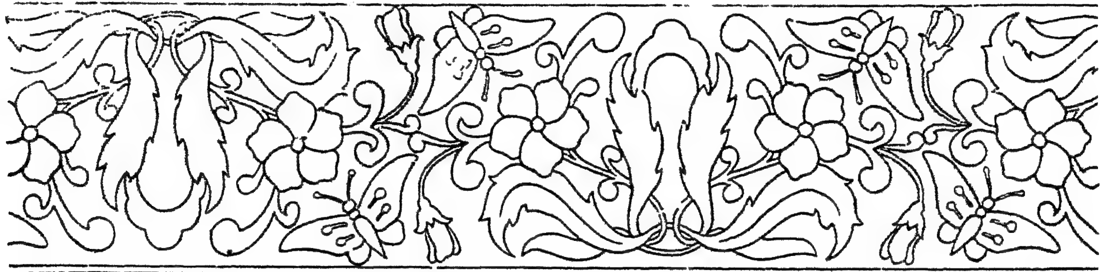






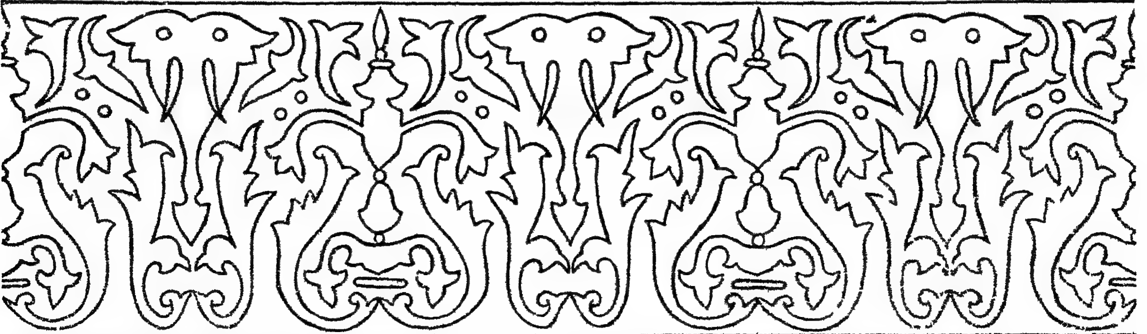
प्लेट नं० २६





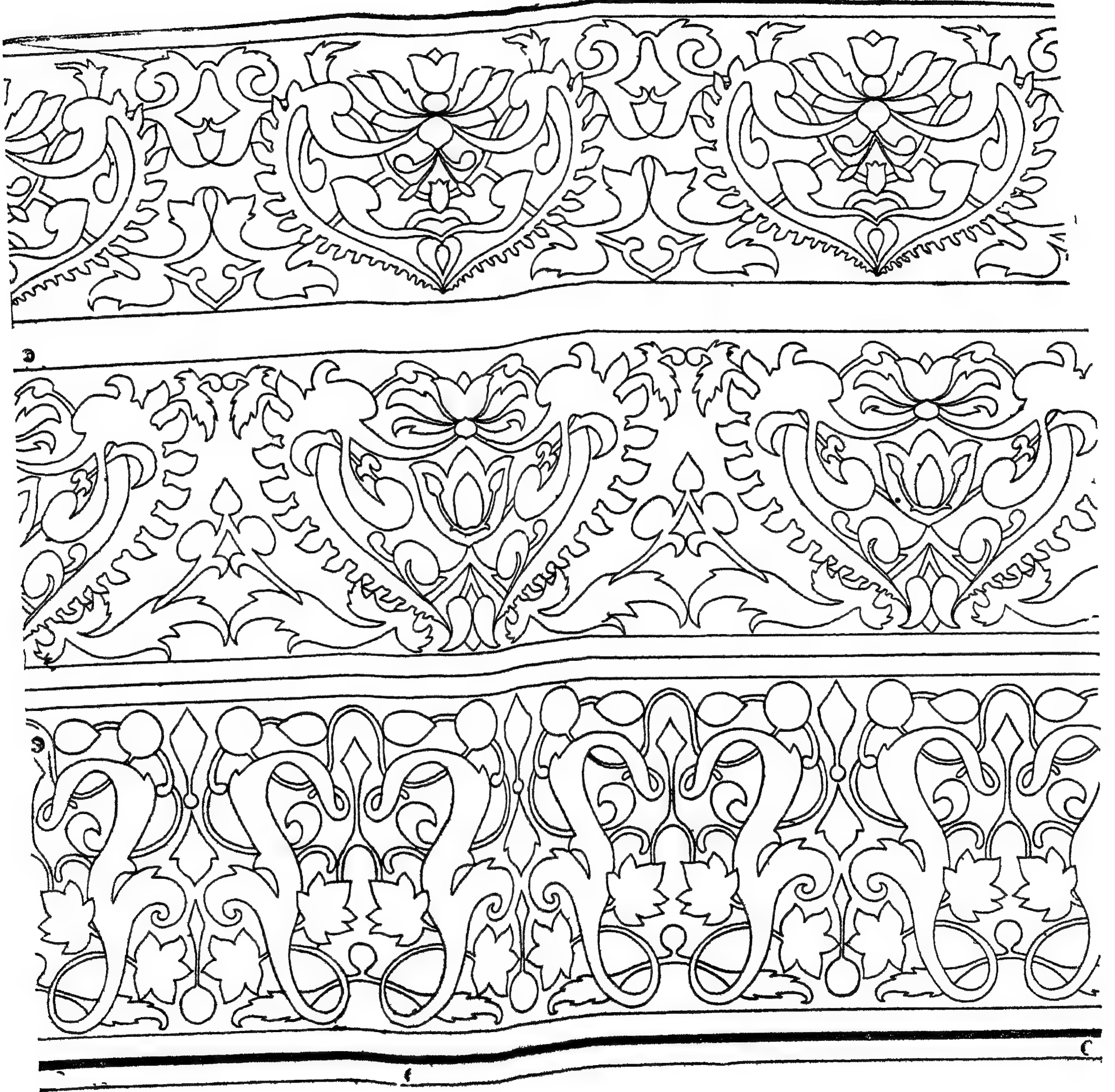




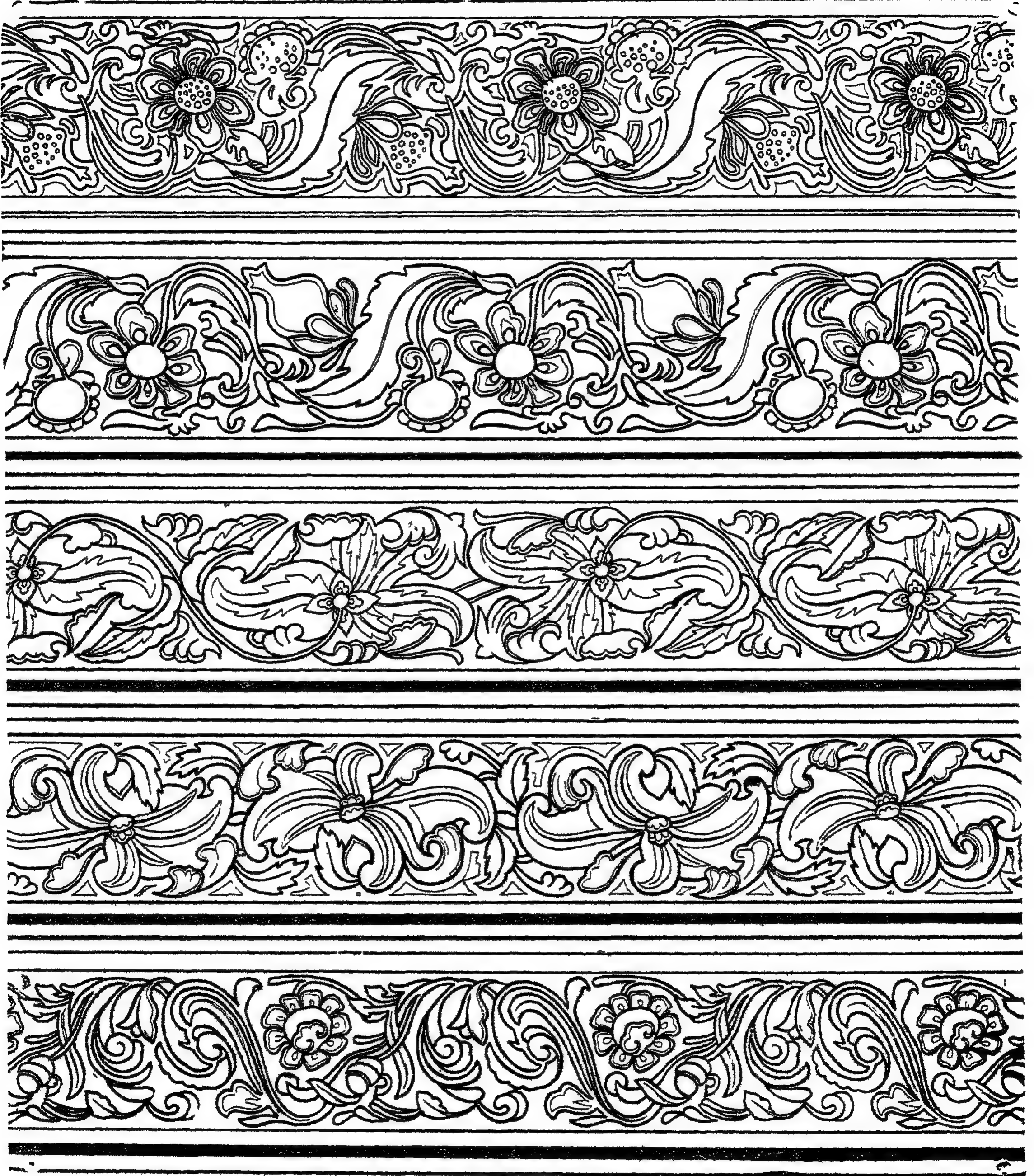




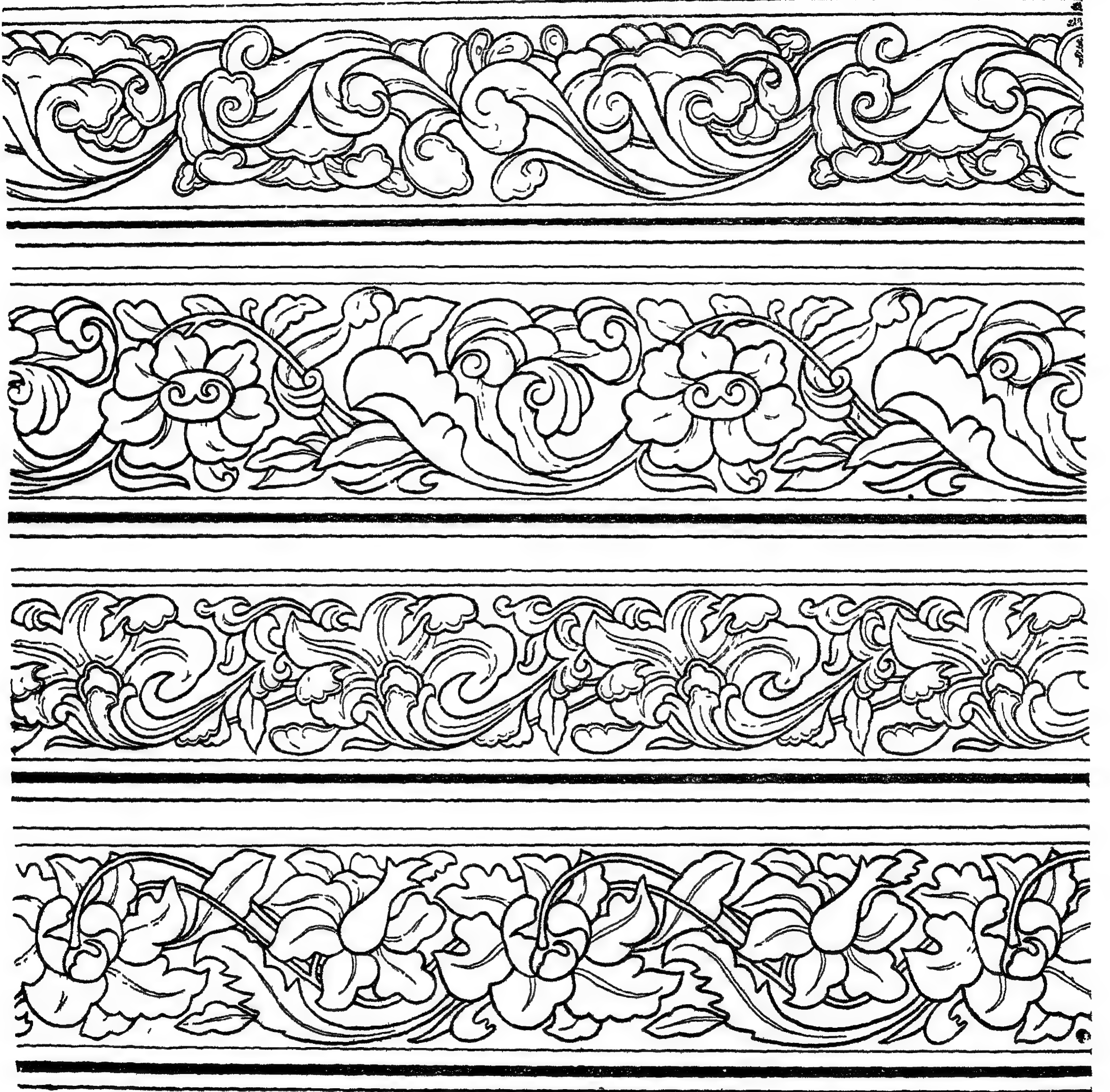
प्लेट नं० ३०



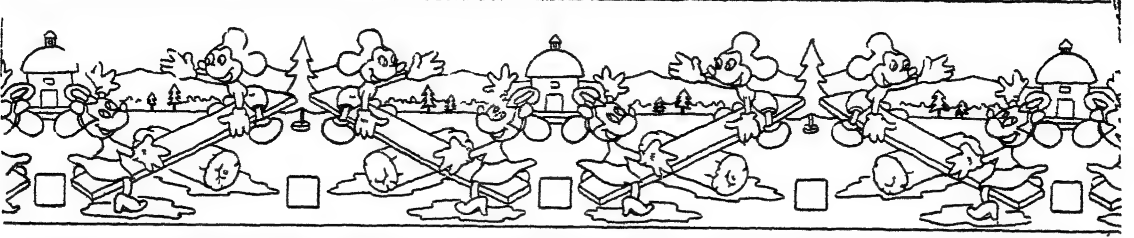
प्लेट नं० ३१

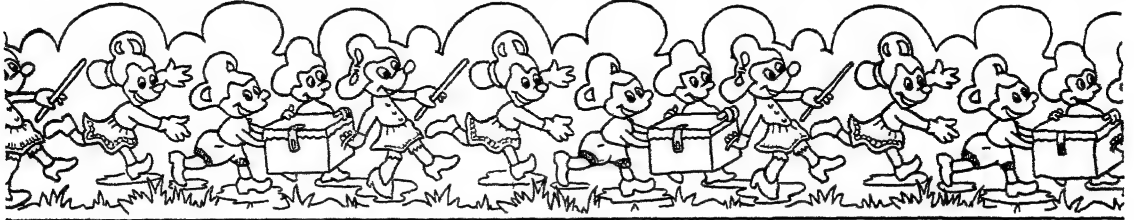


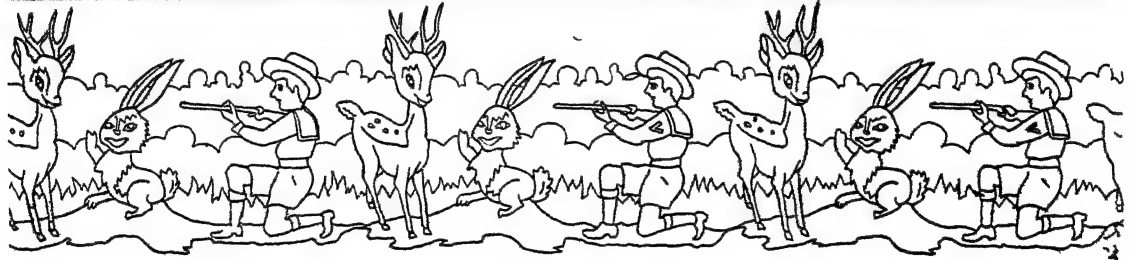
प्लेट नं० ३२



प्लेट नं० ३२



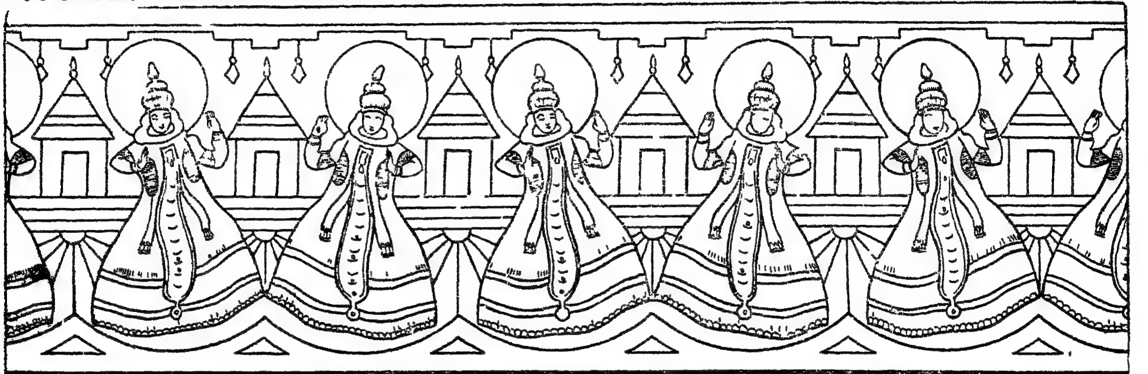


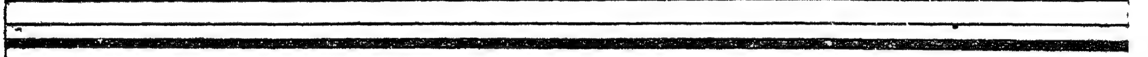






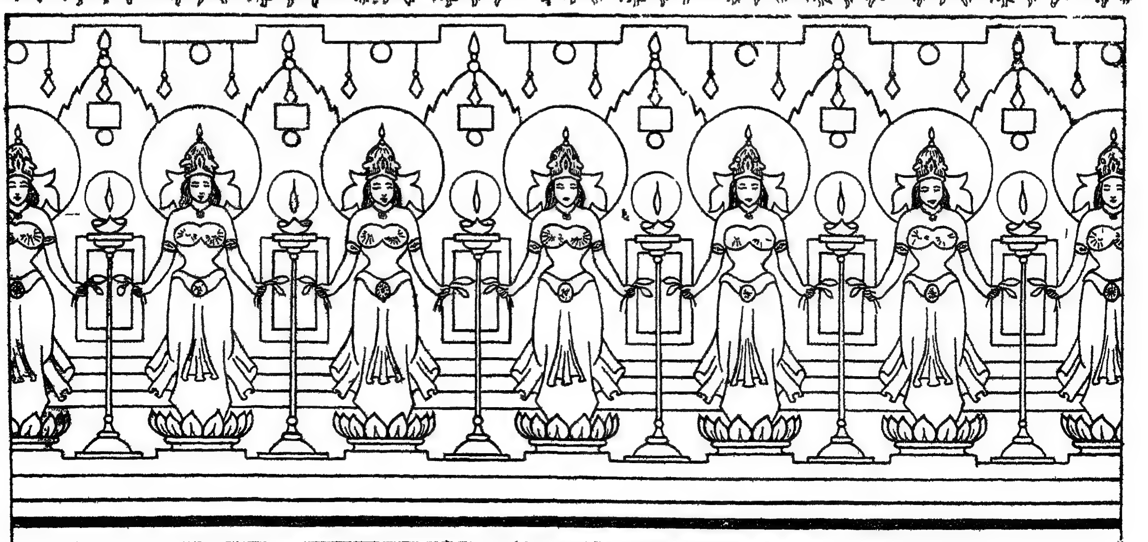












समष्टि रूप आकार कल्पना

नित्य प्रति की ऐसी बहुत सी वस्तुएँ होती है जिनमें एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक एक ही रूप की आवृत्ति होती है। वस्तु भेद से इस रूप मे परिवर्तन होता रहता है। उदाहरण के लिए दीवार पर चिपकाया हुआ कागज एक प्रकार से स्थिर वस्तु है अतः उस पर बनाया जाने वाला आकार ठोस होना चाहिए। दूसरी ओर पर्दे पर का आकार गोभूमि के ढङ्ग पर बनाया जाना चाहिए ताकि हवा से उत्पन्न लहरो का प्रभाव आसानी से पैदा हो सके। इसी प्रकार से रजाई के लिए दूसरी प्रकार का आकार होना चाहिए और साड़ी के लिए और प्रकार का।

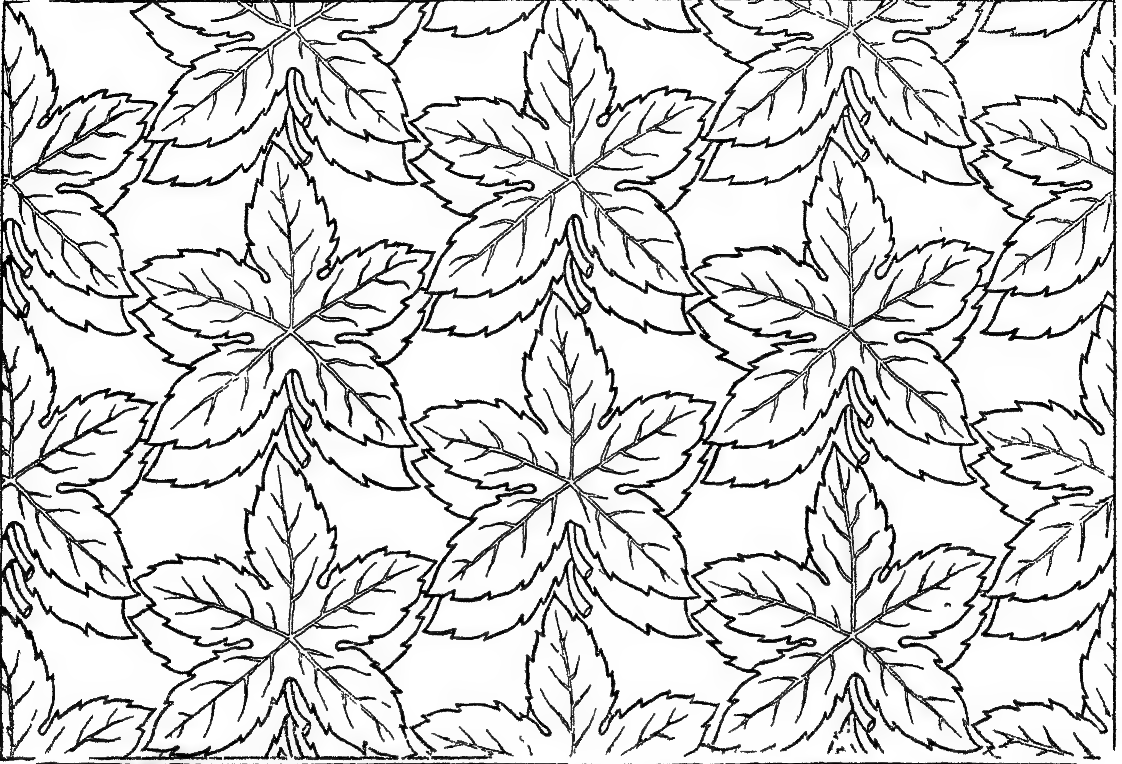
पद्धति के सम्बन्ध मे वही नियम अपनाया जा सकता है जिसके अनुसार थोडी सी और सादी सी वस्तुओ को लेकर अधिक और जटिल वस्तु का समावेश किया जाता है।

मछलियो और पशु-पक्षियो के रूप बनाते समय इस बात का ध्यान रखा जाता है कि उनके उठने दौडने या उड़ने की वे ही मुद्राये लेनी चाहिए जिनमें वे बहुधा दिखाई पड़ते है। उदाहरण के लिए हिरन सोते भी अवश्य होगे, जम्हाई भी लेते होगे, किन्तु उनके इस रूप को कितने लोगो ने देखा है। अतः उनकी चौकडी भरती, खडी या बैठी मुद्रा ही ली जाती है।

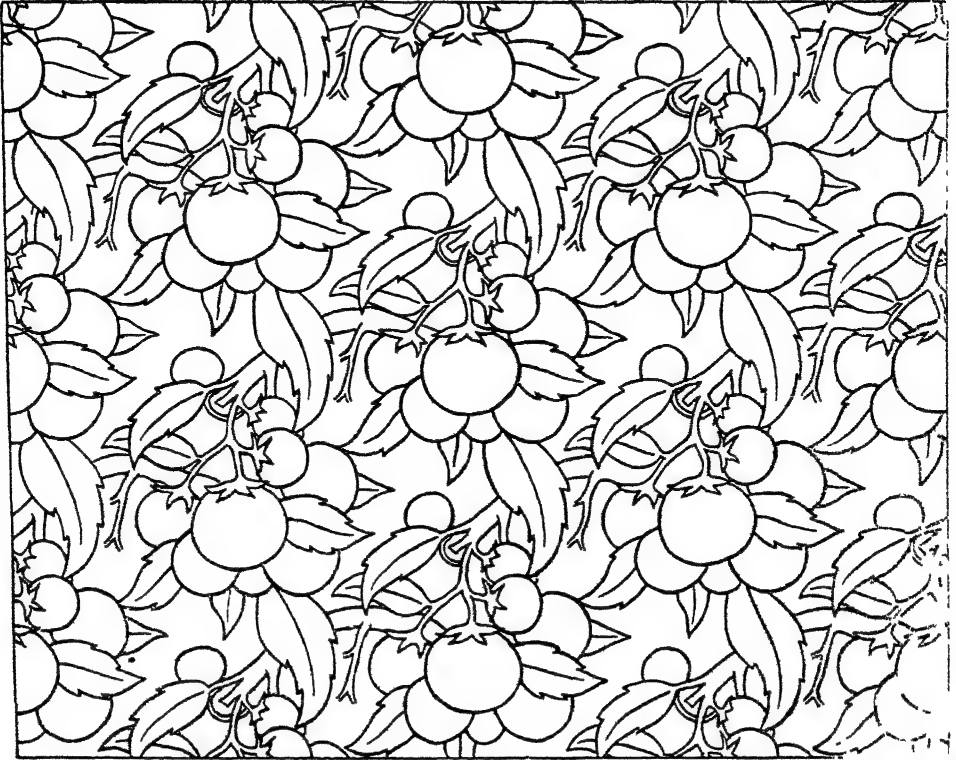
मुख्य बात इसमें ध्यान देने की यह है कि उसकी इकाइयाँ एक दूसरे से इस प्रकार मिली होनी चाहिए कि इकाई का प्रभाव उत्पन्न हो न कि अलग-अलग इकाइयो का।

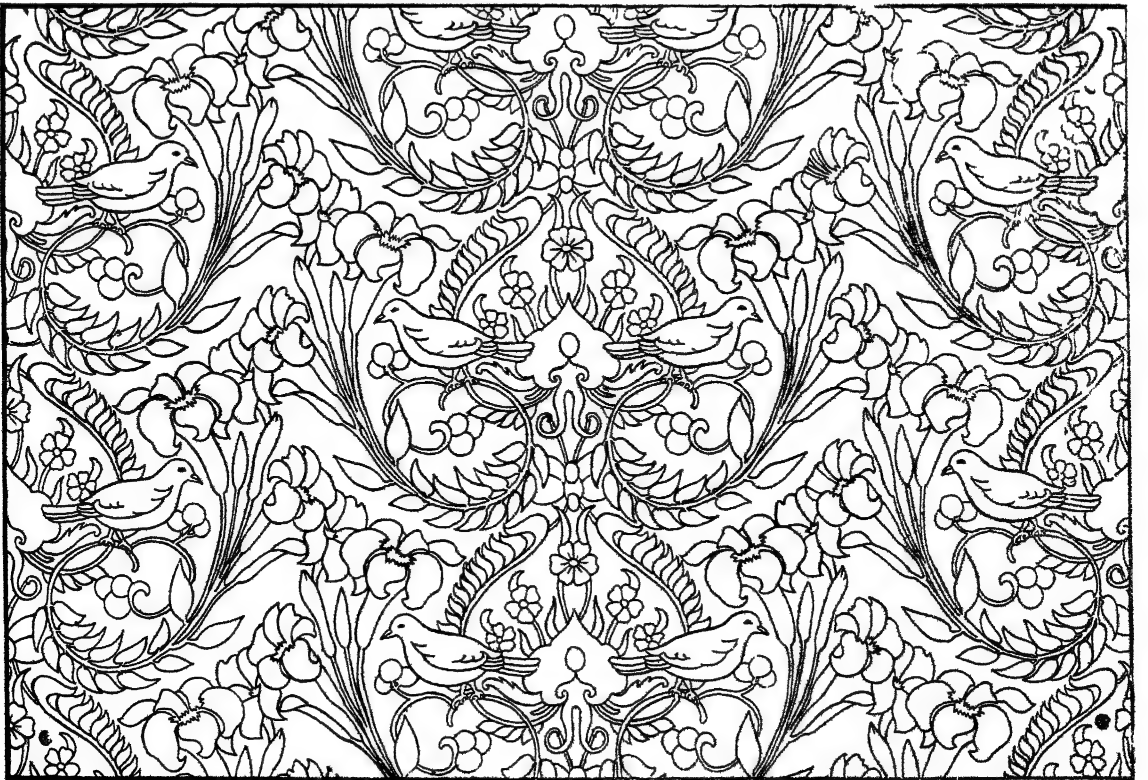


प्लेट नं० ३५

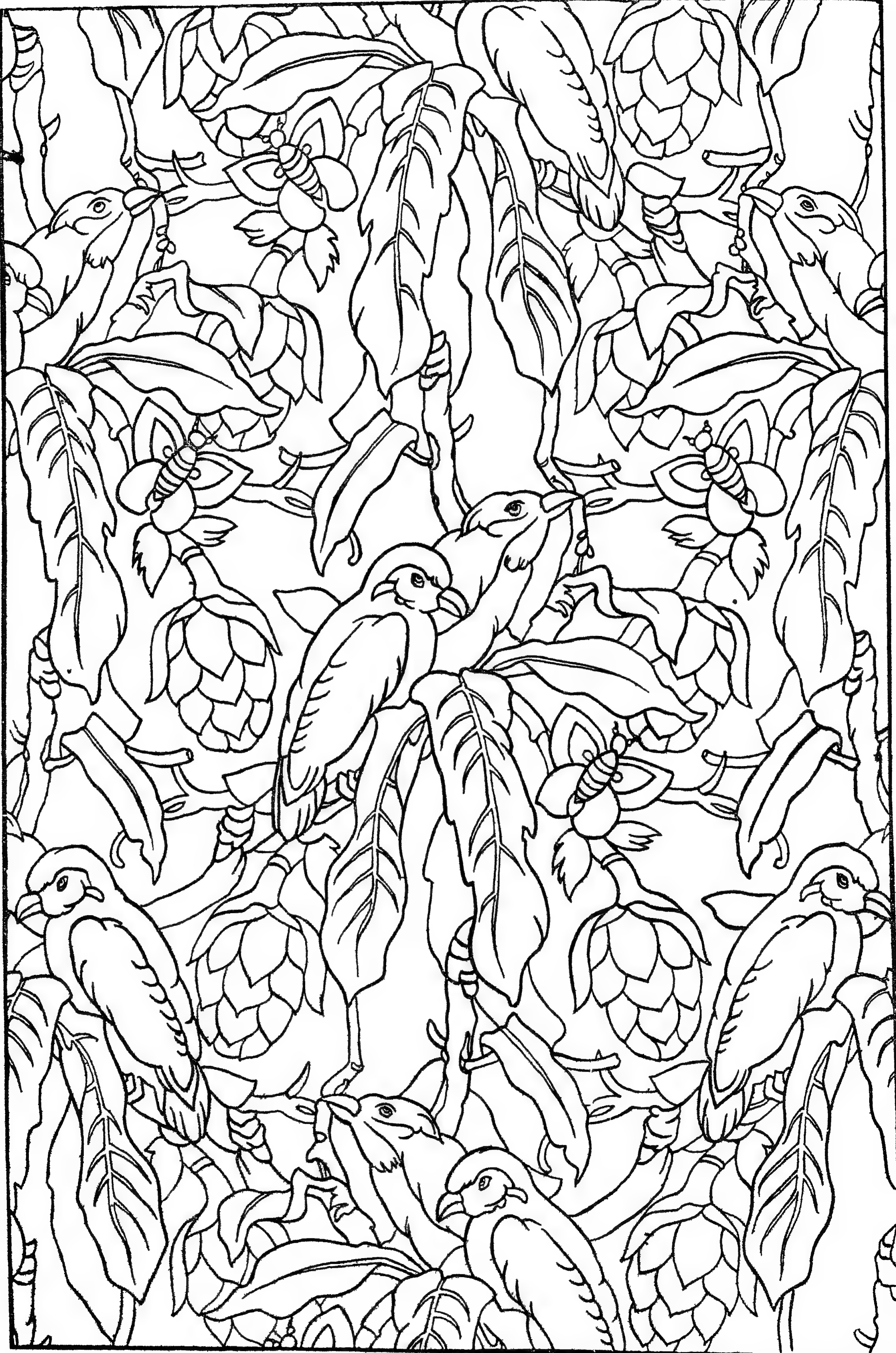




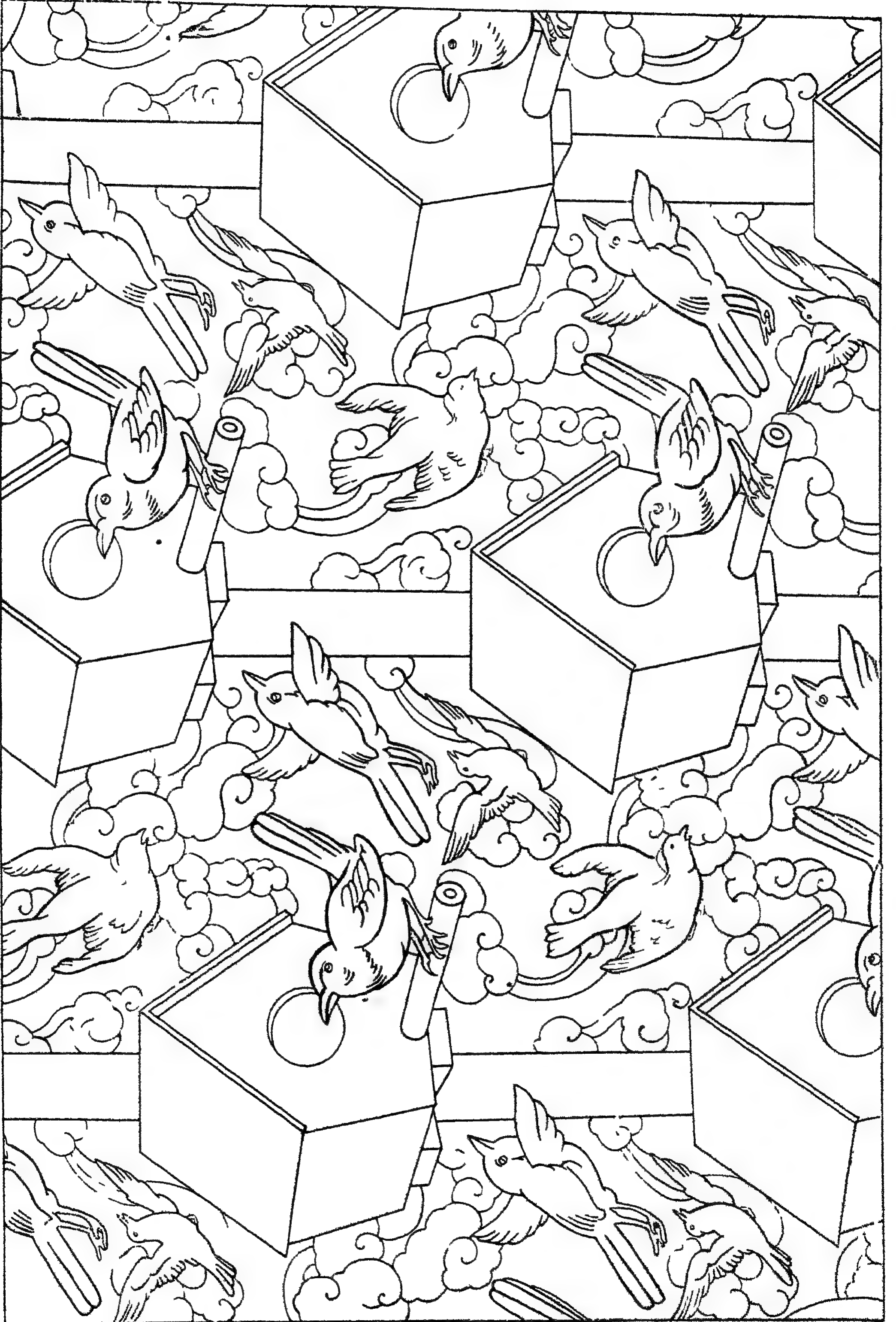


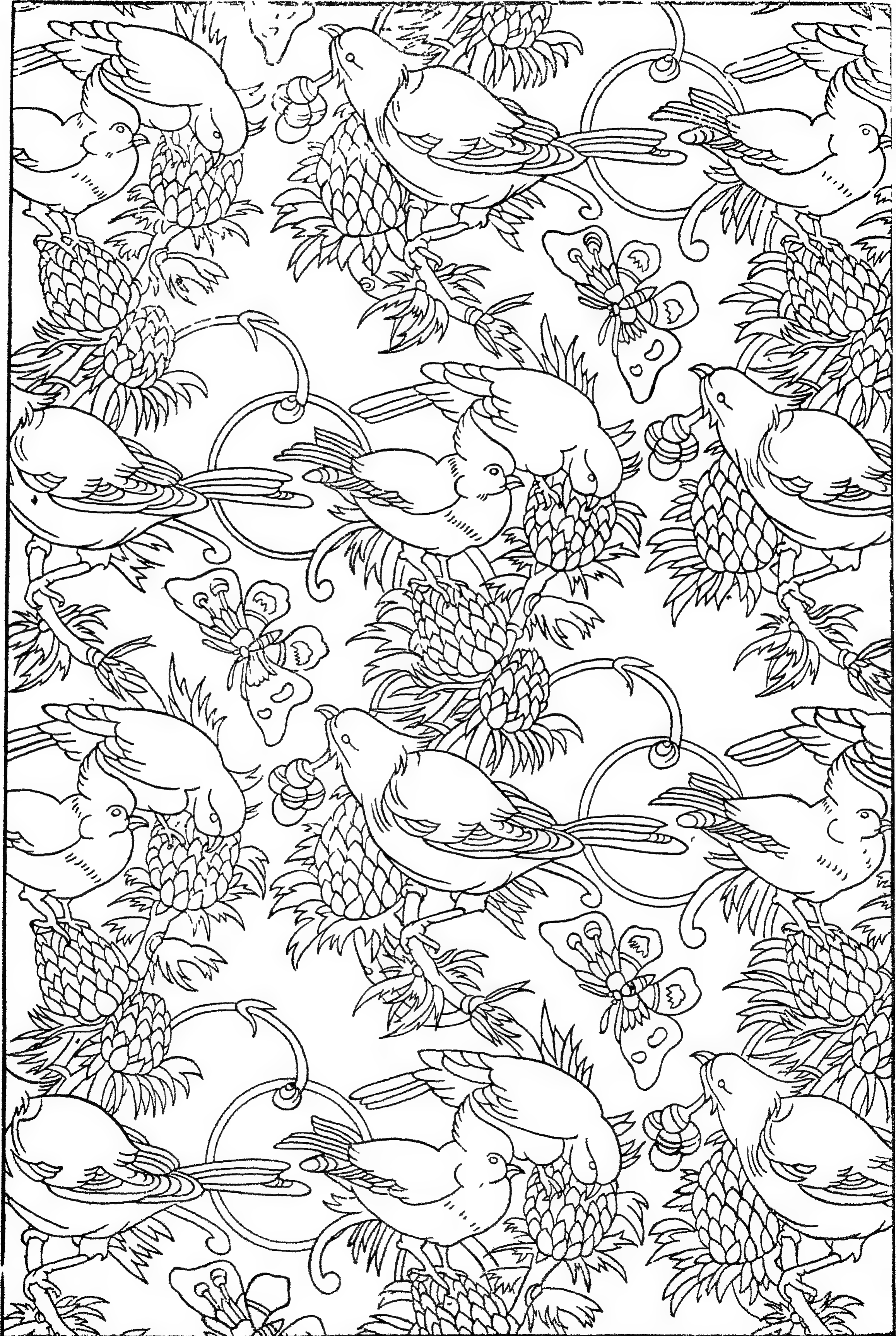


प्लेट नं० ३७



प्लेट नं० ३८





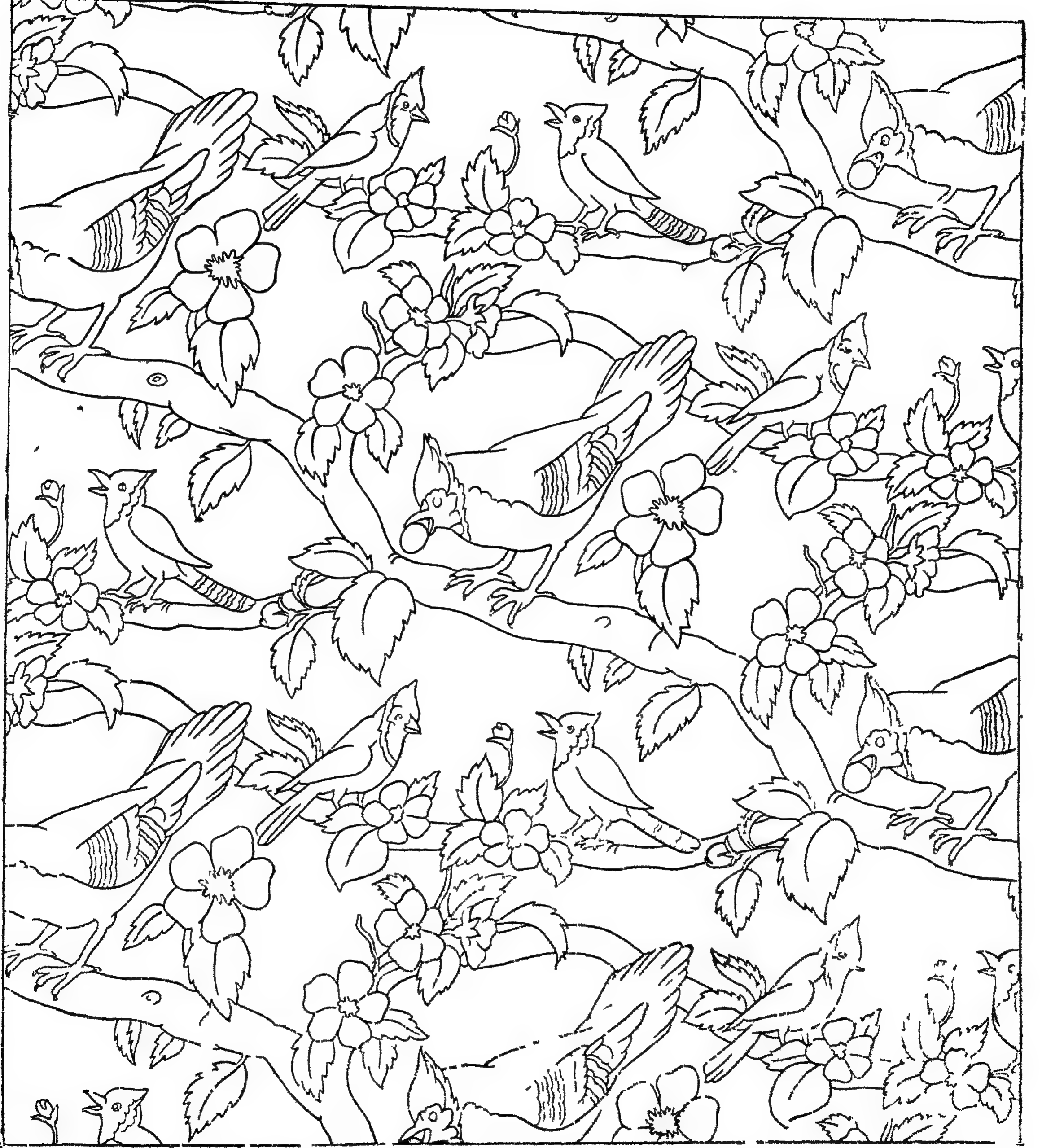
प्लेट नं० ४०



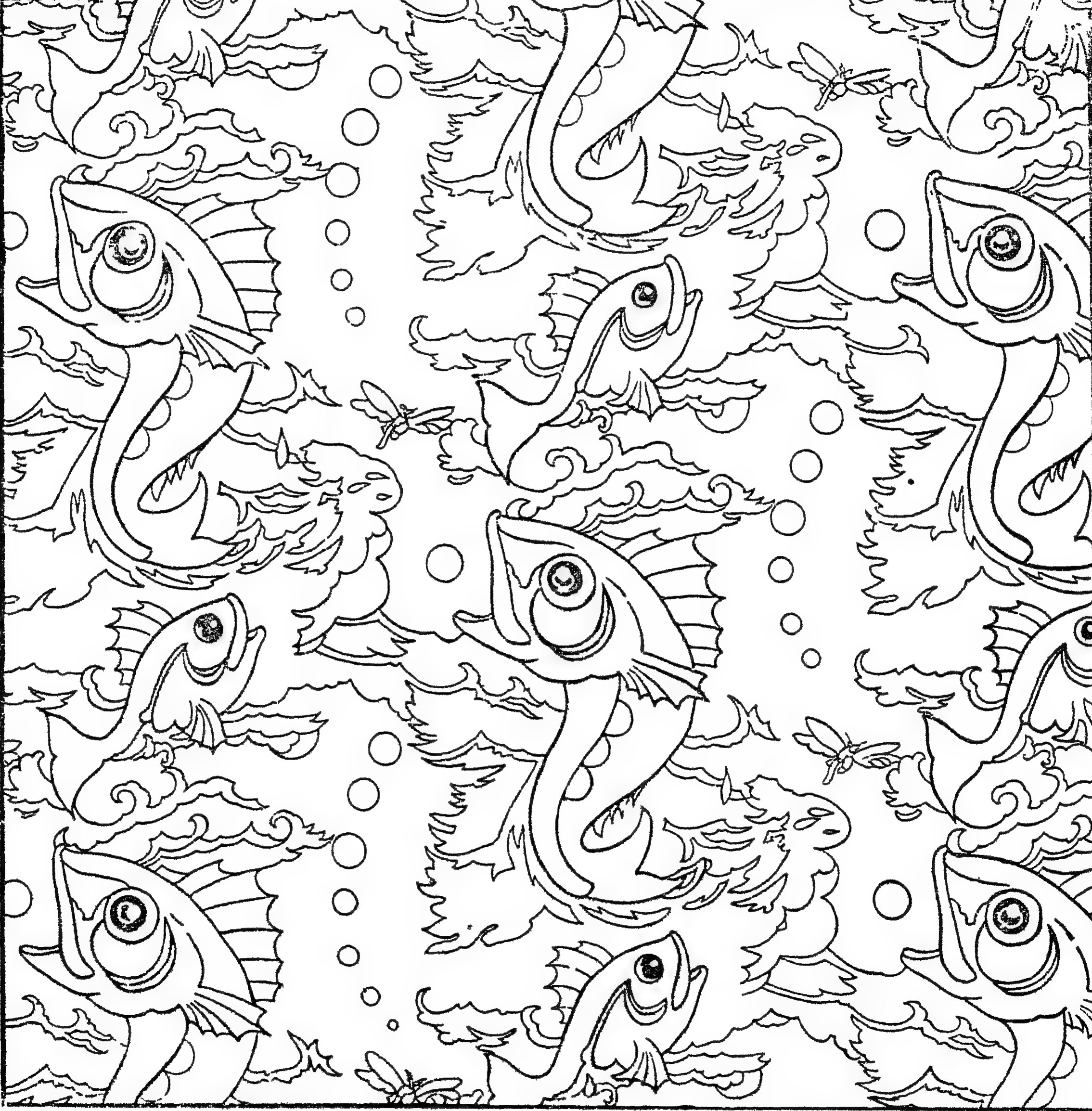
प्लेट नं० ४१



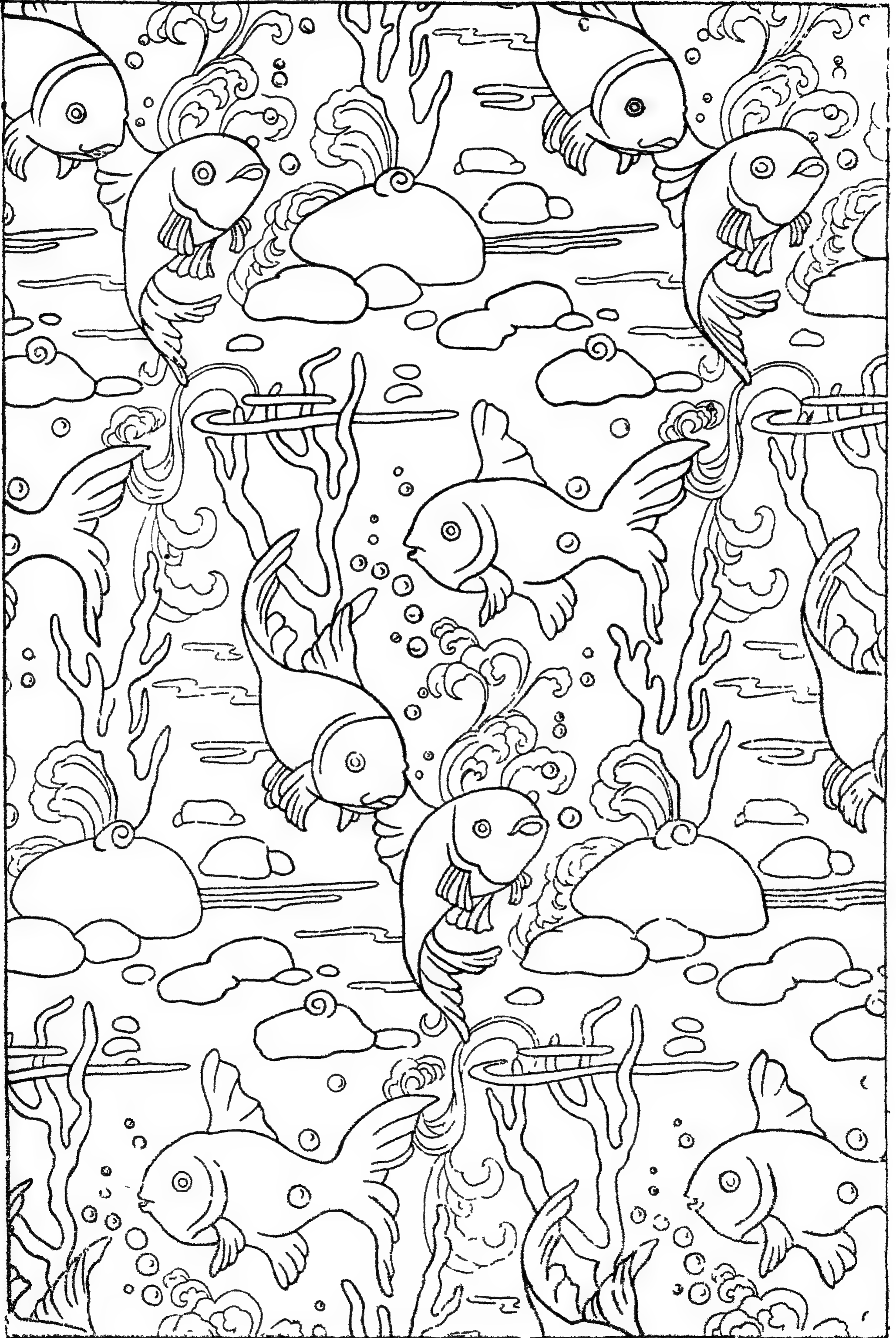
प्लेट नं० ४२



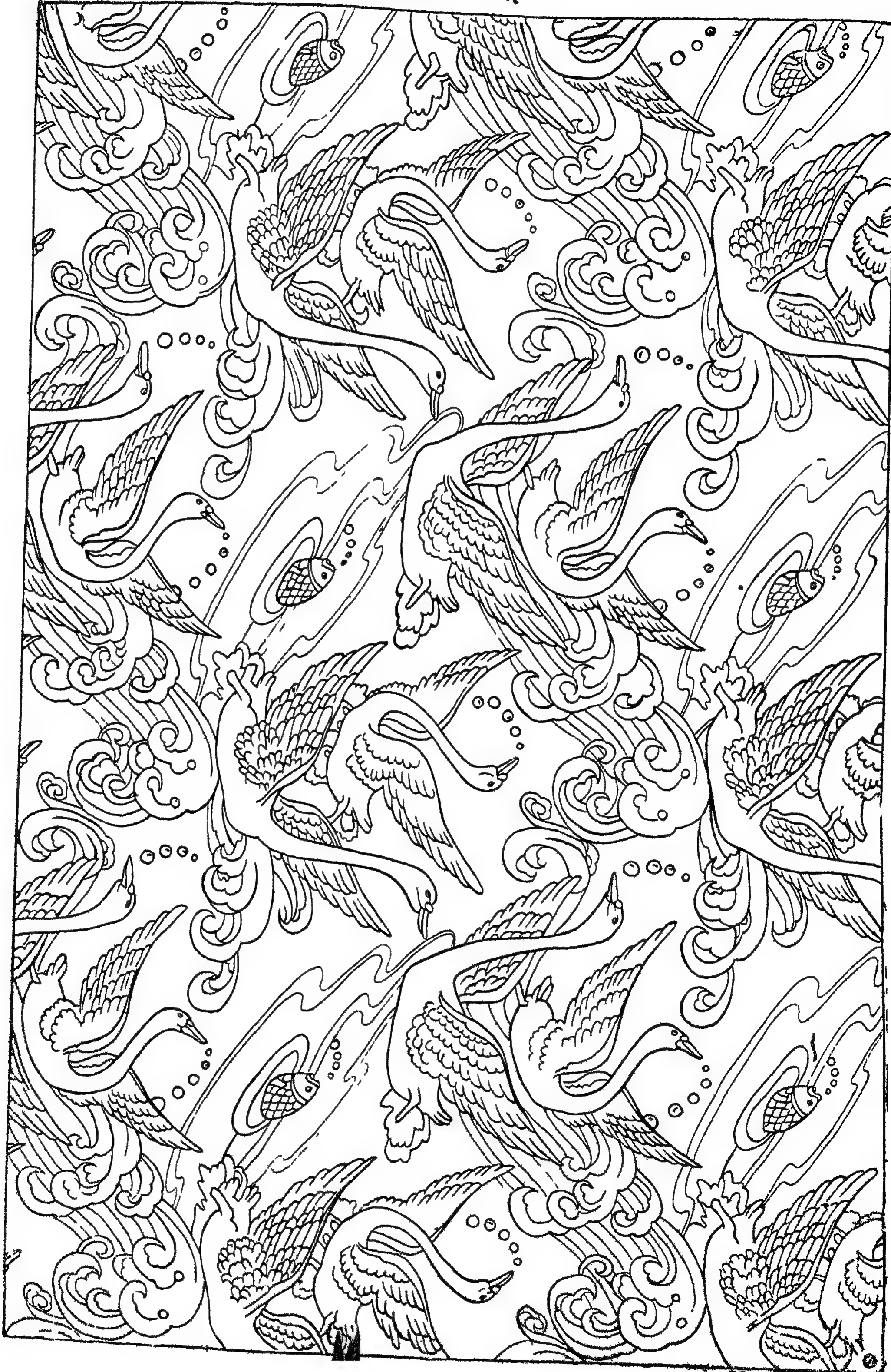
प्लेट नं० ४३



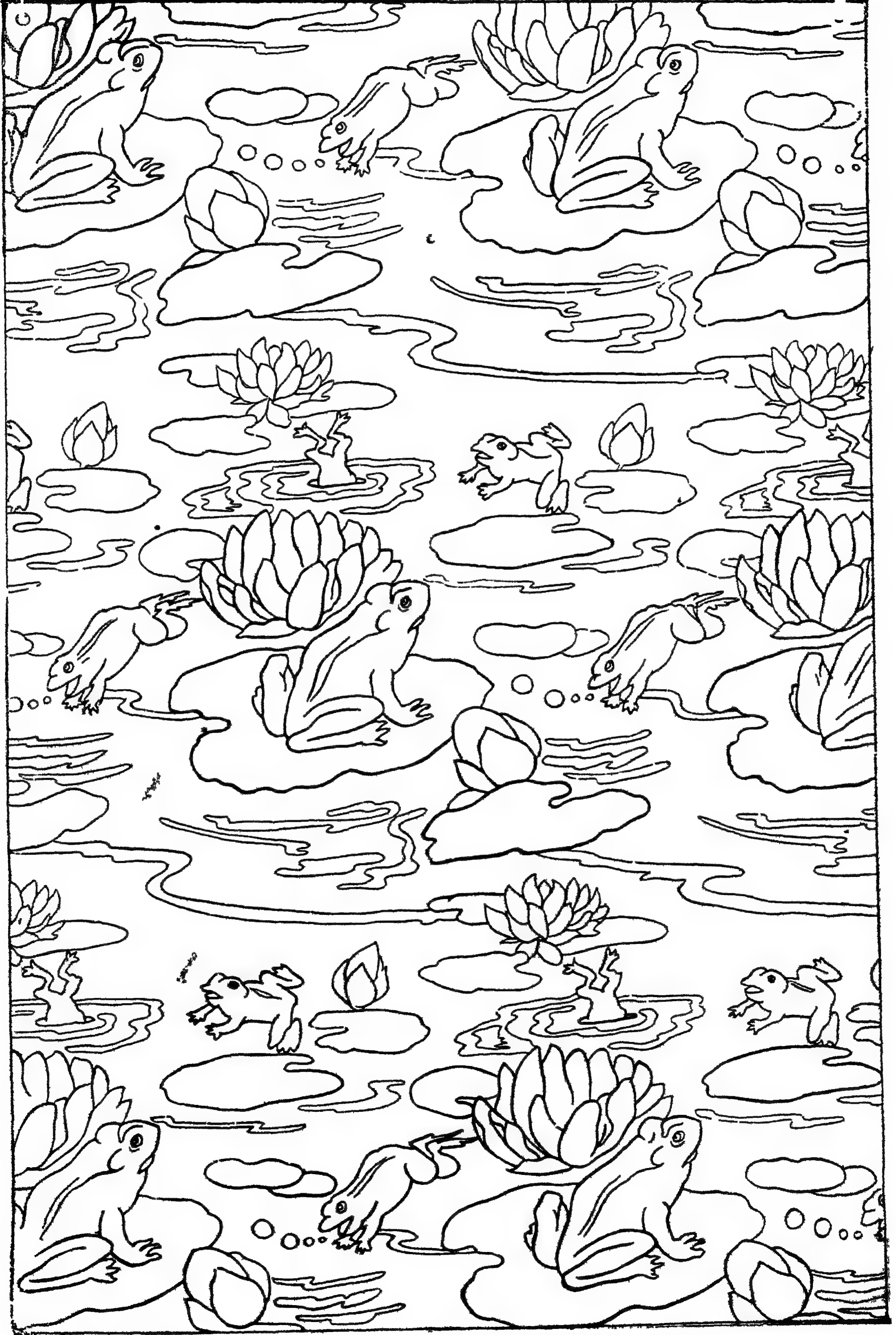
प्लेट नं० ४४



प्लेट नं० ४५



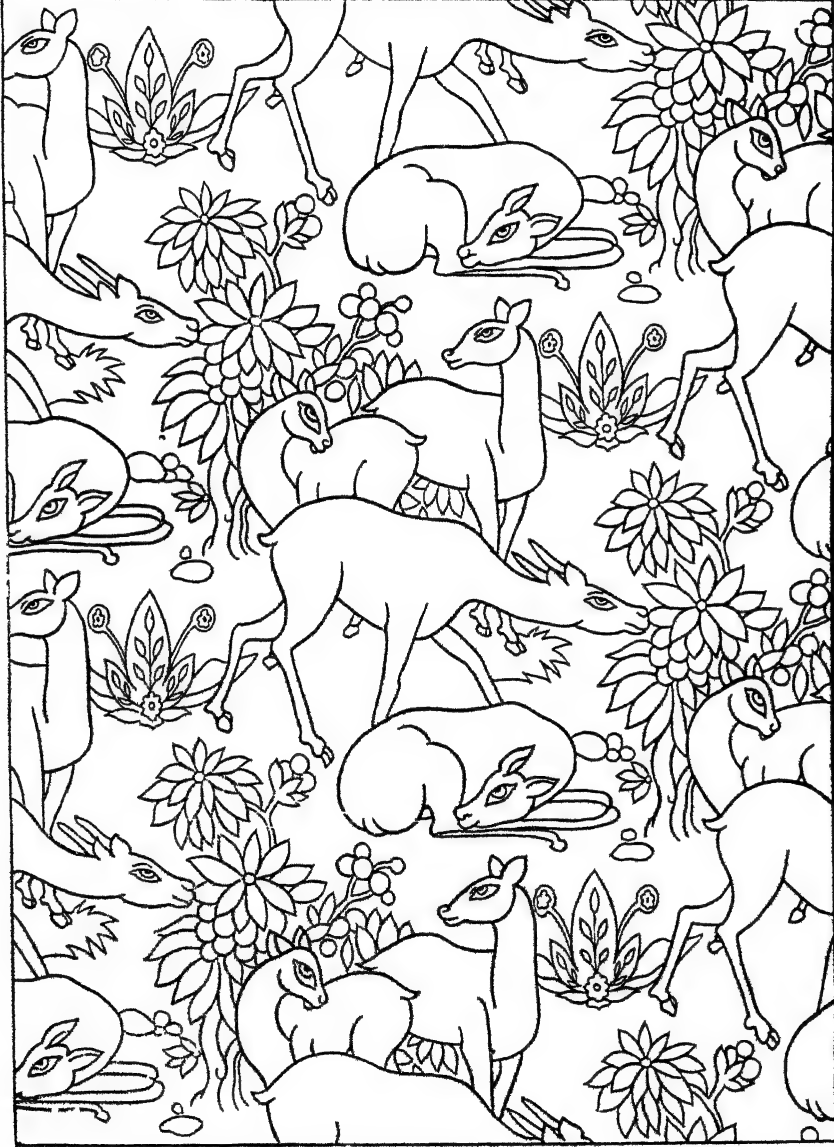
प्लेट नं० ४६



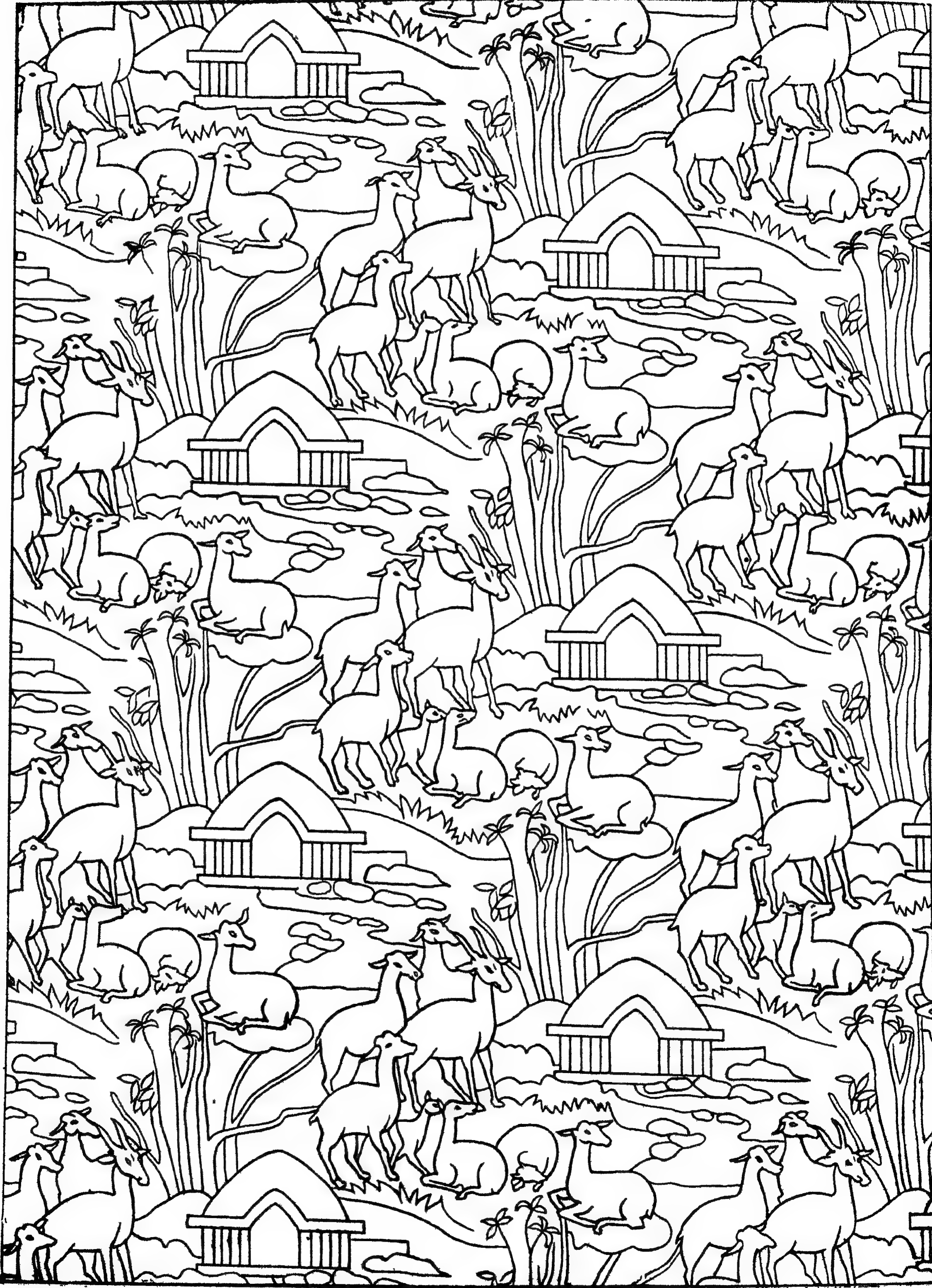
प्लेट नं० ४७



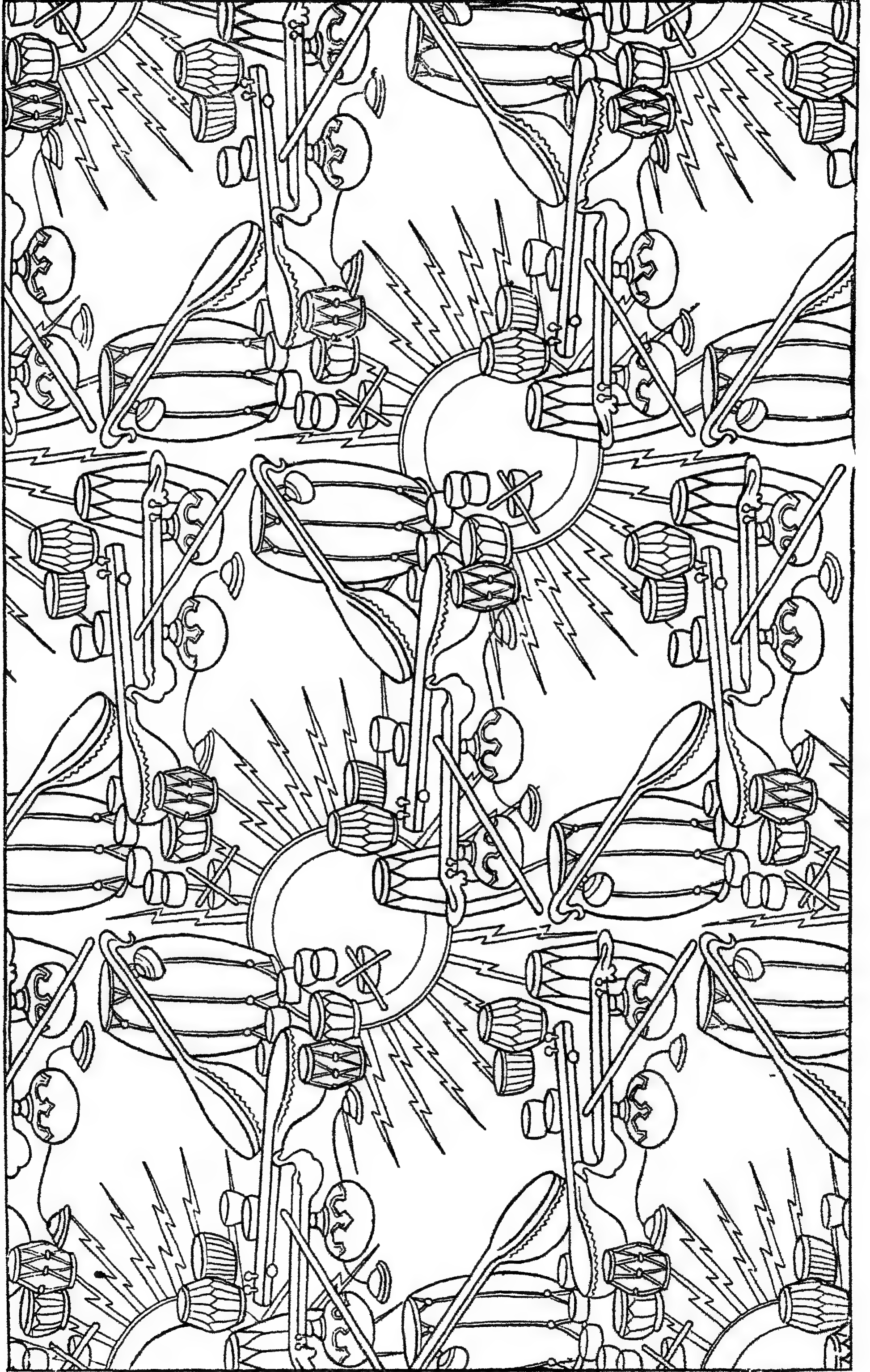
प्लेट नं० ४८



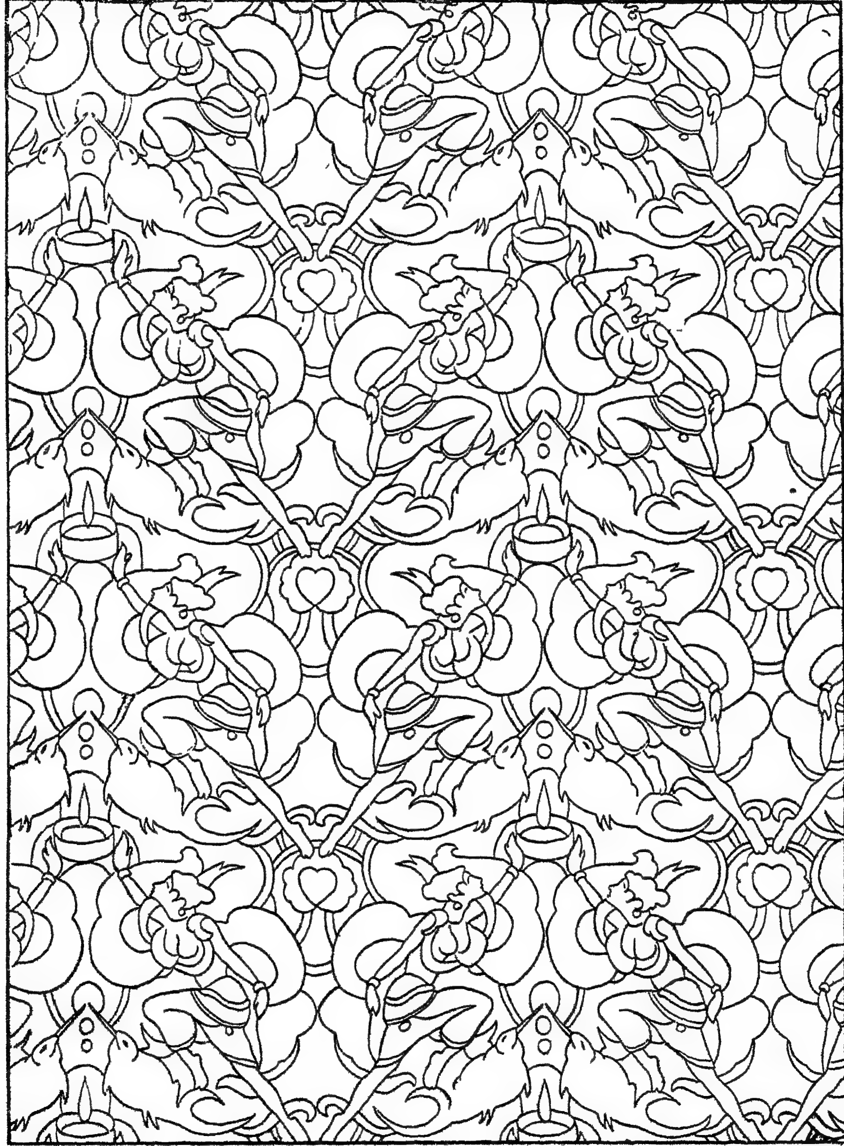
प्लेट नं० ४६



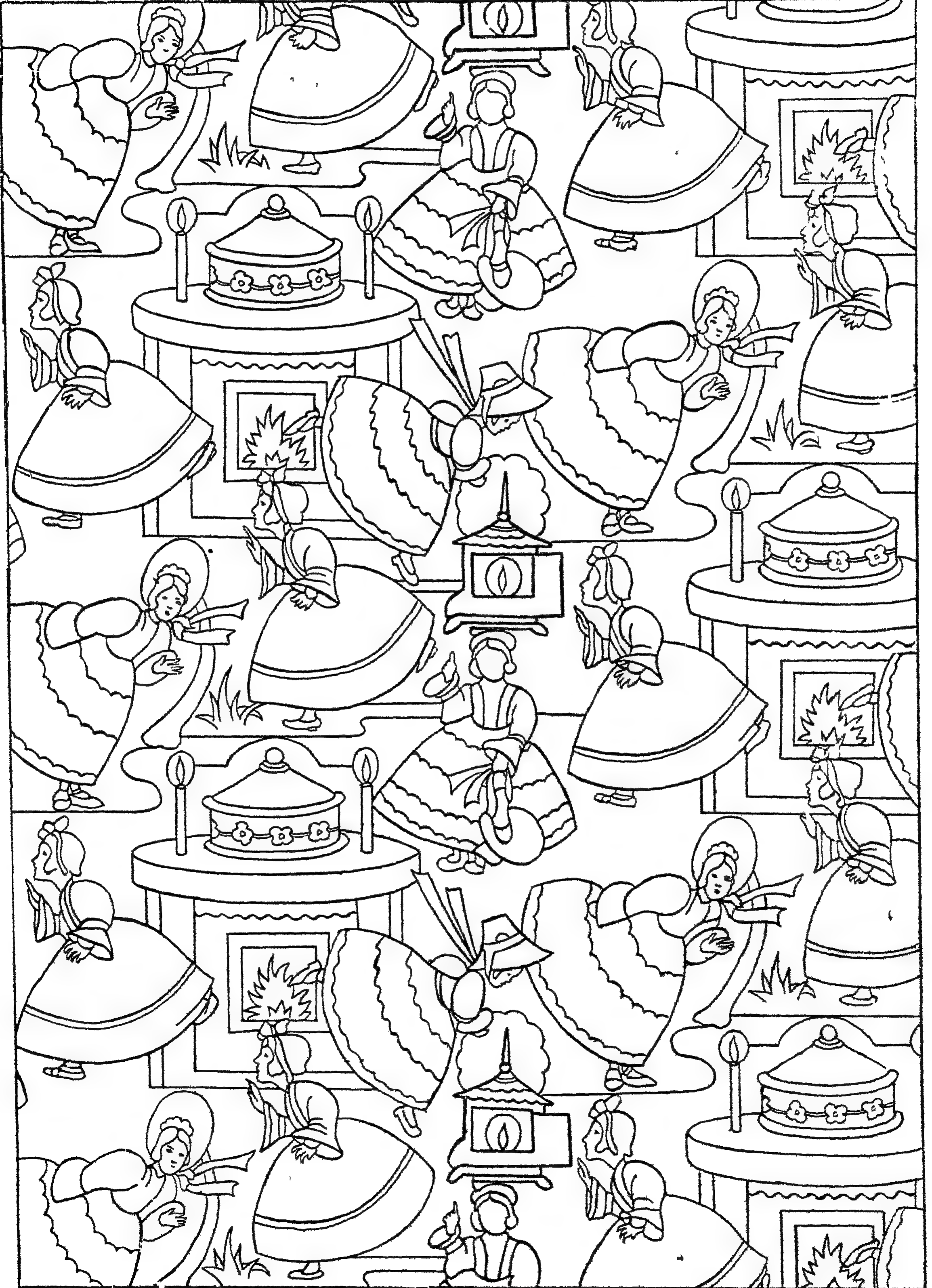
प्लेट नं० ५०



प्लेट नं० ५१



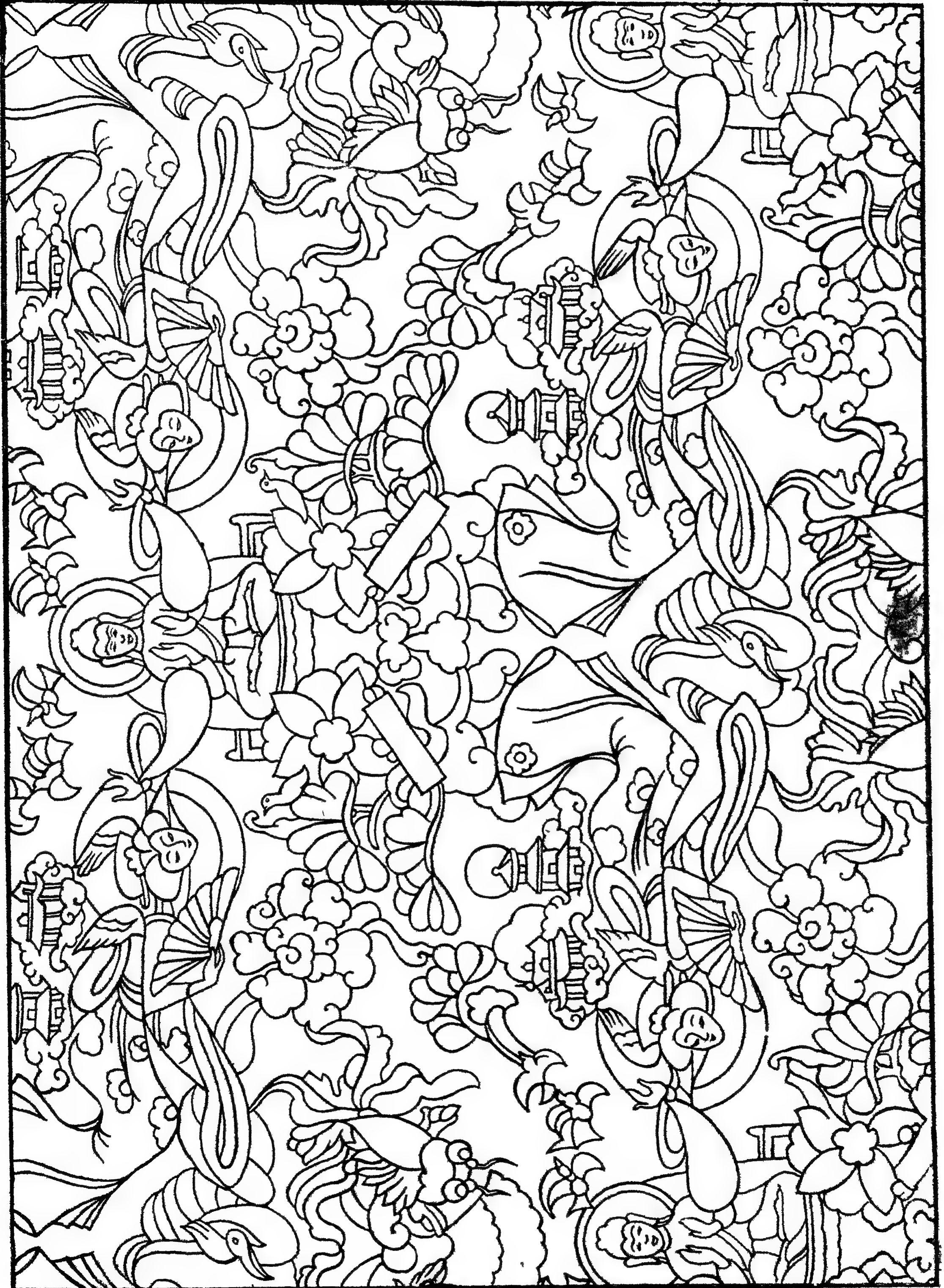
प्लेट नं० ५२



प्लेट नं ५३



प्लेट नं० ५४



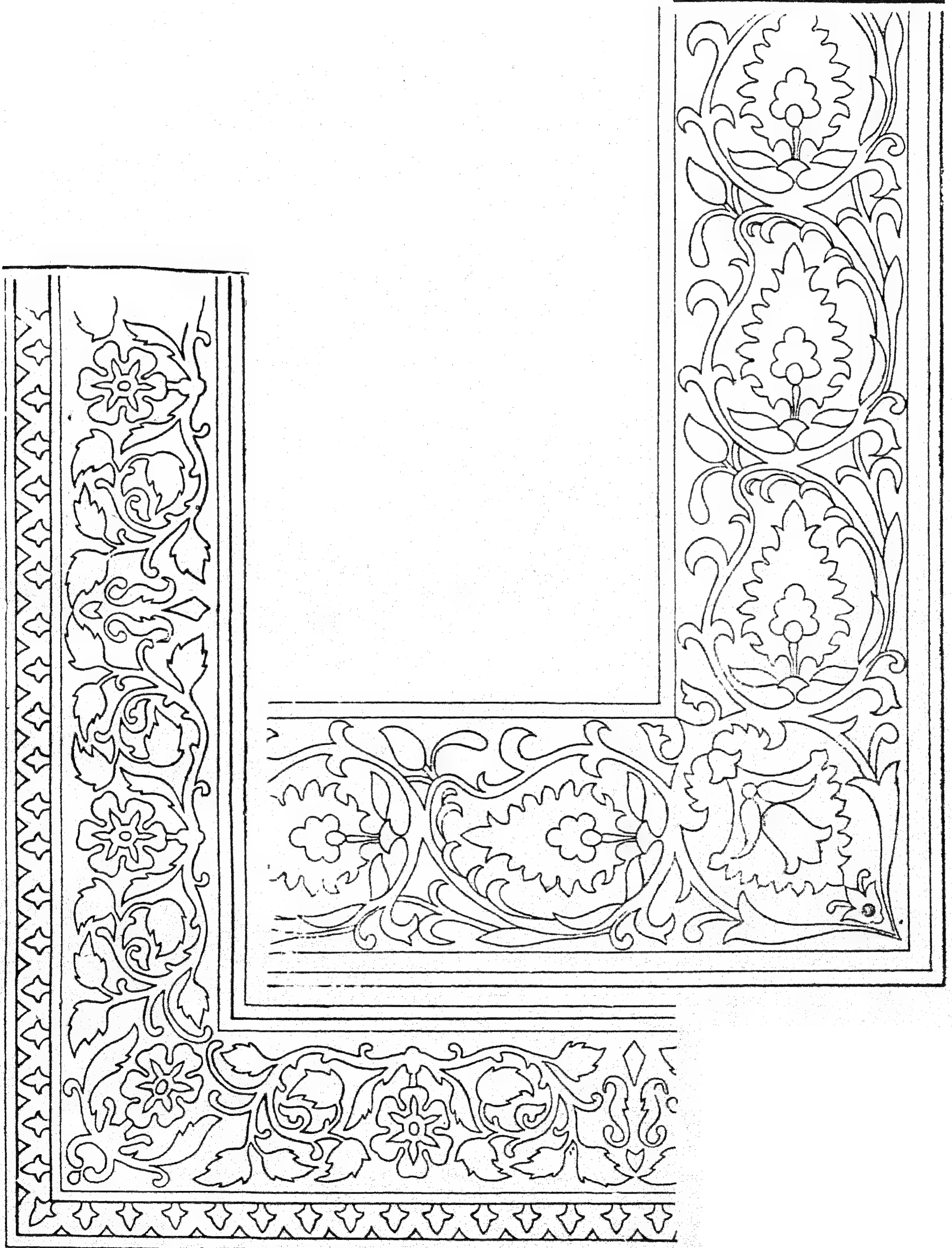
कोने, किनारी और बीच के लिए आकार कल्पनाएँ

इस विभाग मे यह बताने का प्रयत्न किया गया है कि किनारी पर के आकार को कोने पर कैसे बिठाया जाय। सबसे अधिक कठिनाई कोने से किनारी से जोडने मे आती है। कोने की इकाई अपने में पूर्ण होनी चाहिए और किनारी से ऐसी जुडी होनी चाहिए। जिससे यह प्रतीत हो कि या तो वह कोने से निकली है या वहाँ आकार समाप्त हो गई। इस प्रभाव को उत्पन्न करने के लिए मूल इकाई मे यदि कुछ परिवर्तन भी करना पडे तो कोई हानि नही।

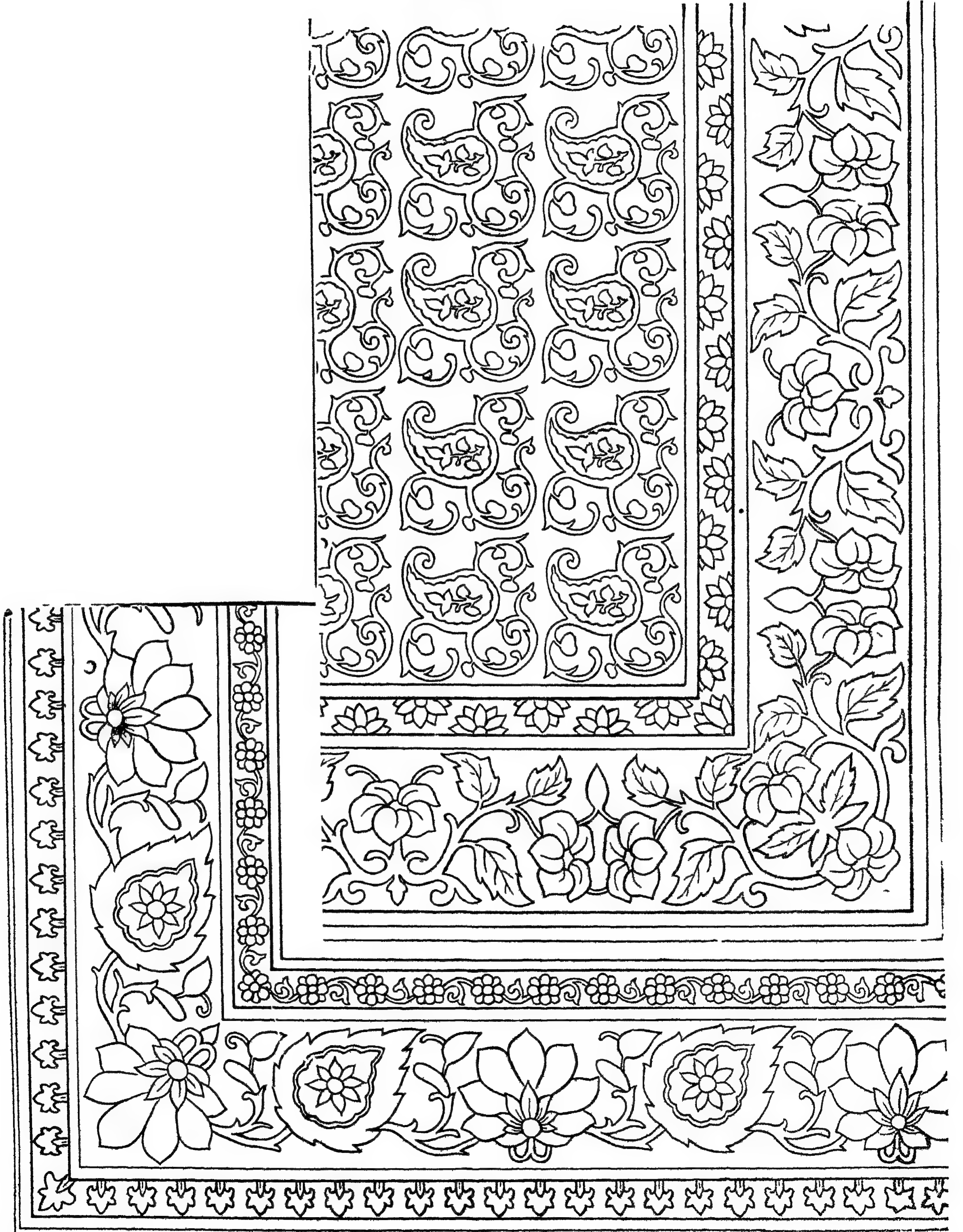
किनारी के साथ बनने वाले बीच के आकरो मे दो बाते ध्यान मे रखी जानी चाहिए। पहला यह कि उनके आकारो कि सामान्य रेखाये किनारी के रूपो की रेखाओ पर जैसा प्रभाव उत्पन्न करे। दूसरा यह कि उनका उत्स जहाँ तक सभव हो सके एक ही हो। अर्थात् या दोनो कल्पना जन्य हो या दोनो प्रकृति से गृहीत। ऐसी करने से ही हमारी आकार कल्पनाओ मे अधिक सौन्दर्य आ जायेगा।



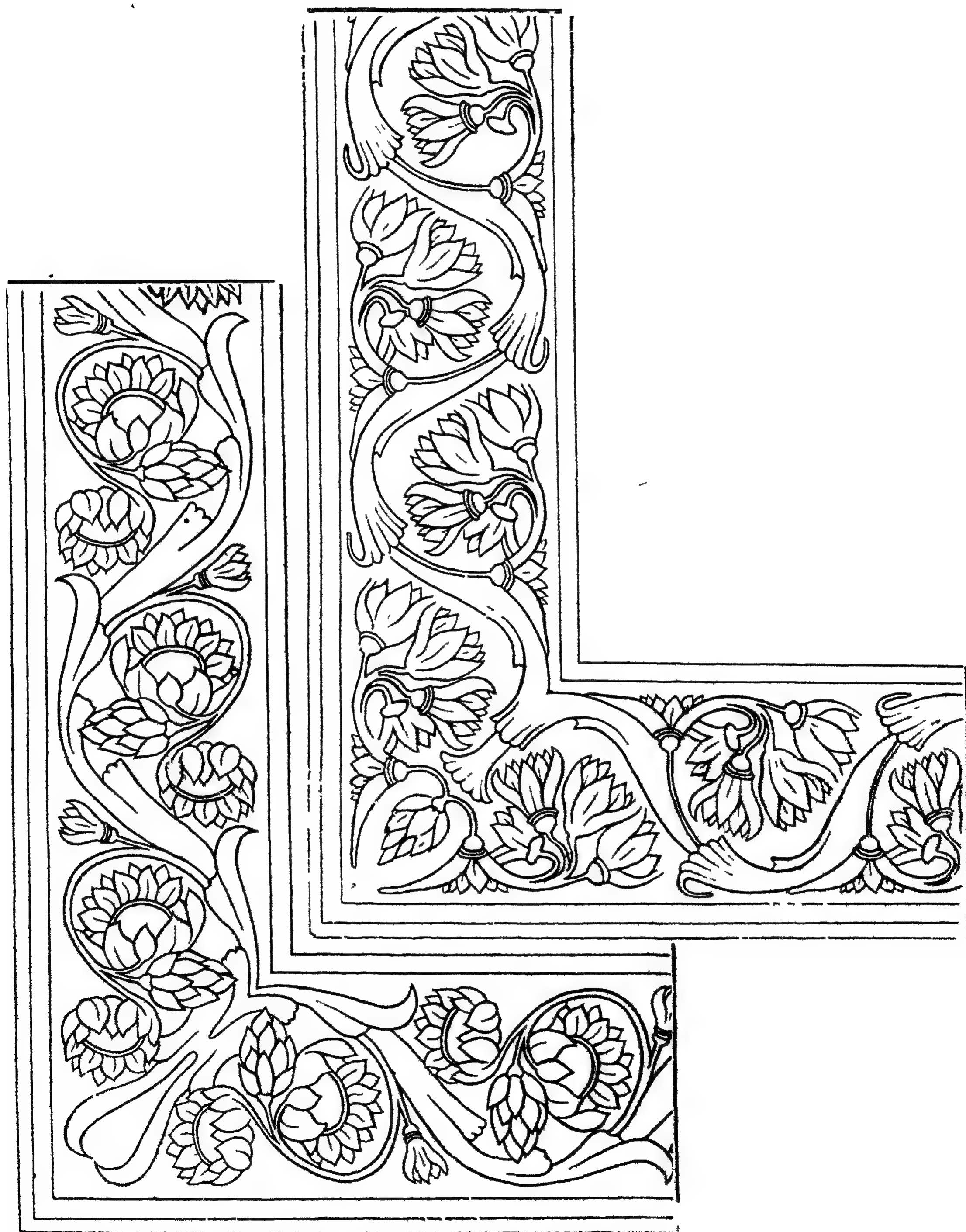
प्लेट नं० ५५



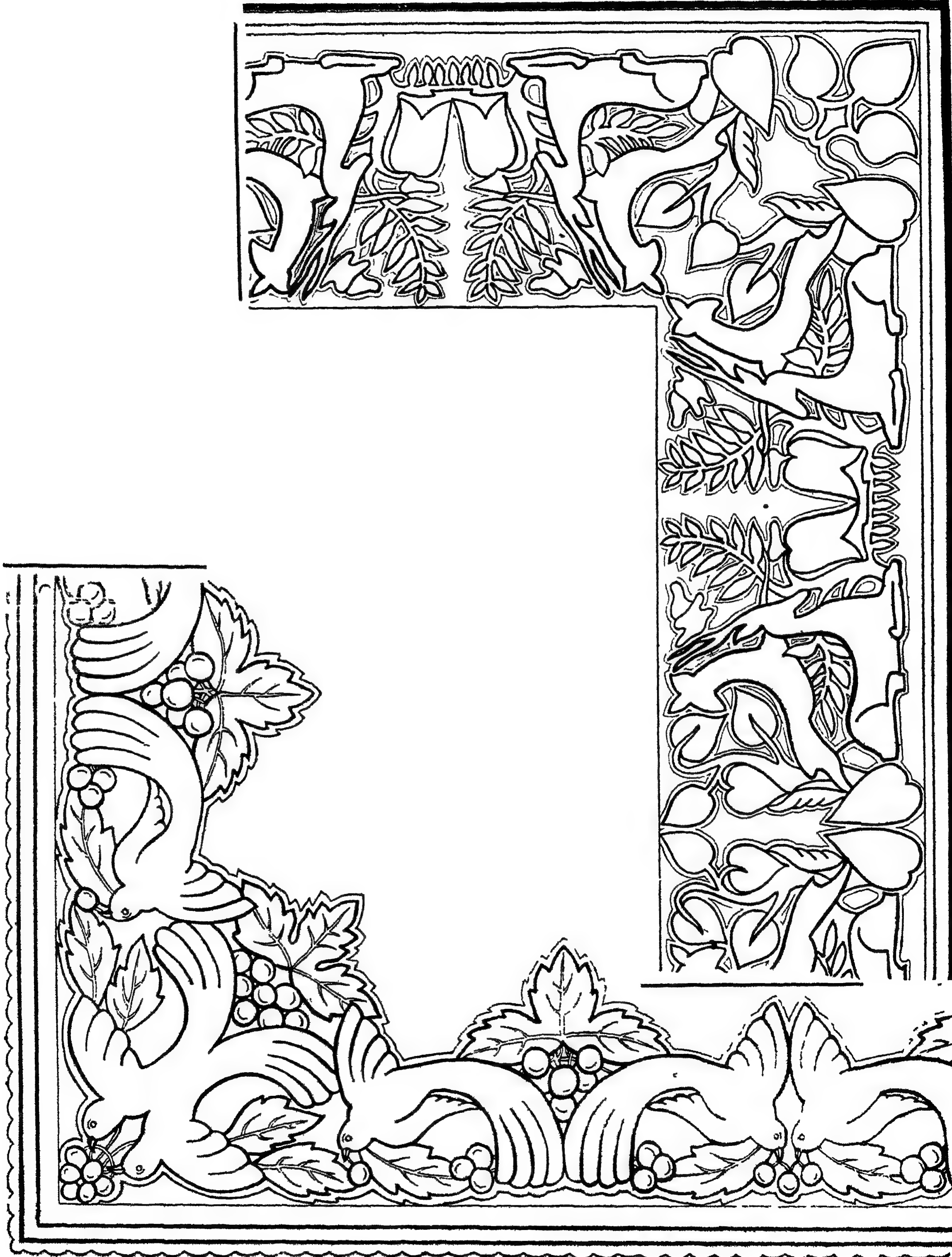
प्लेट नं० ५६



प्लेट न० ५७

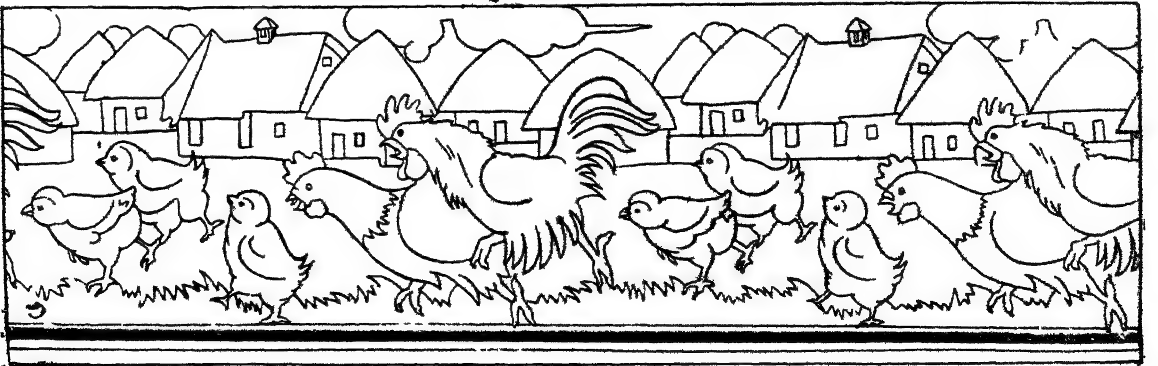


प्लेट नं० ५८

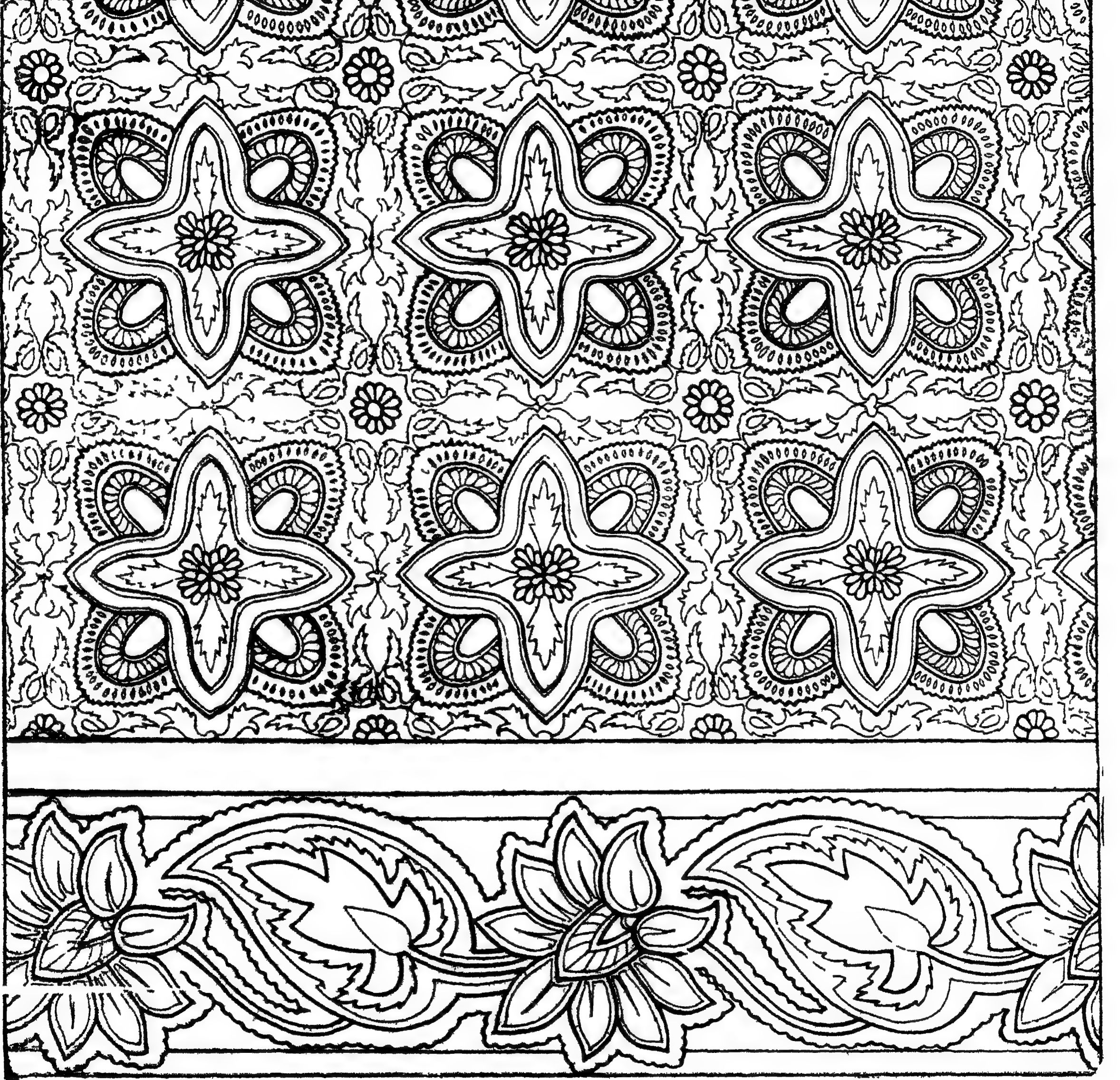


प्लेट नं० ५६





प्लेट नं० ६०



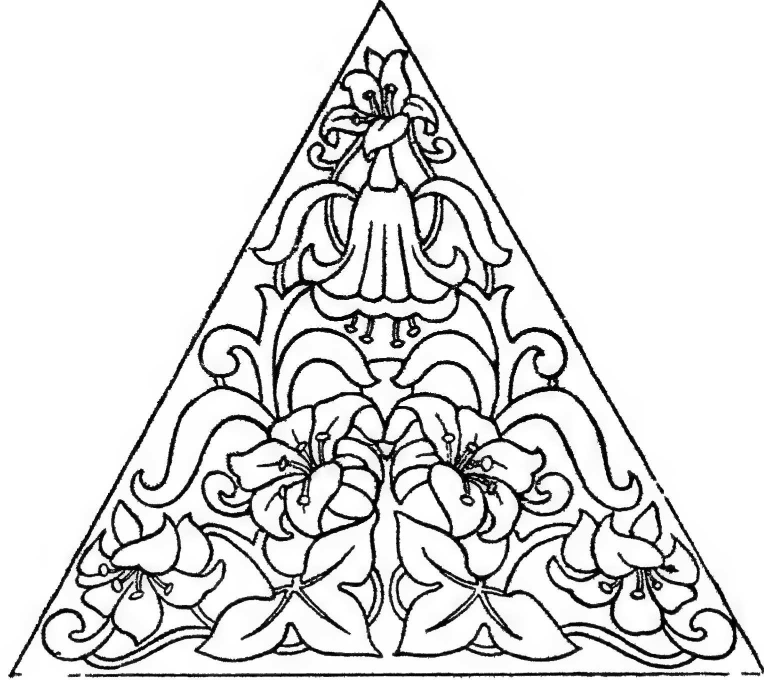
प्लेट नं० ६१

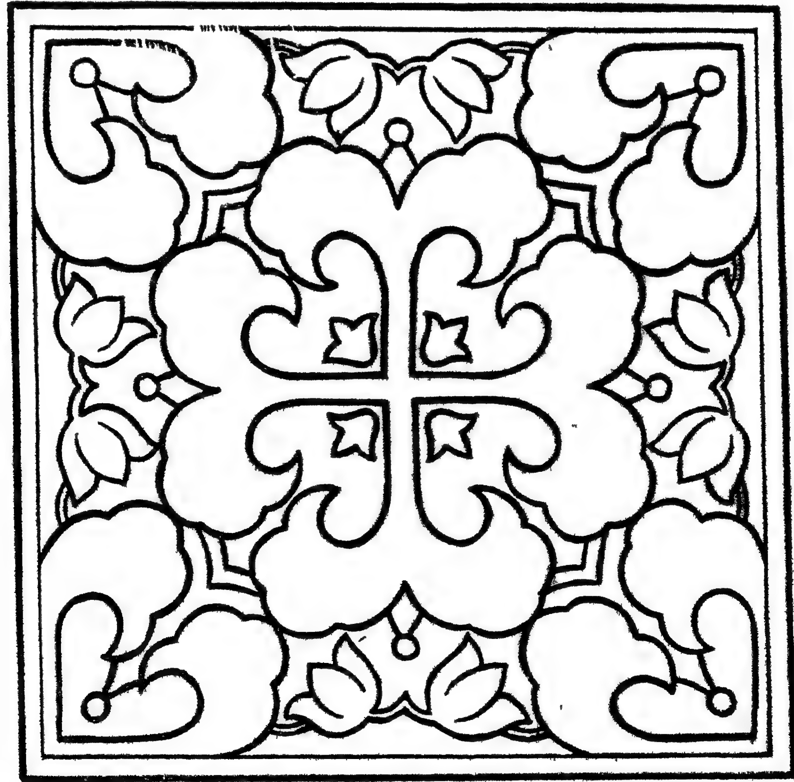


त्रिकोण तथा वर्ग के लिए आकार कल्पनाएँ

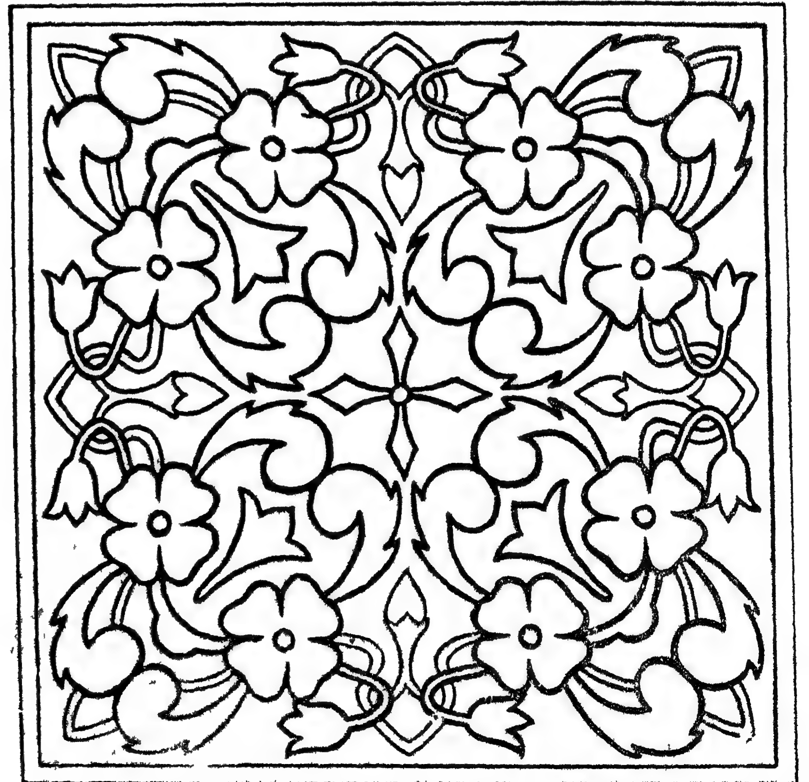
एक निश्चित स्थान को भरने के लिए सुविधानुसार उसके कई भाग किये जाते है। उदाहरणार्थ त्रिकोण के दो, और वर्ग के चार। त्रिकोण के तीन भाग भी किये जा सकते है किन्तु यदि वर्ग के हम चाहे कि तीन भाग हो जाये या पॉच नो यह असम्भव है। अतः इस बात को ध्यान में रखकर त्रिकोण मे हम निचले भाग मे अधिक इकाइयो को रख कर ऊपर की ओर उनकी सख्या कम करते जायें तो सुन्दर आकार बन सकता है। कभी-कभी बीच मे प्रधान रूप को रखकर उसके दाये बाये और ऊपर की ओर छोटे-छोटे रूप रखे जाते हैं। दूसरी ओर वर्ग में कोने और बीच के आकार अधिक ठोस होते है।

प्लेट नं० ६२

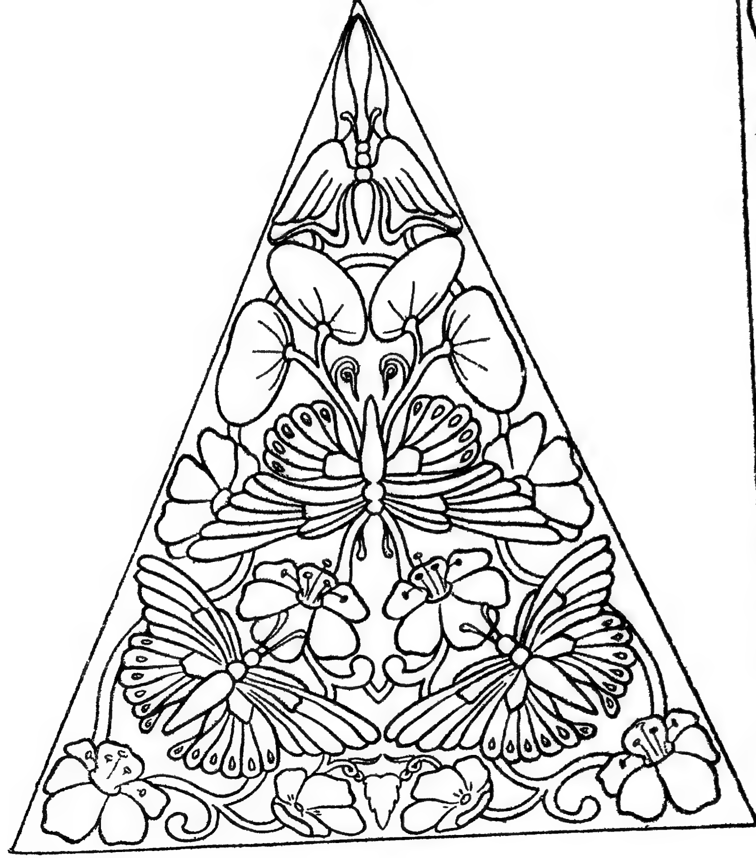


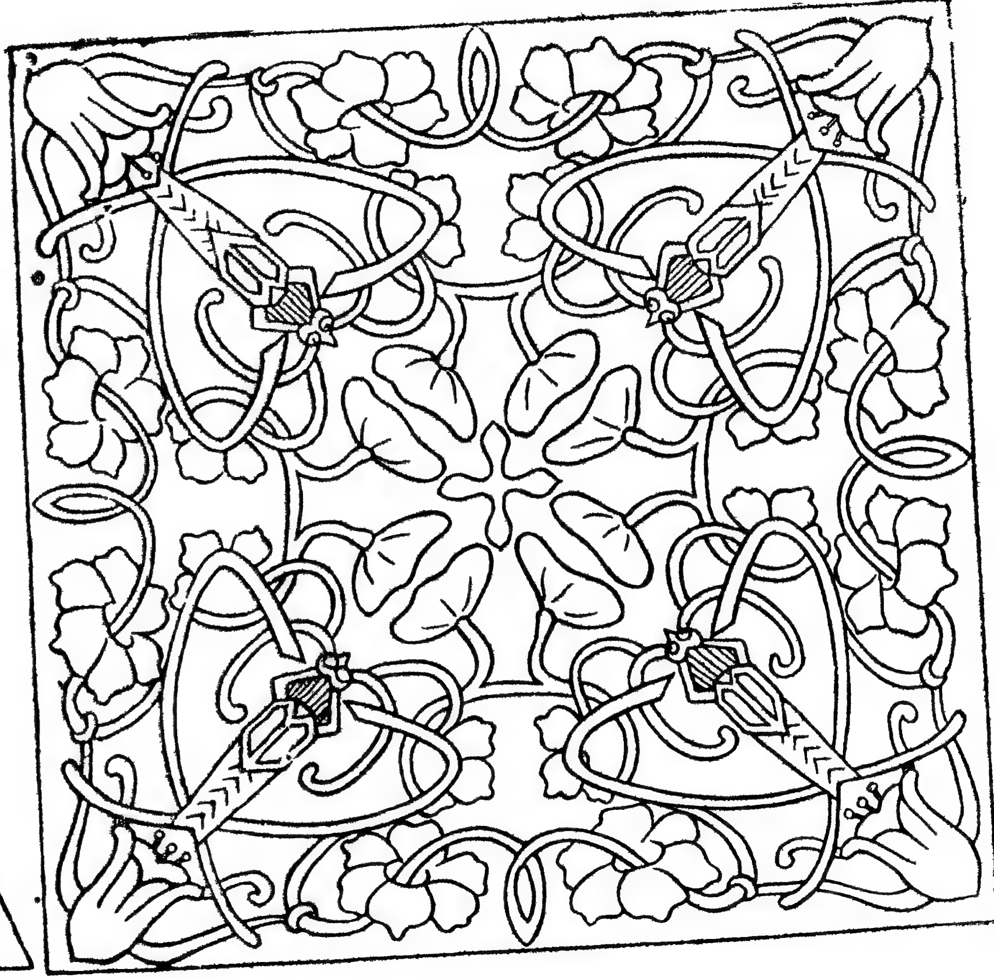






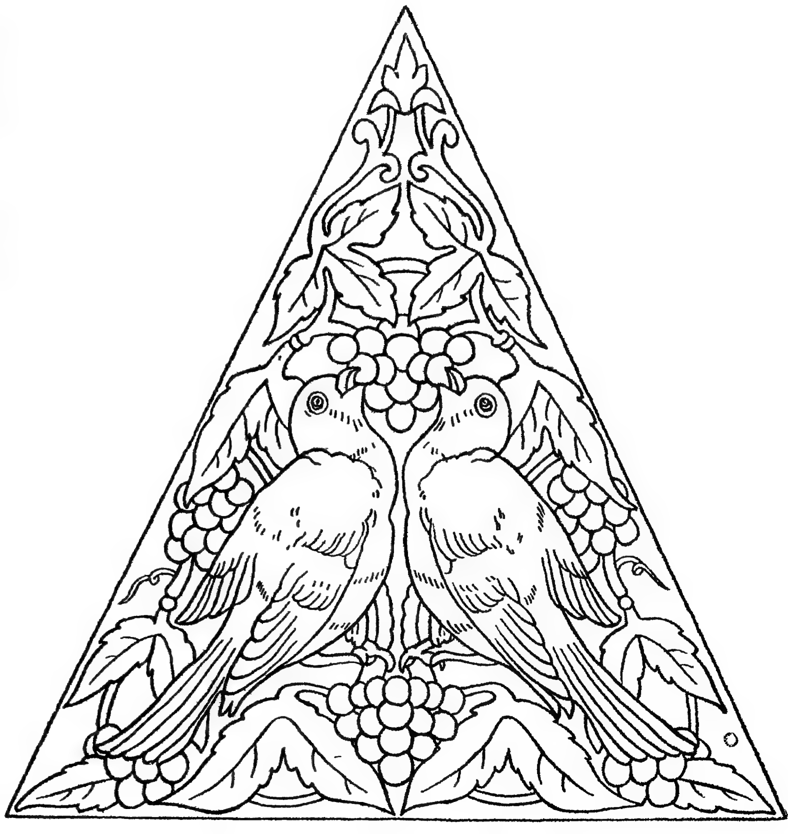
प्लेट नं० ६४





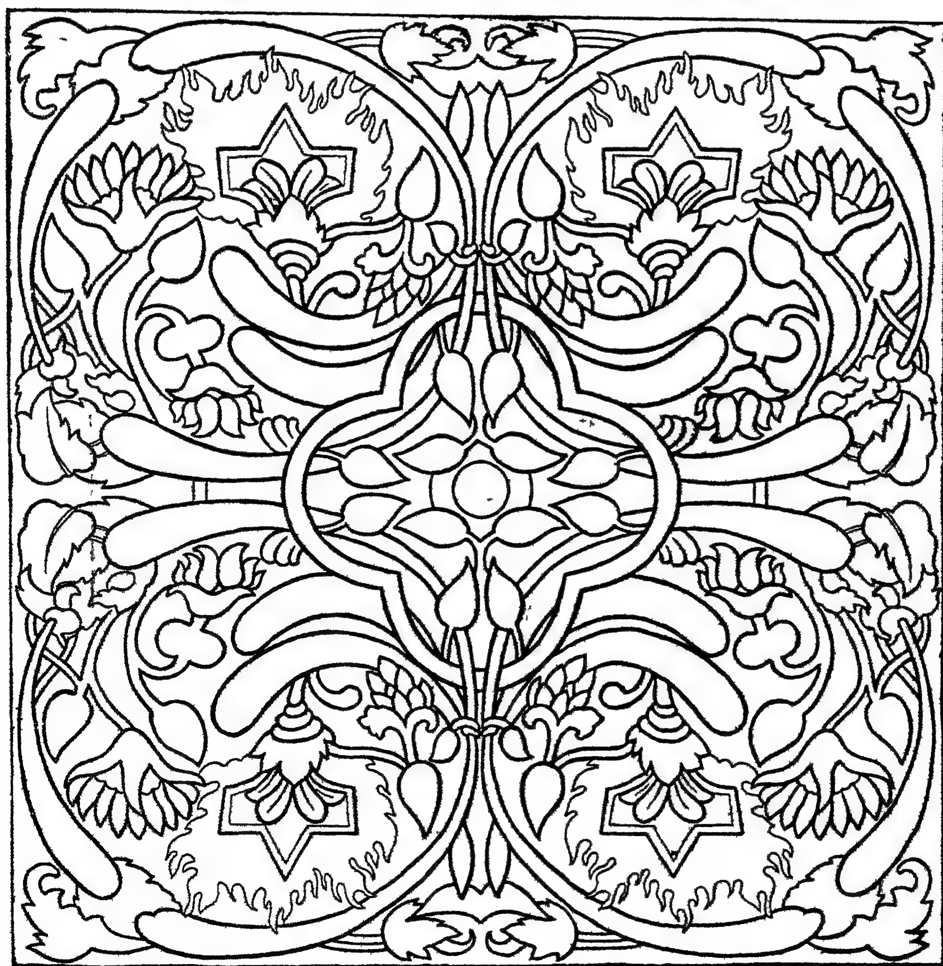
प्लेट नं० ६५



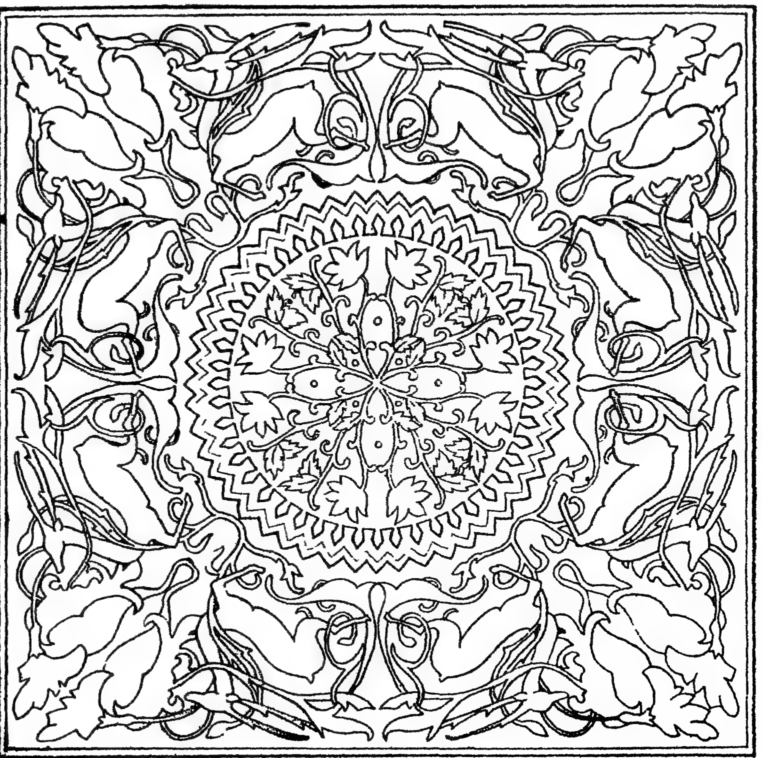


प्लेट नं० ६६



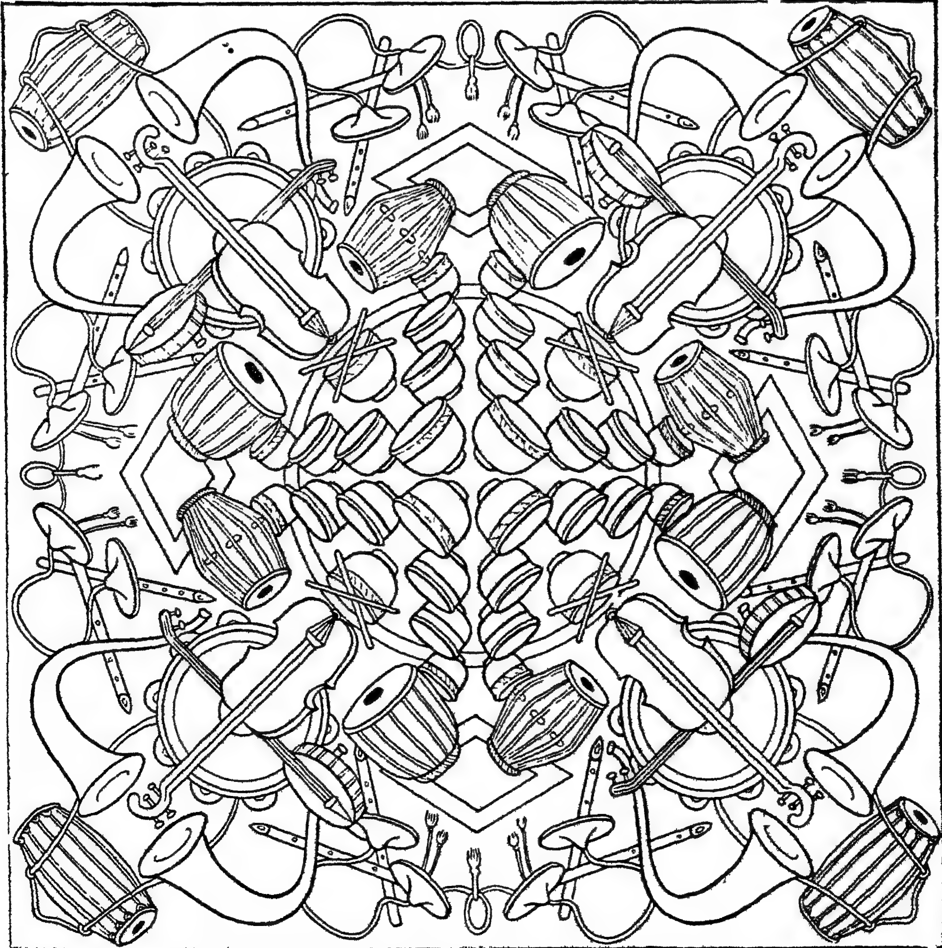


प्लेट नं ६७

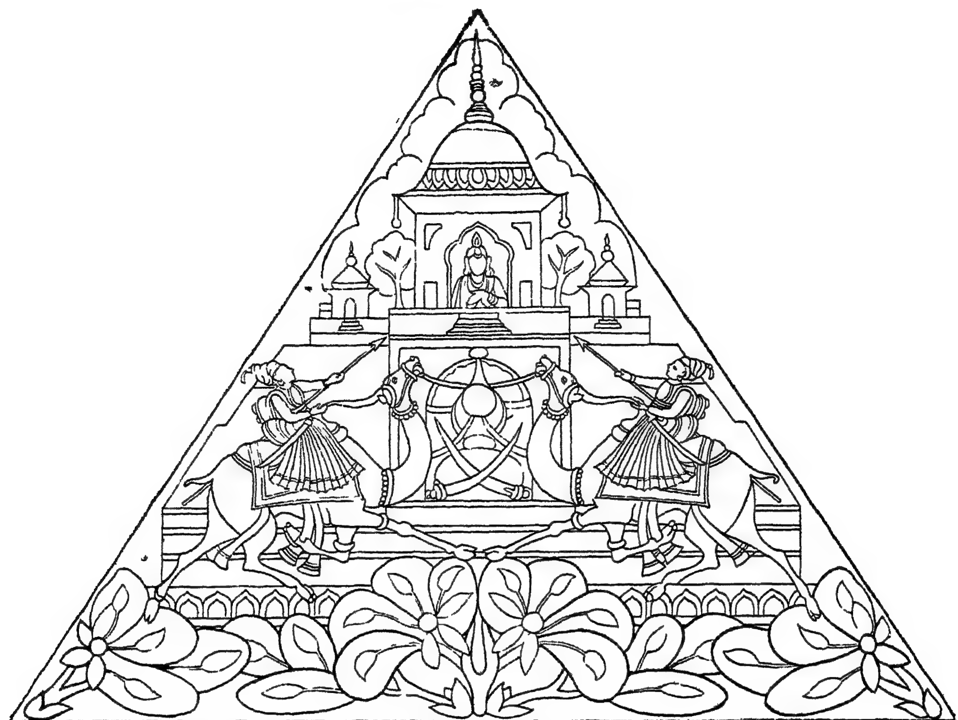


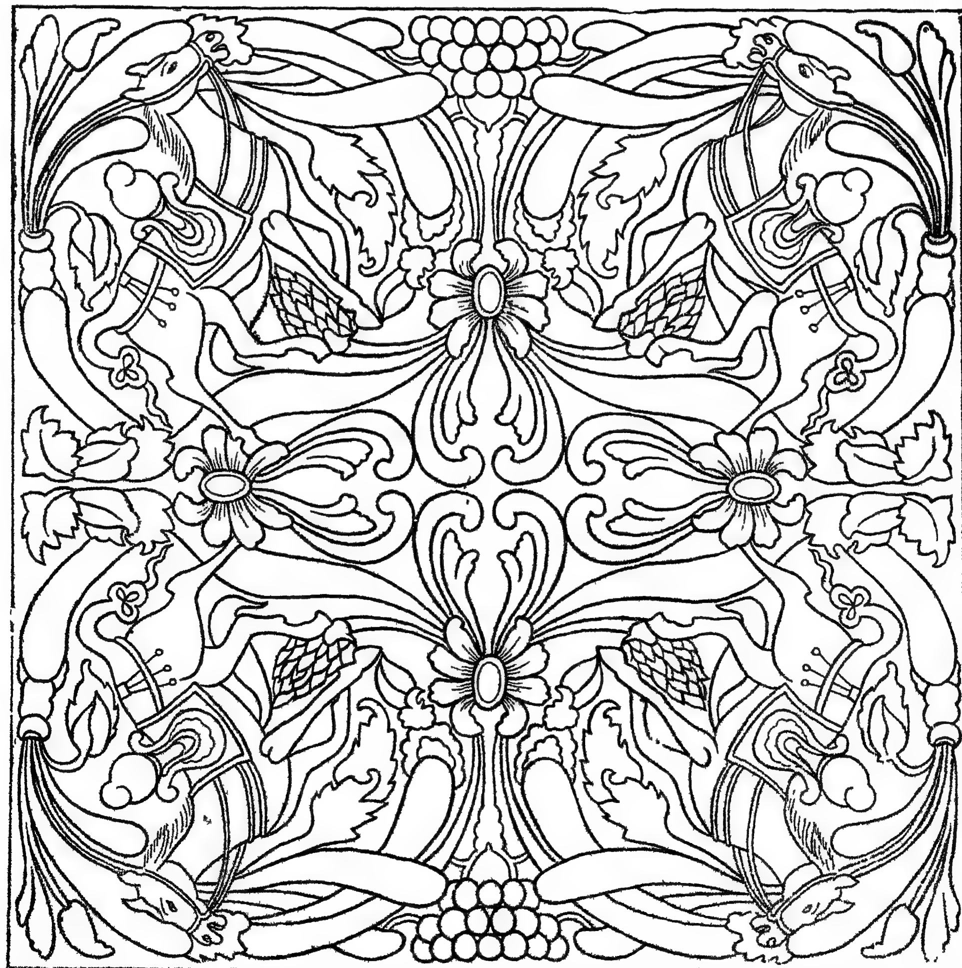
प्लेट नं० ६८



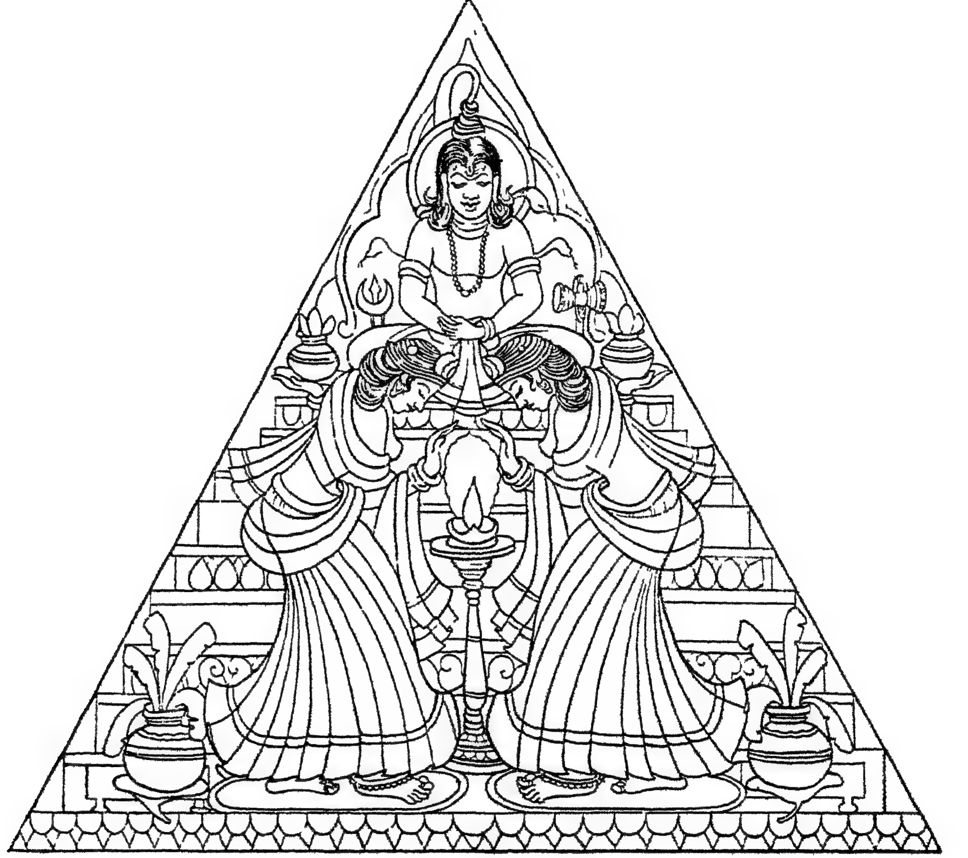


प्लेट नं० ६६

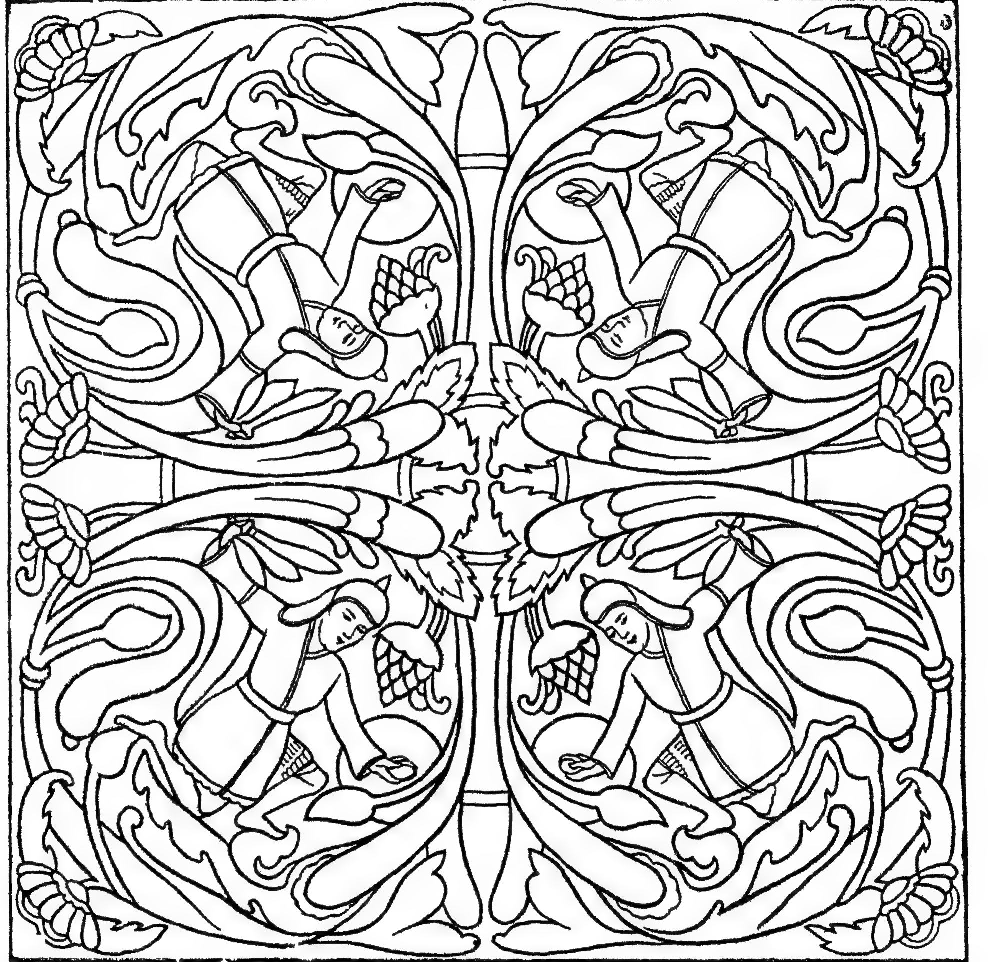




प्लेट न० ७० (अ)



प्लेट नं० ७०(ब)





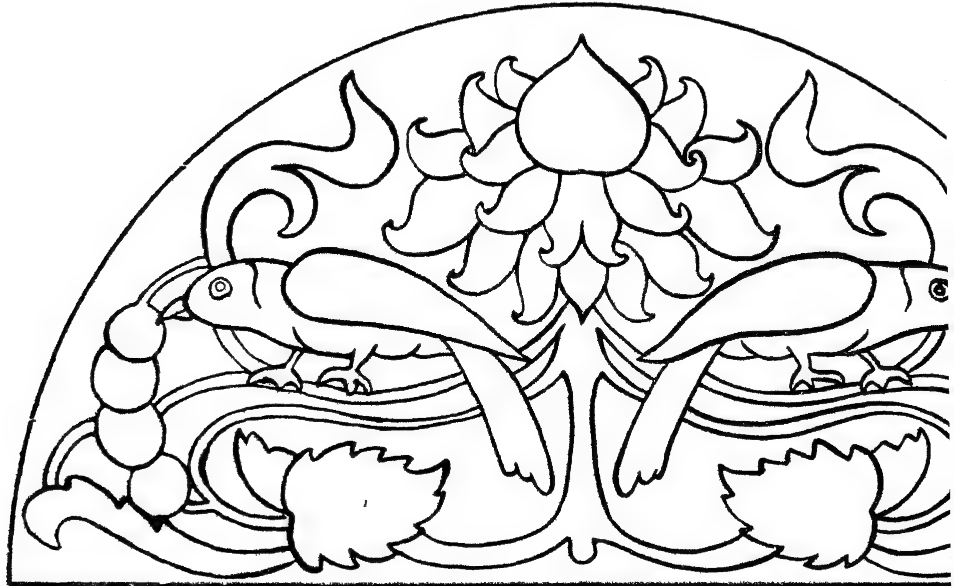
अर्ध वृत की आकार कल्पना

वृत्त तथा अर्द्धवृत्त

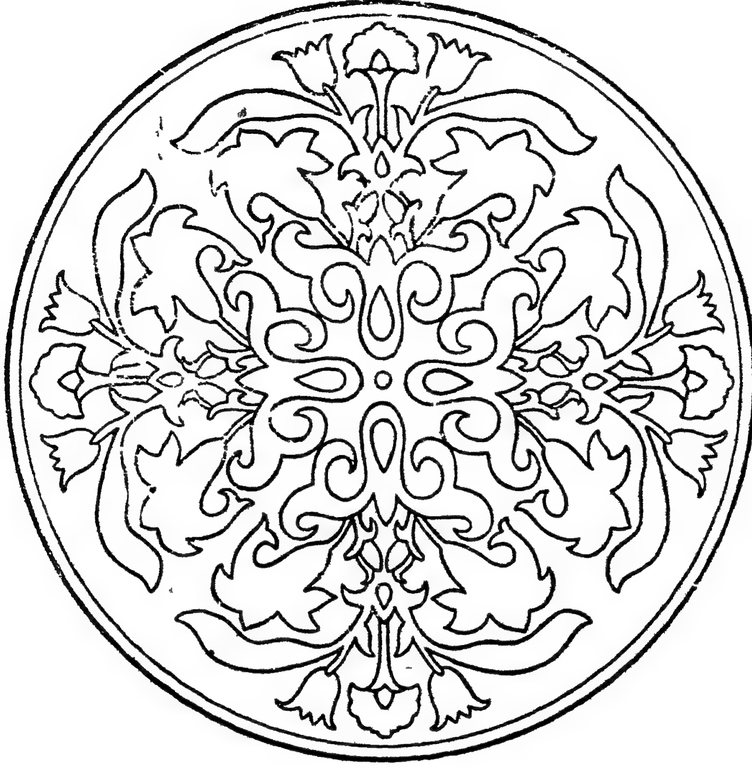
वर्ग की भान्ति वृत्त को कई भागो में बॉटने मे कोई कठिनाई नही होती अत उसके किनारे पर कोई बेल अथवा आकार को इकाई रखकर बीच मे अपेक्षाकृत बडा रूप रखा जाता है। बीच मे बडे रूप की आवश्यकता इसलिये पड़ती है क्योकि पहली बार में हमारी दृष्टि वही पडती है।

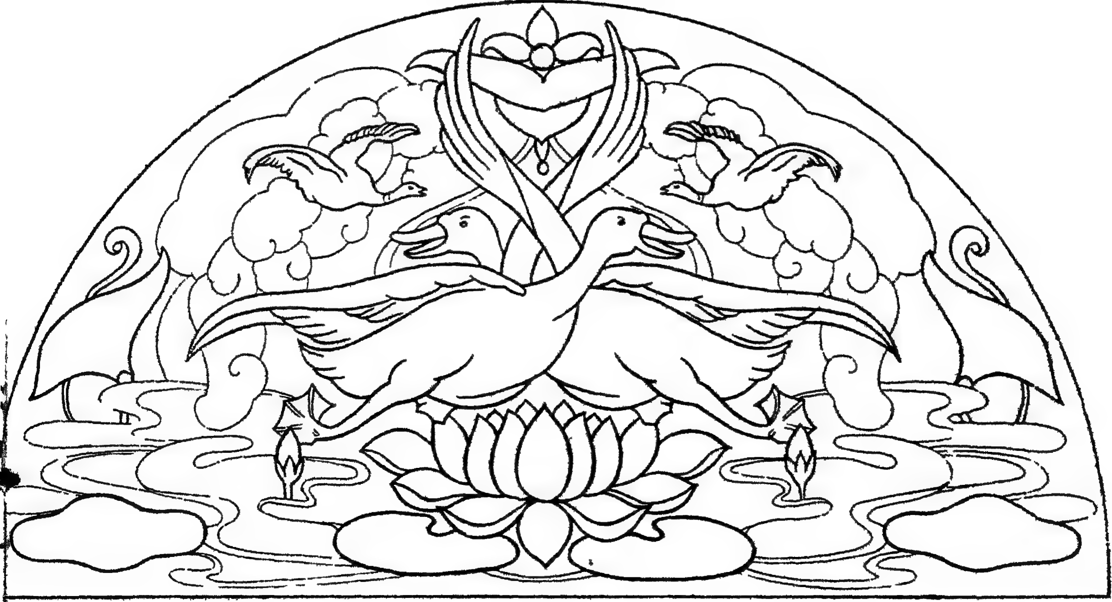
दूसरी ओर अर्द्धवृत्त मे त्रिकोण वाली आकार कल्पना का नियम अपनाया जाता है। अर्थात् या तो उसके दो भाग कर एक ही इकाई को दुहरा दिया जाता है या बीच में एक बड़े रूप को लेकर पार्श्व भाग मे छोटे-छोटे रूप रखे जाते है। कुछ अर्द्धवृत्तो में किनारों पर से चलने वाले बडे आकार बीच मे आकर समाप्त हो जाते है, अतः इनमे बीच रूप छोटा किन्तु अधिक प्रमुख होता है।



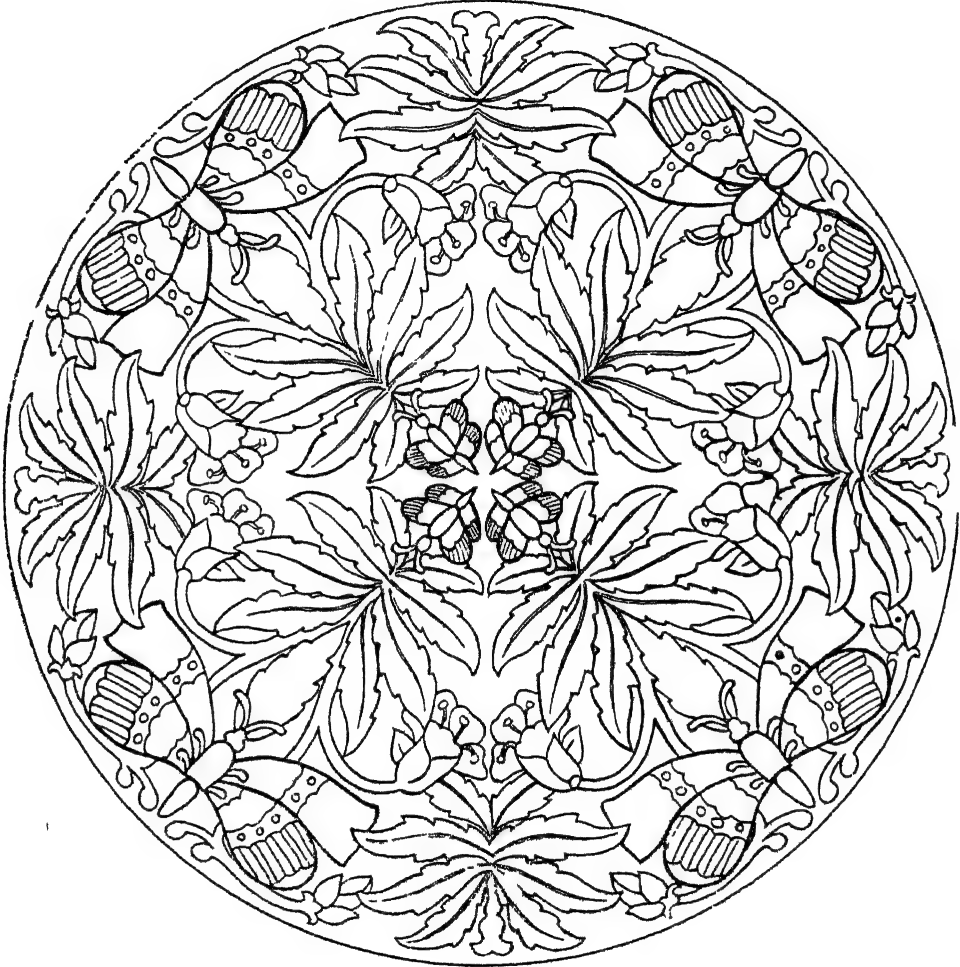


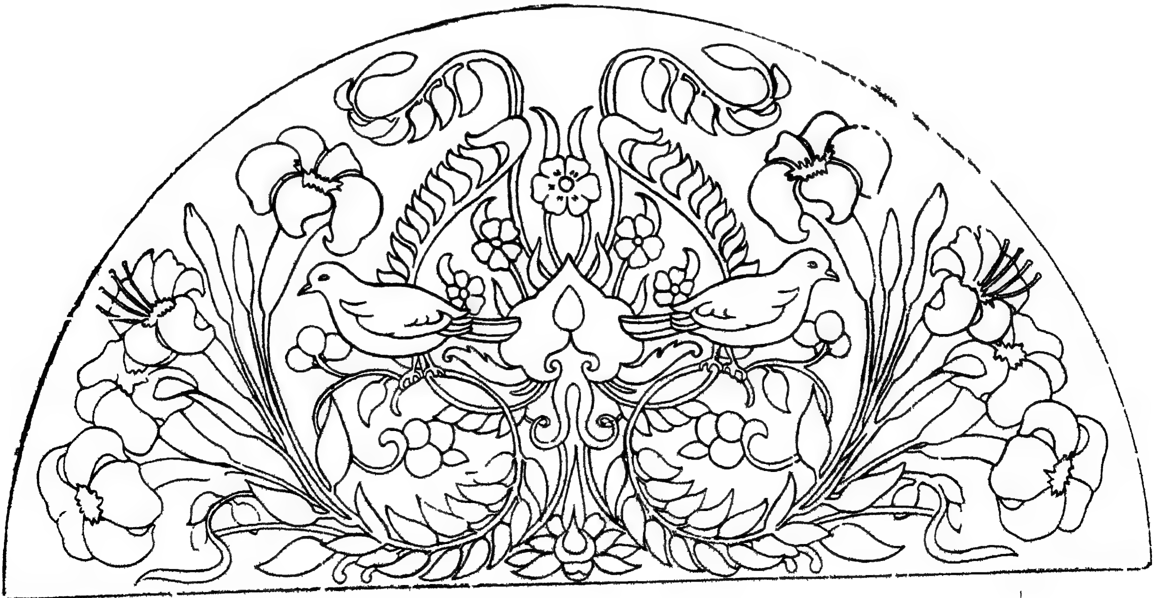
प्लेट नं० ७२



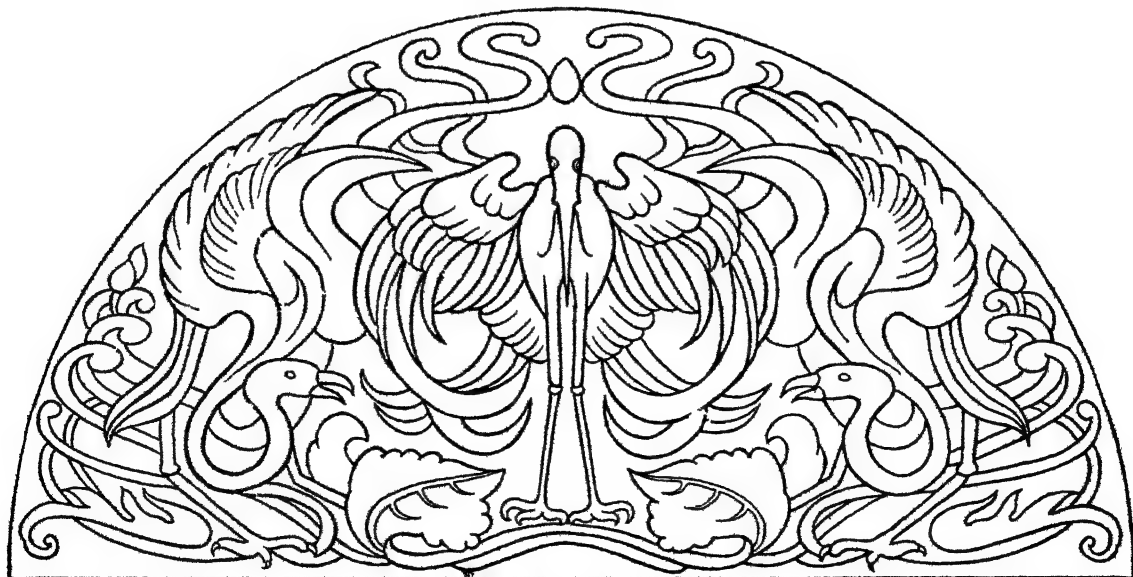


प्लेट नं० ७३



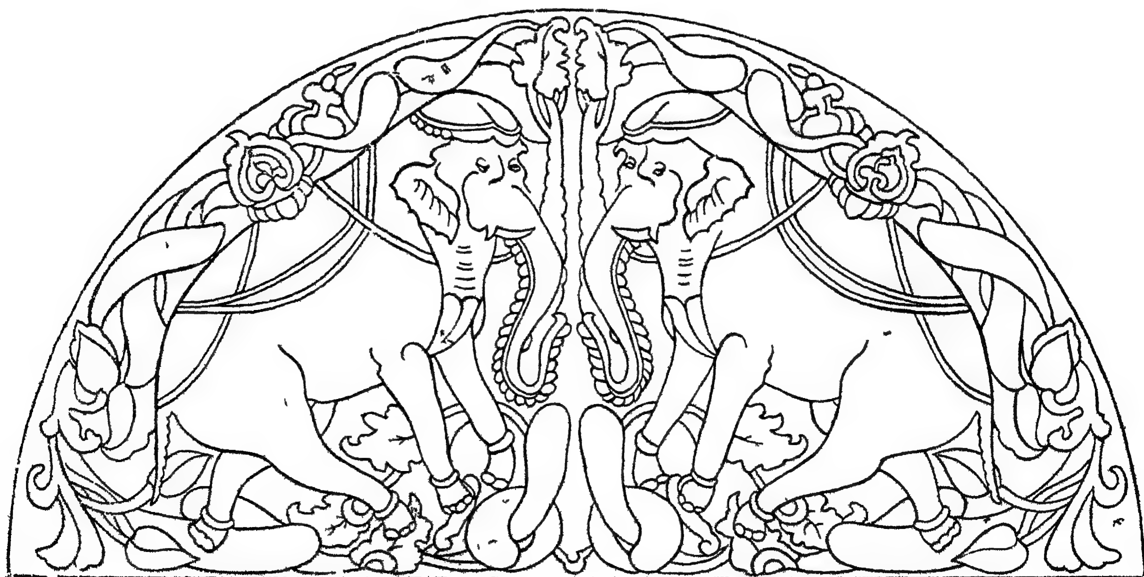


प्लेट नं० ७४

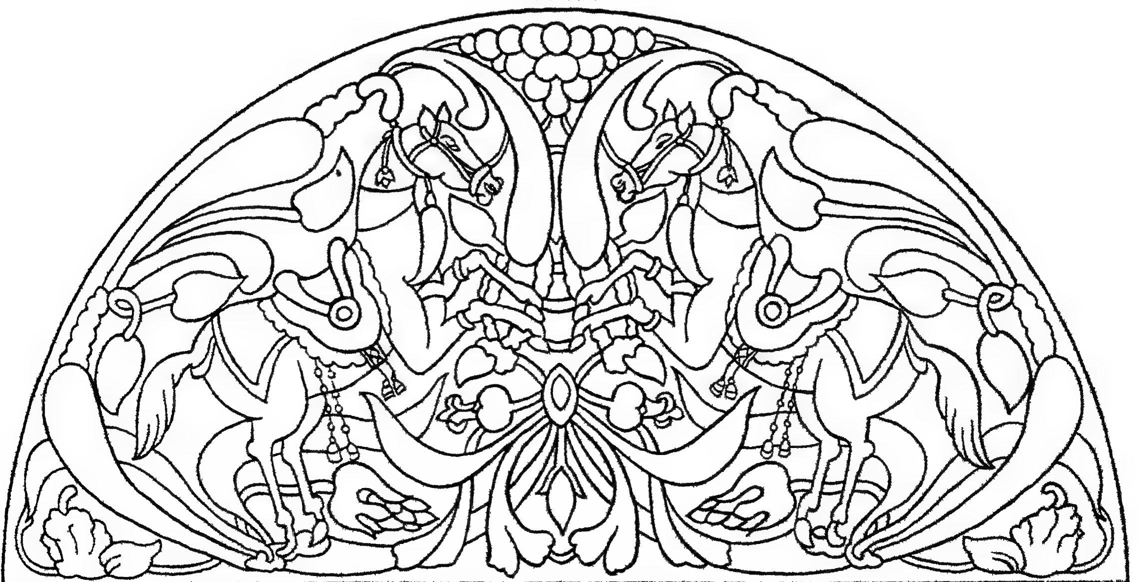


प्लेट नं० ७५

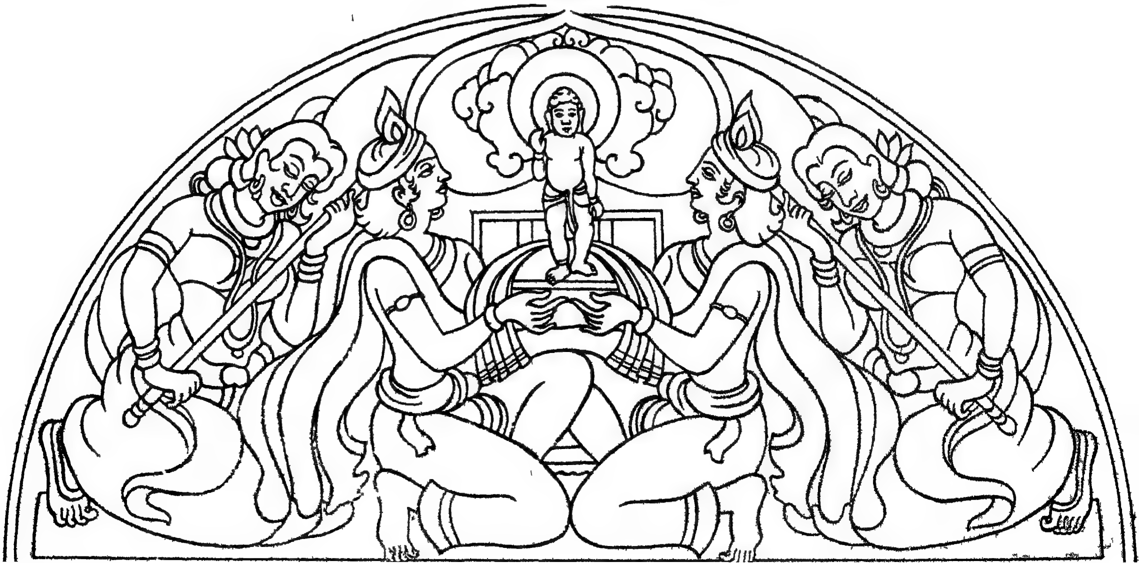




प्लेट नं० ७६



प्लेट नं० ७७



प्लेट नं० ७८





रज़ाई के लिए आकार कल्पना

यद्यपि समष्टि रूप आकार कल्पना के अन्तर्गत इनकी भी चर्चा हो चुकि है किन्तु स्पष्टता के लिए यहाँ कुछ नमूने दे दिये गये है

प्लेट नं० ८०



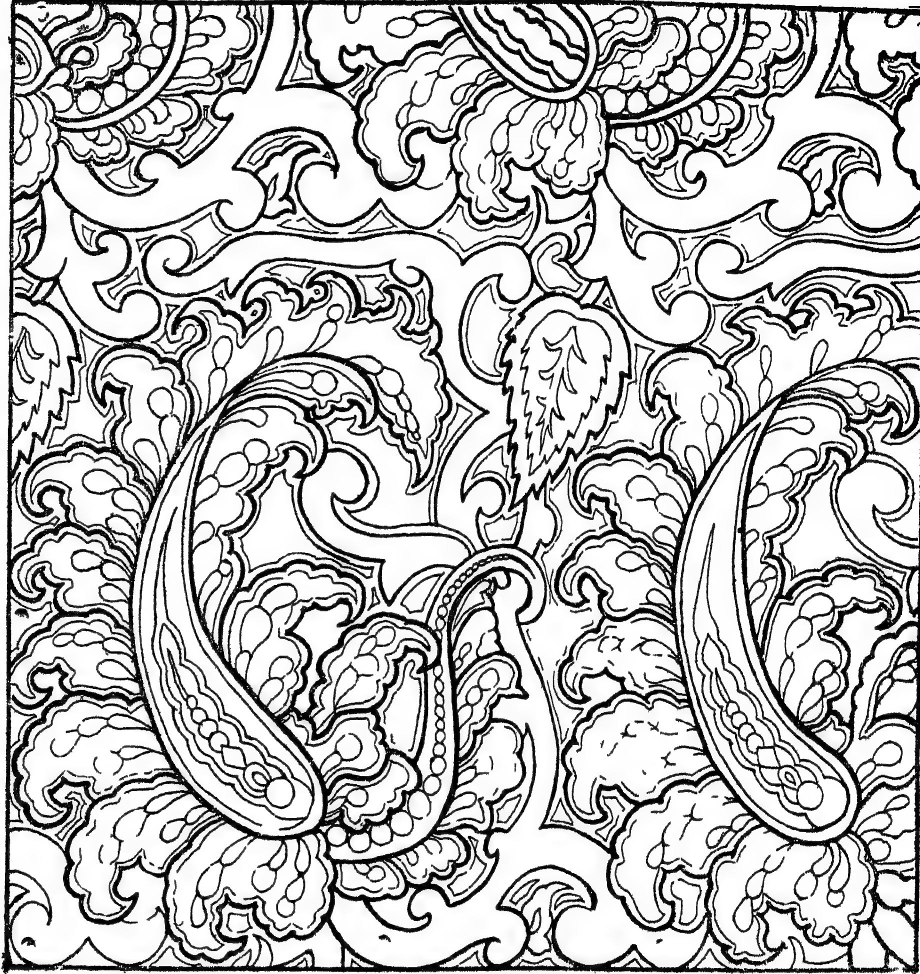
प्लेट नं० ८१

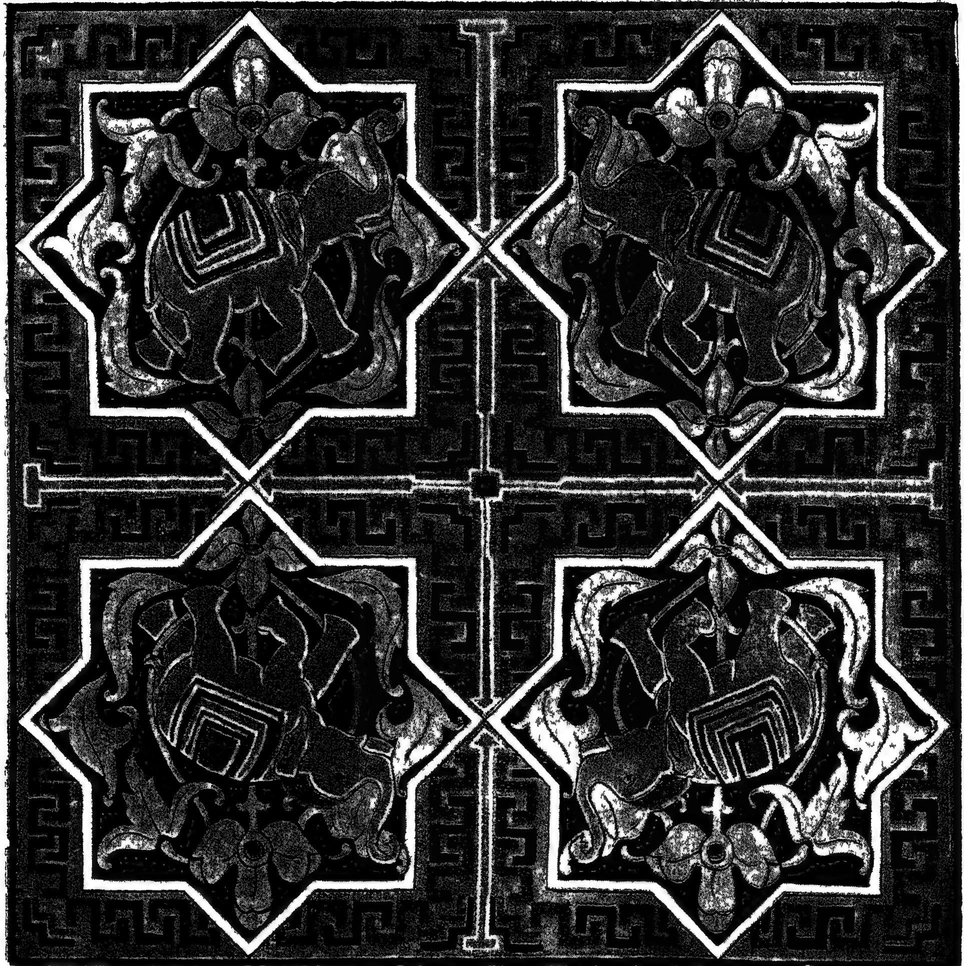


प्लेट नं० ८२



प्लेट नं० ८३





फर्श की आकार कल्पना

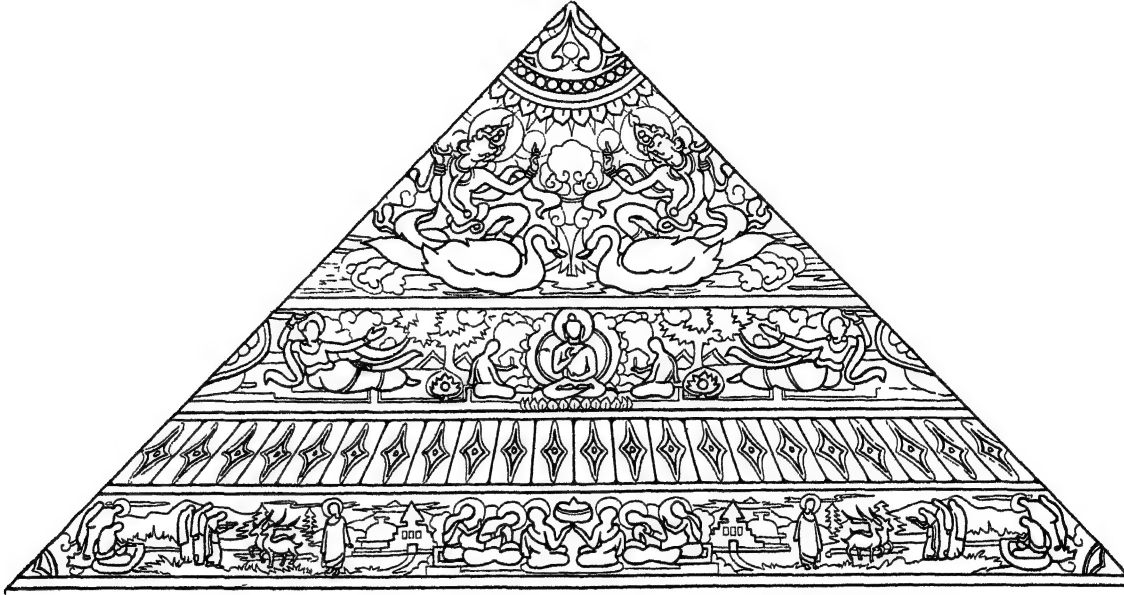
फर्श तथा छत के लिए आकार कल्पनाएँ

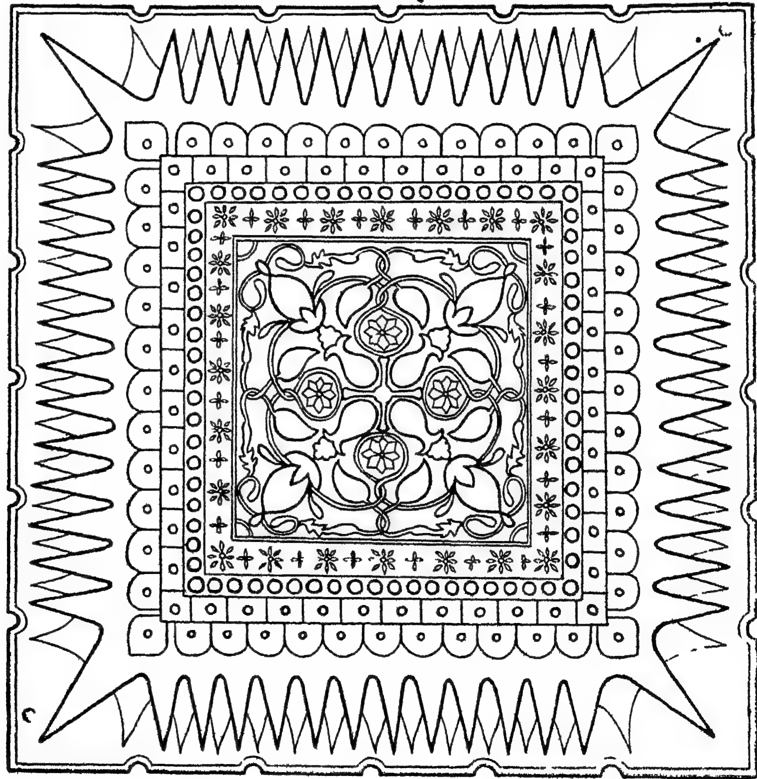
फर्श और छत दोनो की स्थिति पूर्णतया भिन्न है। एक पर हमारे पॉव पडते है और दूसरी को देखने के लिए हमे ऑखे ऊपर उठानी पड़ती है। अतएव हम कह सकते है कि यदि फर्श की आकार कल्पना छत पर की आकार कल्पना से सादी और अपेक्षाकृत अधिक बड़ी हो तो सुन्दर दिखाई पडेगी। यहाँ छत की आकार कल्पनाओ का सिर्फ चौथाई भाग ही दिया गया है।

फर्श पर निन्यानवे प्रतिशत आकार कल्पनाएँ वर्गाकार बनती है और उनमें अधिकतर कल्पना-जन्य ज्यामितीय आकारो का ही प्रयोग होता है। छत पर के आकार वर्गाकार और वर्त्तुलाकार दोनो होते है और उनमे अपेक्षाकृत काम भी अधिक होता है। कभी-कभी एक वर्ग के भीतर भी वृत्त बनाकर दुहरा प्रभाव उत्पन्न किया जाता है। ऐसे आकारो में बीच के वृत्त के सन्तुलन के लिये किनारे के आकार मे अधिकतर बेले इत्यादि बनाई जाती हैं।

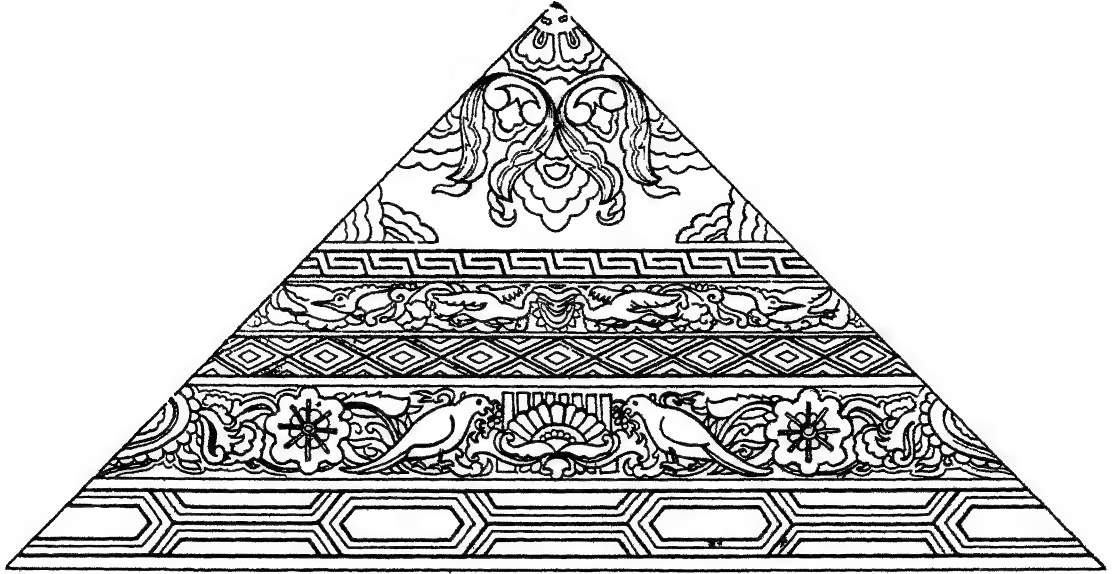
देश काल के भेद से इन आकारो मे भी अन्तर आ जाता है। अजन्ता की छत पर बने आकारो में ज्यामितीय फल, फूल, पत्तियाँ, पक्षी-पशु तथा मनुष्य सभी के रूपो का समावेश हुआ है। कोने पर के लिए तो खास तौर पर मनुष्याकृतियों को लिया गया है। उधर मुसलमानी प्रदेशो में मनुष्य अथवा पशु पक्षियो की आकृतियो का अङ्कन धर्म विरुद्ध समझा जाता था अतएव वहाँ पर कल्पना-जन्य आकारों की ही धूम मची। दोनो को सामने रखकर अन्तर स्पष्ट हो जाता है।

प्लेट नं० ८४



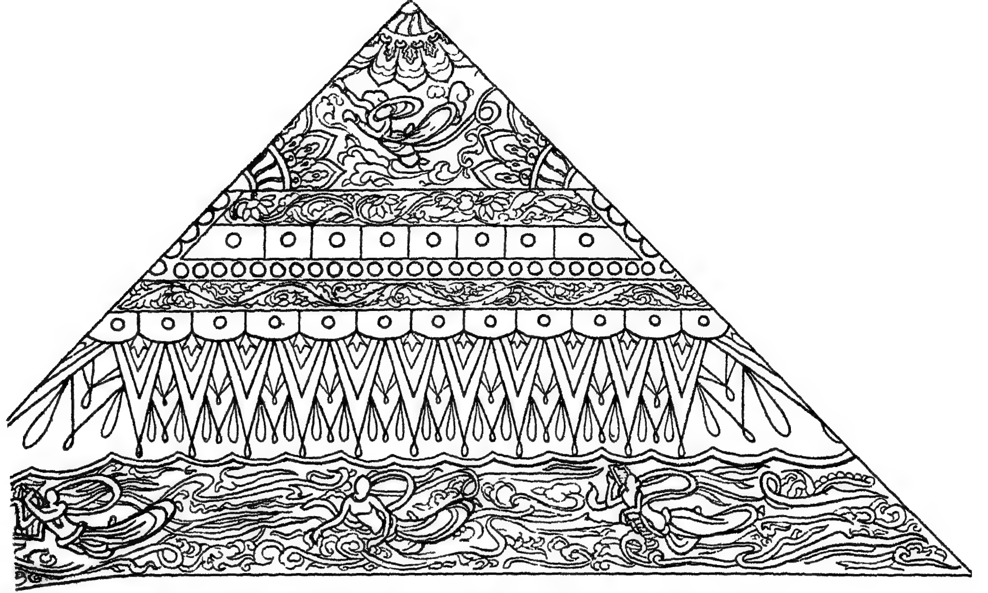


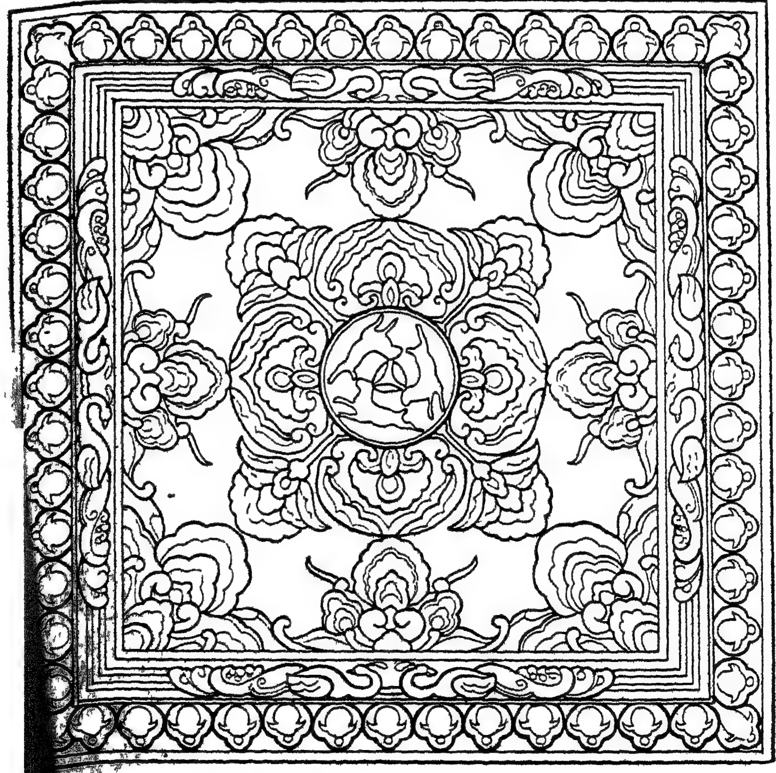
प्लेट नं० ८५



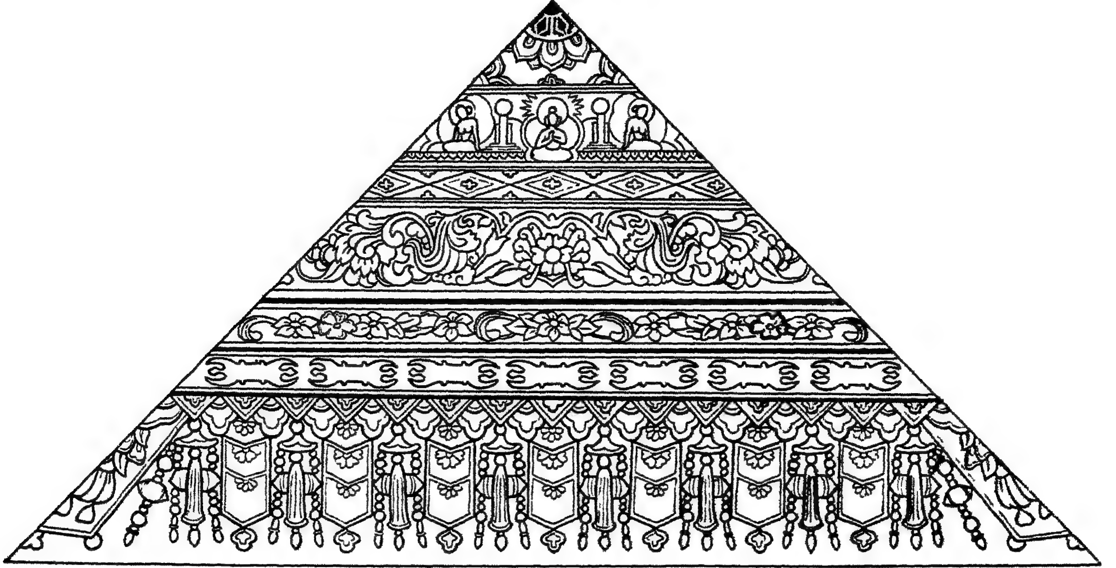


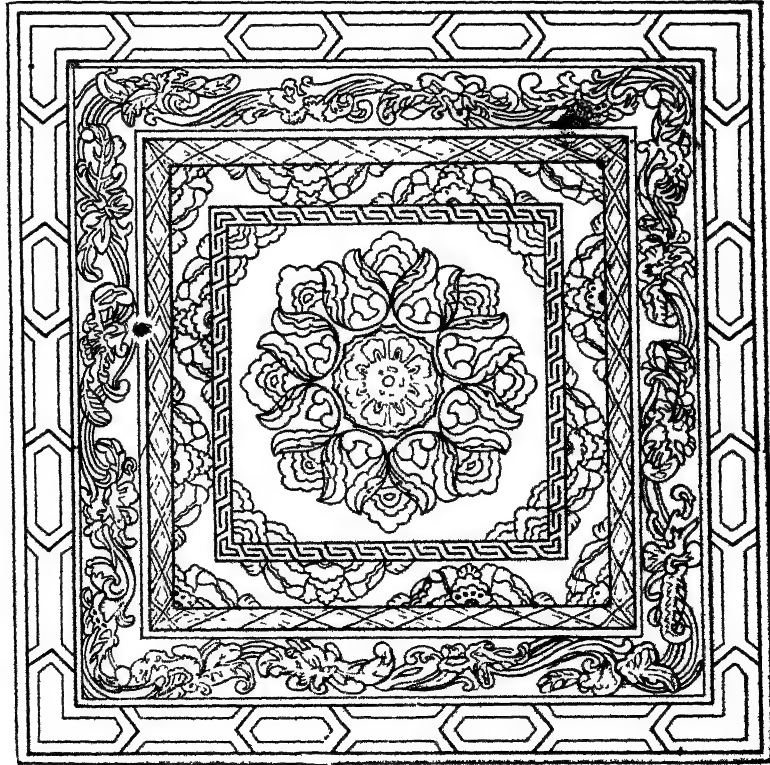
प्लेट नं० ८६





प्लेट नं० ८७

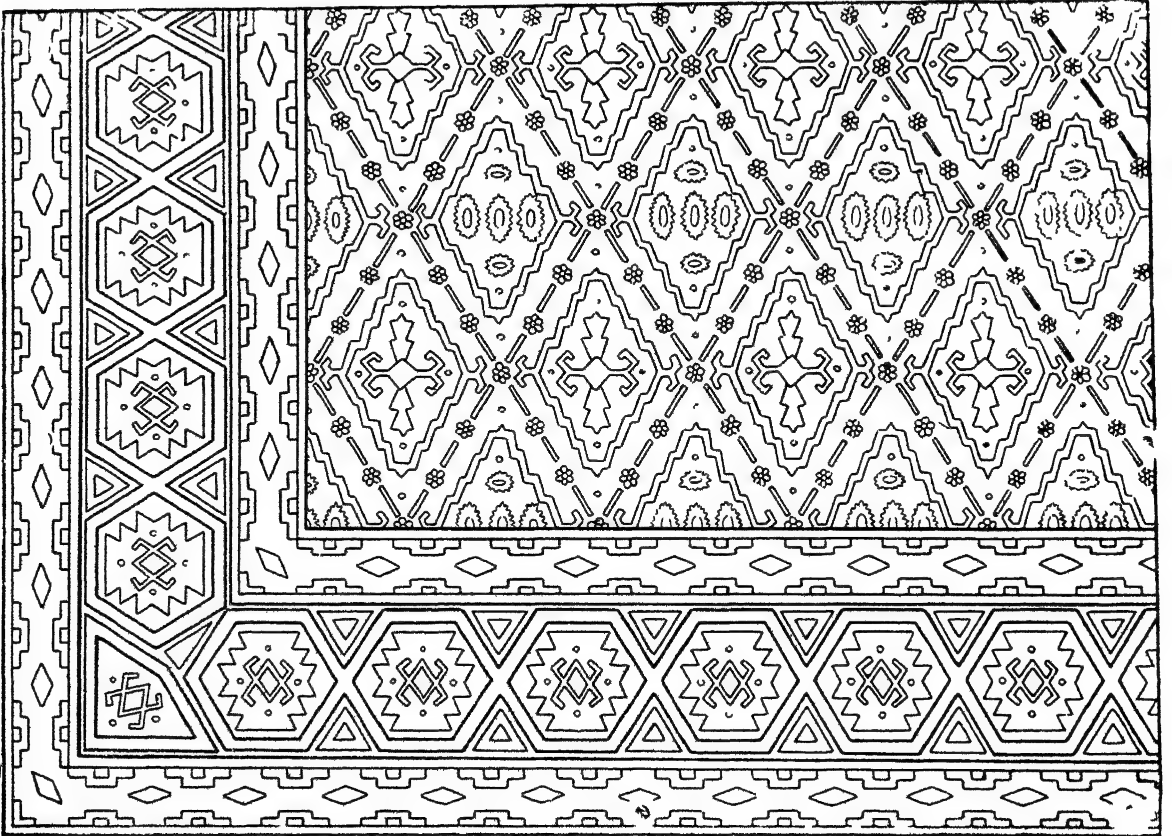




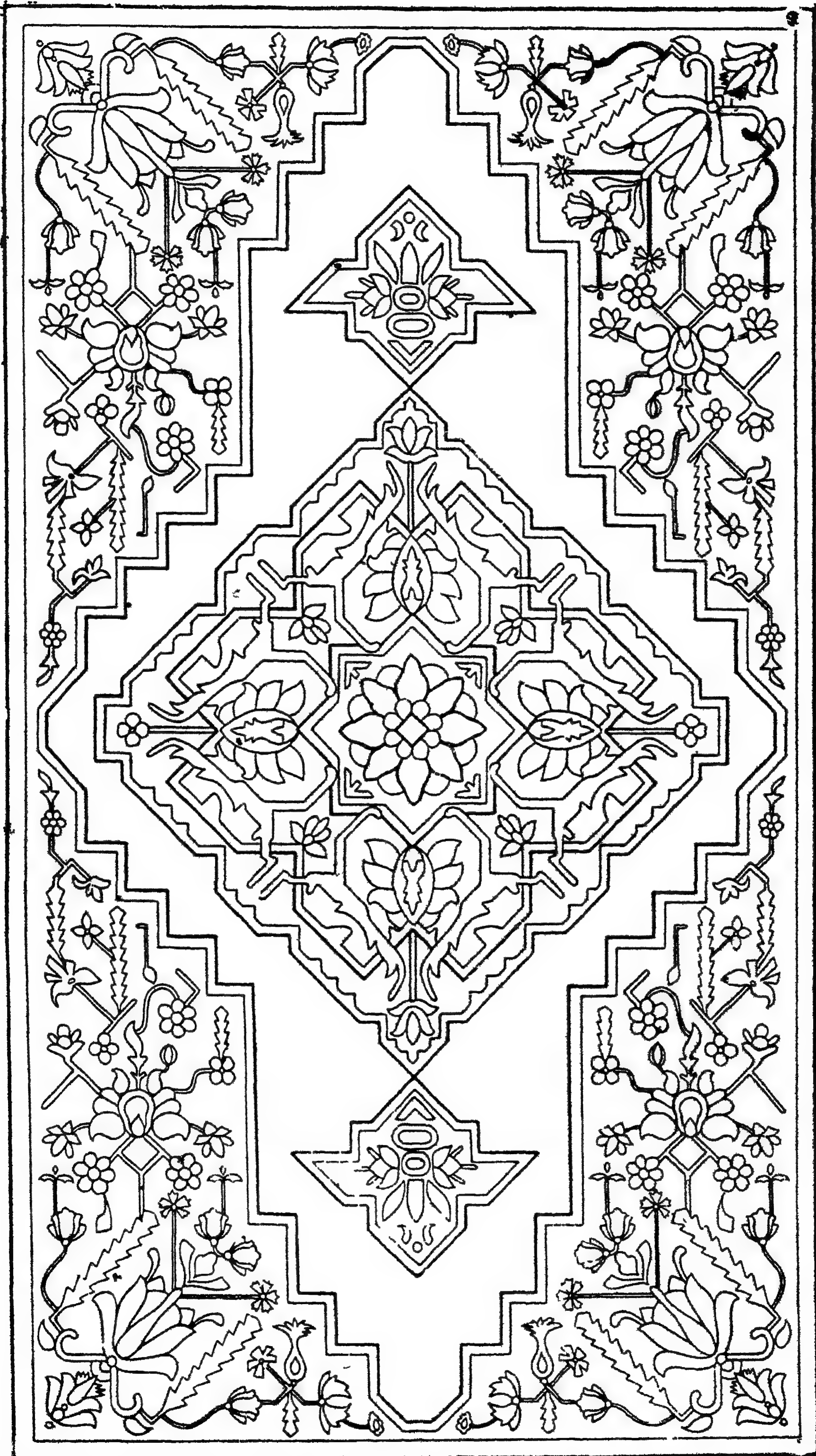
कालीन और जाजम पर के आकार

मुगल काल मे फर्श पर बिछाने के लिए अमीर कालीन काम मे लाते थे और गरीब जाजम। बनाने की सुविधा के विचार से दोनो फलक एक दूसरे से भिन्न थे। अतः कालीन पर अक्सर सीधी-सीधी रेखाओ से आकार बनाए जाते थे और जाजम पर फूल पत्तियो से। कालीन मे किनारे पर फूल पत्तियो और पशुओ के आकार कोई अपवाद नही थे किन्तु जाजम पर सीधी रेखाएँ अपवाद ही थी।

प्लेट नं० ८८



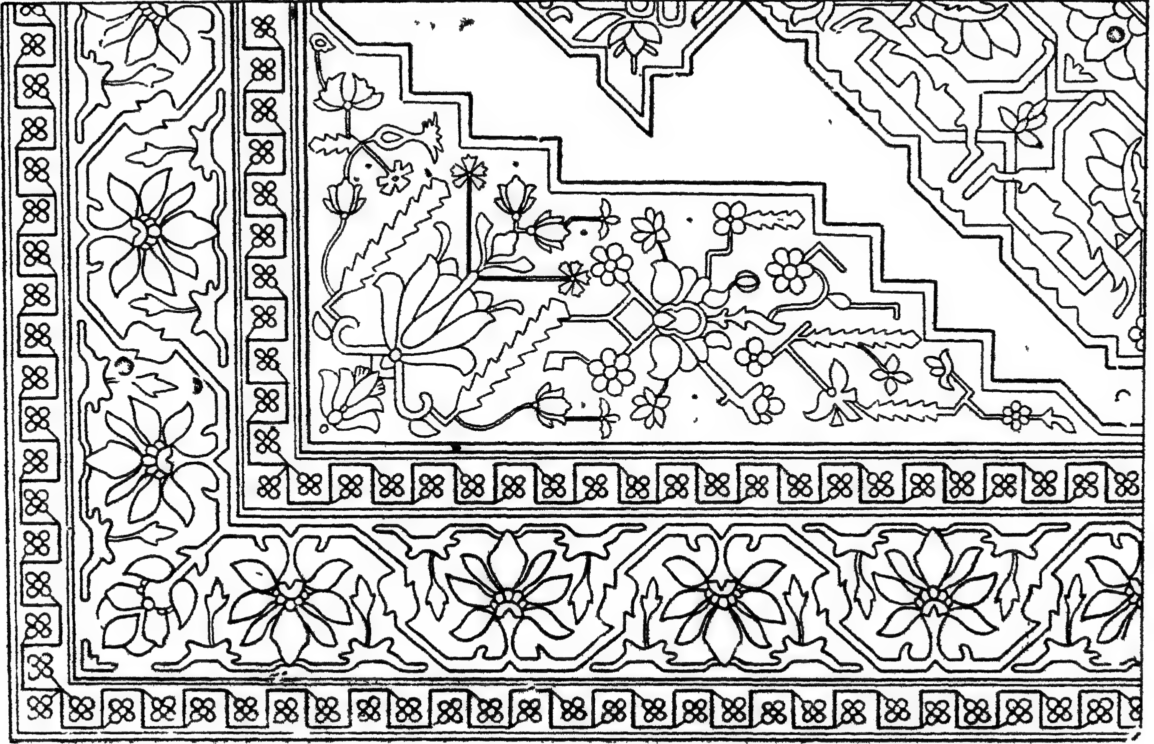
प्लेट नं० ८६



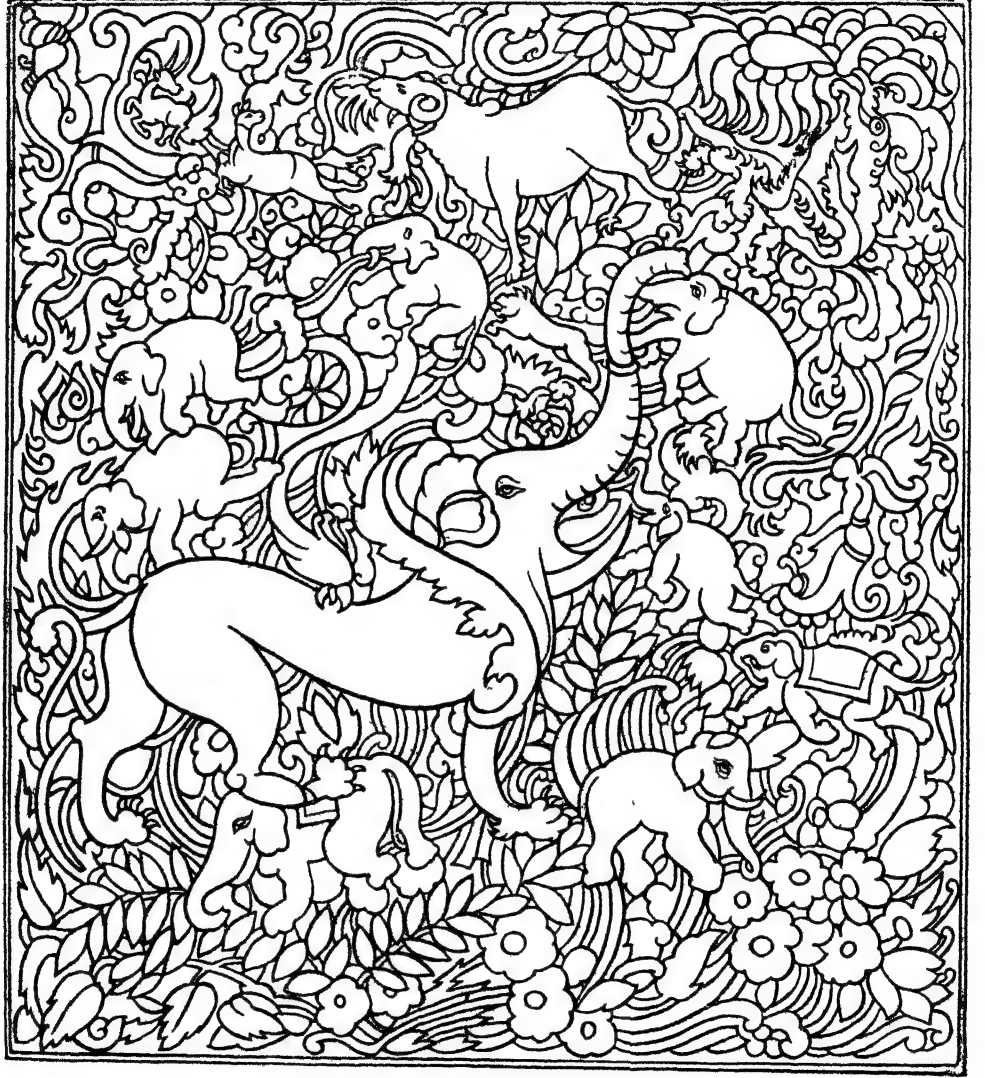
प्लेट नं० ६०



प्लेट नं० ६१



प्लेट नं० ६२





विविध आकार कल्पना

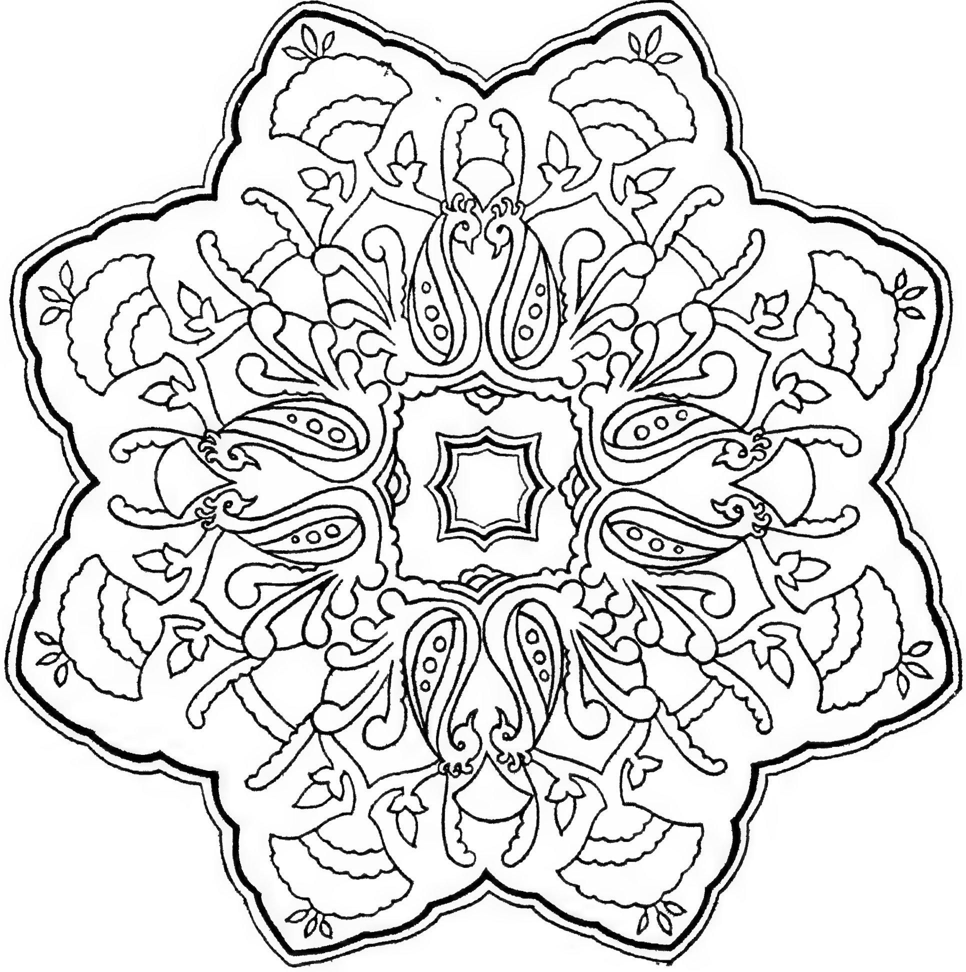
विविध

इस अन्तिम भाग में हमारा यह प्रयत्न रहा है कि कैसे एक दिए हुए स्थान (चाहे वह चौकोर को या षटकोण अथवा अनिश्चित सीमाओं वाला) को सुन्दरता से भरा जा सकता है। यह विद्यार्थी का अभ्यास और अनुभव ही बताएगा कि एक आकार के सन्तुलन के लिए कैसे दूसरे छोटे-छोटे रूपों को रखा जाता है। अध्ययन की सुविधा के लिए कुछ नमूने दे दिए गए हैं।

प्लेट नं० ६३



प्लेट नं० ६४



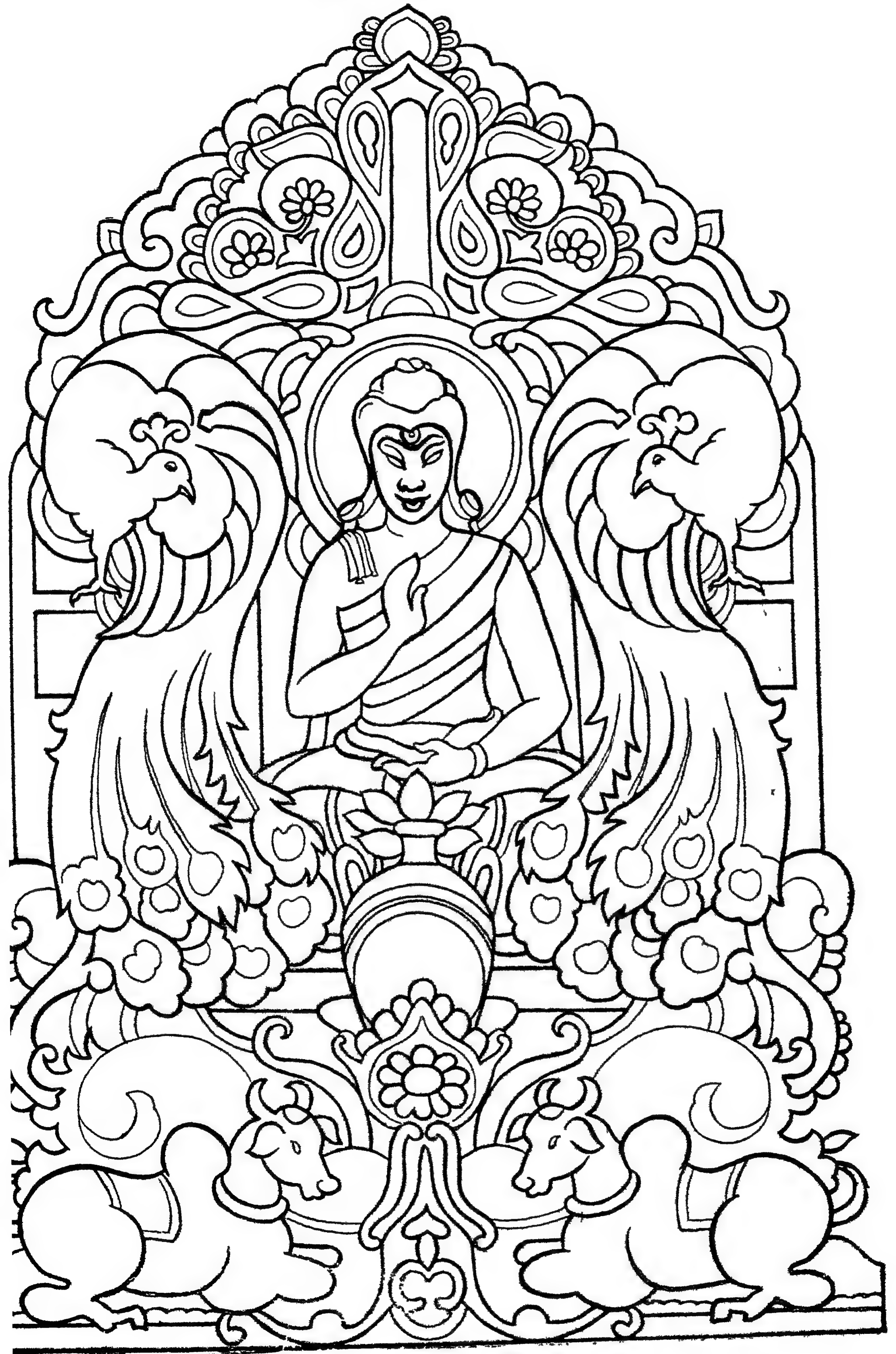
प्लेट नं० ६५



प्लेट नं० ९६



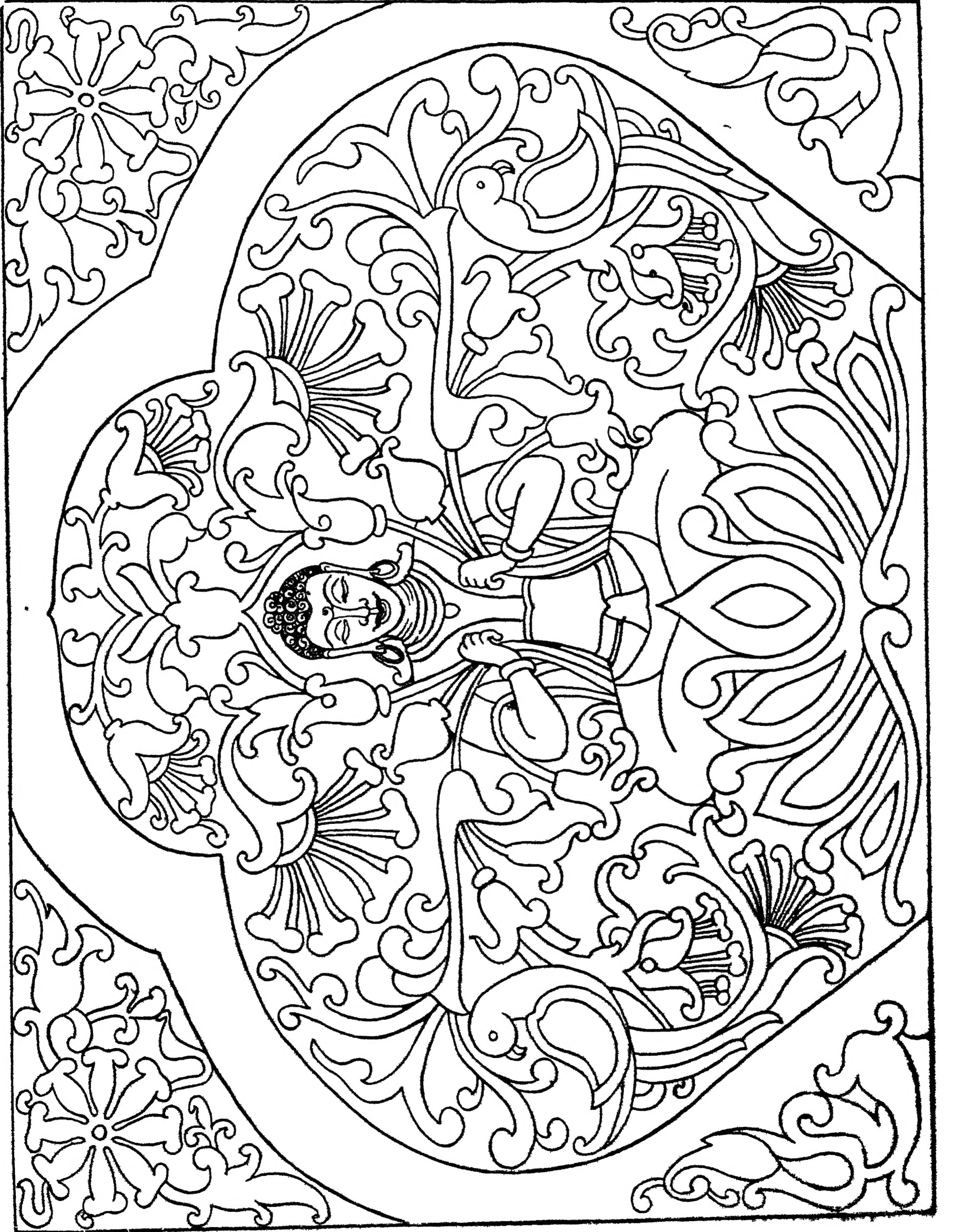
प्लेट नं० ६७



प्लेट नं० ६८



प्लेट नं० ९९



प्लेट नं० १००

